द्विभाषिया प्रविधि

(Bilingual Method)

शैलेश कुमार

द्विभाषिया प्रविधि

द्विभाषिया प्रविधि
(Bilingual Method)

शैलेश कुमार

भाषा प्रकाशन
नई दिल्ली - 110002

© प्रकाशक

I.S.B.N. : 978-81-323-5647-9

प्रथम संस्करण : 2021

भाषा प्रकाशन

22, प्रकाशदीप बिल्डिंग, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली - 110002

द्वारा वर्ल्ड टेक्नोलॉजीज नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित

प्रस्तावना

दुभाषिए का कर्तव्य बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। उसे यह कार्य बड़ी ही सौहार्द्रपूर्ण भाषा में करना होता है, अपनी वाणी को बहुत मधुर रखना होता है तथा उसके शब्द का प्रयोग किसी हानिकार या दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम का कारक न बने, इसका ध्यान रखना जरूरी होता है। दो अनजानी भाषाओं को बोलने वाले ऐसे व्यक्तियों के बीच कभी कोई बात हास-परिहास की भी होती है, कभी अत्यन्त गम्भीर भी, तो कभी दोनों अपने मन्तव्य को सिद्ध करने तथा वार्ता द्वारा अपने-अपने अनुकूल परिणाम प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

ऐसी स्थिति में दुभाषिया कर्म के साथ-साथ दोनों की बातों को परिस्थिति के अनुकूल अभिव्यंजना देना बहुत कुछ उसकी व्यावसायिक बुद्धि कौशल की भी अपेक्षा रखता है। इस दशा में वह एक तरह से ऐसे माध्यम का कार्य करता है, जो दौत्य कार्य समान होता है। जहाँ वार्ता किसी परिणाम-अपेक्षित हो, वहाँ परिणामों की अनुकूलता के लिए उसे स्वयं भी बहुत कुछ प्रयत्न या बुद्धिमत्ता का प्रयोग करना होता है। अतः व्यावहारिक चतुराई, बुद्धिमत्ता या कौशल भी एक दुभाषिए हेतु काफी महत्त्वपूर्ण होता है, जो दोनों भाषाओं के मर्म और व्यंजना के साथ-साथ भाषायी स्वदेशिक प्रकृति से निकटता होने पर ही अपना चमत्कार दिखा सकती है।

विद्वानों का मानना है कि अनुवाद कार्य में भी शब्दों तथा वाक्य रचना का वही महत्त्व है, जो साहित्य सृजन में होता है। इसलिए प्रायः देखा जाता है कि

एक ही स्रोत कथ्य का अनुवाद जब दो अनुवादकों द्वारा किया जाता है तो शब्द का चयन तथा वाक्य-रचना में भी अन्तर पाया जाता है। ऐसे विभिन्न अनुवादों में स्रोत कथन की अभिव्यंजना की परीक्षा करना जरूरी हो जाता है। इसलिए उसका मूल्यांकन आवश्यक होता है।

अनुवाद कार्य को करने वाले बहुत से ऐसे अनुवादक होते हैं, जिन्हें स्रोत-भाषा का मौलिक जानकारी नहीं होती है, वह मूल-भाषा से अपने अनुवाद कार्य का उद्‌गम नहीं करते, वह किसी ऐसे अनुवाद का अनुसरण करते हैं, जो किसी ने मूल-भाषा से ऐसी भाषा में किया हो, जिसका ज्ञान उनको होता है। अतः यह स्वाभाविक है कि ऐसे अनुवाद कार्य मूल-भाषा की प्रकृति का अनुसरण नहीं करते। वह उस भाषा की प्रकृति का अनुसरण करते हैं, जिससे यह अनुवाद किये गये होते हैं। निश्चित रूप से इस प्रकार का अनुवाद में त्रुटि भरी हुयी होती है। इसलिए भी अनुवाद कार्यों का पुनरीक्षण आवश्यक होता है।

पुस्तक लेखन में कई लिखित व अलिखित स्रोतों से मदद ली गई है; मैं उन सभी विज्ञ लेखकों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ। आशा करता हूँ कि पुस्तक पाठकों के लिए उपयोगी होगी।

–लेखक

अनुक्रम

	प्रस्तावना	*v*
1.	**विषय बोध**	**1**
	अनुवाद पुनरीक्षण एवं मूल्यांकन	3
	एक अच्छे दुभाषिए के गुण	5
	अनुवाद कार्य में पुर्निरीक्षण और मूल्यांकन	6
	अनुवाद सिद्धान्त का विकास	11
	अनुवाद की पाठ-प्रकृतिपरक सीमाएँ	19
	अनुवादक के गुण	20
2.	**अनुवाद की प्रकृति एवं प्रकार**	**27**
	अनुवाद की प्रकृति	28
	अनुवाद का वैज्ञानिक पक्ष	29
	अनुवाद के प्रकार	32
3.	**अनुवाद की प्रक्रिया तथा प्रविधि**	**42**
	अनुवाद की प्रक्रिया	42
	अनुवाद की इकाई	43
	पाठ की संरचना	43
	पाठगत आयाम	44

पाठसहवर्ती आयाम 44
पाठपरक आयाम 45
विभिन्न प्रारूप 45
सामान्य सन्दर्भ 45
अनुवाद प्रक्रिया के प्राविधिक मूल तत्त्व 46
अनुवाद प्रक्रिया के मार्ग-निर्देशक सूत्र 54
4. द्विभाषिया प्रविधि : विस्तृत फलक 58
अनुवाद के क्षेत्र 59
राष्ट्रीय एकता में अनुवाद का महत्त्व 61
सामाजिक संस्कृति के विकास में अनुवाद 63
भारतीय साहित्य के अध्ययन-अध्यापन में अनुवाद 64
अंतर्राष्ट्रीय साहित्य के अध्ययन-अध्यापन में अनुवाद 65
तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन में अनुवाद 67
व्यवसाय के रूप में अनुवाद 68
ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में अनुवाद 70
औद्योगिक विकास में अनुवाद 71
बहुभाषी शिक्षा प्रणाली में अनुवाद 72
जनसंचार-माध्यमों में अनुवाद 74
5. हिन्दी प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका 76
हिन्दी प्रयोजनीयता का प्रगतिशील स्वरूप 84
6. कार्यालयीन हिन्दी-अनुवाद 89
कार्यालयीन हिन्दी का आशय 89
कार्यालयीन हिन्दी या आलेखन की विशेषताएँ 90
मुसलमानों और अंग्रेजों के राज्य में प्रशासन की भाषा 92
कार्यालयी हिंदी का प्रयोग क्षेत्र 94
कार्यालयी हिन्दी अनुवाद की समस्या 95
7. जनसंचार माध्यमों का अनुवाद 98
जनसंचार माध्यम का आशय 98
जनसंचार माध्यमों के विविध प्रकार 100
जनसंचार माध्यमों में अनुवाद की प्रयोजनीयता 103
विभिन्न जनसंचार माध्यमों में अनुवाद कार्य 104

शैक्षिक और शोधकर्ता जरनल 106
टेलीविजन 110
8. विज्ञापन में अनुवाद 117
अर्थ एवं परिभाषा 121
सूचनाप्रद विज्ञापन 122
माध्यम के अनुसार वर्गीकरण 124
9. वैचारिक साहित्य का अनुवाद 126
वैचारिक साहित्य की अनुवाद पद्धति 132
10. वाणिज्यिक अनुवाद 133
आधुनिक काल में व्यवसाय और व्यापार की प्रधानता 135
11. वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्रों में अनुवाद 136
वैज्ञानिक क्षेत्र में अनुवाद 136
प्रौद्योगिकी क्षेत्रों में अनुवाद 143
वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुवाद के स्वीकृत सिद्धान्त 151
12. अनुवाद अभ्यास 154
अनुवाद के व्यावहारिक पक्ष 170
13. पत्रकारिता के क्षेत्र में द्विभाषिया प्रविधि 172
पत्रकारिता का अर्थ 172
पत्रकारिता की परिभाषा 174
पत्रकारिता और पत्रकार 178
पत्रकारिता और अनुवाद 180
पत्रकारिता में अनुवाद की समस्याएँ 181
भाषा की समस्या 181
शीर्षक-उपशीर्षकों आदि की समस्या 184

1

विषय बोध

दुभाषिया अर्थात् दो ऐसे व्यक्तियों के मध्य बातचीत जिनको एक-दूसरे की बातों की जानकारी नहीं होती है। दुभाषिया उन दोनों भाषाओं का जानकार होता है। वह प्रथम व्यक्ति की कही हुई बात को प्रथम व्यक्ति की भाषा में अनुदित करके उसे बताता है, फिर उसके प्रत्युत्तर को प्रथम व्यक्ति की भाषा में अनूदित करके उसे बताता है। कभी इस प्रकार की स्थिति उस आदिकाल में भी देखने को मिलती है। जब लेखन कार्य का भी प्रचलन नहीं हुआ होगा। वर्तमान समय में ऐसा द्विभाषिक व्यवहार विभिन्न देशों के राजनयिकों के देखने को मिलता है। जिसकी सम्पन्नता द्विभाषिक या दुभाषिया प्रविधि द्वारा ही होता है। प्राय: बहुत से देशों के बीच भाषान्तर होने के कारण इस प्रविधि को अपनाया जाता है। ऐसे द्विभषी व्यक्ति जो इस प्रक्रिया में माध्यम बनते है, दुभाषिए की संज्ञा प्रदान की जाती है। इस शब्द के प्रयोग के साथ ही उनके कार्य का परिचय परम्परानुसार जुड़ा हुआ है।

एक तरह के द्विभाषिए लोग भी अनुवादक ही होते है, जिन्हें ऐसे दो व्यक्तियों के मध्य वार्ता-संबंध स्थापित करने का कार्य करना होता है, जो एक-दूसरे की जानकारी नहीं होती यह लोग इतने कुशल अनुवादक होते हैं कि एक की बात को तुरन्त दूसरी भाषा में अनुवाद करके उसे व्यक्त करते हैं। आधुनिक काल में प्राय: ऐसे अवसर दो-देशों के व्यक्तियों के बीच नित्य ही आते रहते हैं, अत: इस कार्य के लिऐ बहुत ही कुशल तथा सक्षम दुभाषिए

विद्वानों की आवश्यकता बनी रहती है। प्रतिदिन एक देश से दूसरे देश को राजनीतिक कार्यों के अतिरिक्त अन्य कार्यवश भी लोग आते-जाते रहते हैं। ऐसी अवस्था उत्पन्न होने पर जब किसी ऐसी भाषा को बोलने वाला कोई दूसरे देश का नेता, राजनयिक या सामाजिक कार्यकर्ता, दूसरे ऐसे देश के लोगों की सभा या सम्मेलन को सम्बोधित करता है, जिसके लोग उसकी भाषा नहीं जानते। तब उसके भाषण को दुभाषिए द्वारा ही व्यक्त किया जा ता होगा।

एक अन्य दशा होती है जब कोई विदेशी नेता या व्यक्ति दूसरे देश में जाकर वहाँ किसी कल कारखाने पर नजर रखता है, वहाँ के लोगों से मिलता है तो दुभाषिया उन लोगों का माध्यम बनकर उसकी भाषा का अनुवाद करता है एवं बातचीत का माध्यम बन जाता है अथवा कोई व्यक्ति शोधार्थी होकर अन्य कार्य से अन्य भाषा-भाषियों से वार्तालाप करना चाहता है, किन्तु दूसरी भाषा का ज्ञान न होने से वह असमर्थ होता है। उस दौरान दुभाषिया उनकी सहायता करता है एवं दोनों व्यक्तियों के वाक्य अथवा कथनों का अनुवाद बोलता हुआ, उनकी बातचीत को सम्पन्न करता है।

एक अच्छे अनुवादक एवं दुभाषिए में निम्नलिखित गुण होने चाहिए-

(1) चूँकि दुभाषिए के पास अधिक सोचने का समय नहीं होता इसलिए उसे प्रत्युपन्नमति का होना चाहिए, जिसमें अवसर के अनुकूल अनुवाद कर सके।

(2) एक दुभाषिए को बहुत अधिक चौकन्ना एवं सजग होना चाहिए अन्यथा अर्थ का अनर्थ हो सकता है।

(3) एक दुभाषिए को ज्ञान बहुत अधिक होना चाहिए ताकि वह कठिन मुहावरों इत्यादि को समझकर उनका अनुवाद करने की क्षमता हो।

(4) एक दुभाषिए को स्थिर-मति तथा दृढ़-विश्वासी होना चाहिए, जिसके फलस्वरूप वह विकट अवस्था प्राप्त कर सके।

(5) एक अच्छे अनुवादक को स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा दोनों की अच्छी जानकारी होनी चाहिए, उसे स्रोत-भाषा की प्रकृति और परिवेश तथा उनकी सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से पूर्णतः परिचित होना चाहिए।

(6) एक अच्छे अनुवादक की अभिव्यक्ति, सुबोध, प्रांजल, भावपूर्ण और प्रवाहमयी होनी आवश्यक है।

(7) उसमें स्रोत-भाषा में कथित अभिव्यक्ति को ज्यों-की-त्यों लक्ष्य-भाषा में प्रस्तुत करने की योग्यता, दक्षता एवं प्रतिभा विद्यमान होनी चाहिए। उसे मूल भावों की रक्षा करने में सक्षम होना चाहिए।

(8) अच्छे अनुवादक को यह प्रयत्न करना चाहिए कि मूल रचना की शैली सुरक्षित रहे। अनुवाद की भाषा अथवा लक्ष्य-भाषा यथासम्भव स्रोत-भाषा की प्रकृति के अनुरूप होनी चाहिए।

(9) उसे स्रोत-भाषा अथवा लक्ष्य-भाषा दोनों की संरचना की पूर्ण व्यावहारिक जानकारी होना चाहिए।

अत: हम पाते हैं कि दुभाषिए का कर्त्तव्य बहुत महत्त्वपूर्ण होता है। उसे यक कार्य बड़ी ही सौहार्द्रपूर्ण भाषा में करना होता है, अपनी वाणी को बहुत मधुर रखना होता है तथा उसके शब्द का प्रयोग किसी हानिकार या दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम का कारक न बने इसका ध्यान रखना जरूरी होता है। दो अनजानी भाषाओं को बोलने वाले ऐसे व्यक्तियों के बीच कभी कोई बात ह्रास-परिह्रास की भी होती है, कभी अत्यन्त गम्भीर भी, तो कभी दोनों अपने मन्तव्य को सिद्ध करने तथा उसके वार्ता द्वारा अपने-अपने अनुकूल परिणाम प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। ऐसी स्थिति में दुभाषिया कर्म के साथ-साथ दोनों की बातों को परिस्थिति के अनुकूल अभिव्यंजना देना बहुत कुछ उसकी व्यावसायिक बुद्धि कौशल की भी उससे अपेक्षा रखता है। इस दशा में वह एक तरह से ऐसे माध्यम का कार्य करता है, जो दौत्य कार्य समान होता है। जहाँ वार्ता किसी परिणाम-अपेक्षित हो वहाँ परिणामों की अनुकूलता के लिए उसे स्वयं भी बहुत कुछ प्रयत्न या बुद्धिमत्ता का प्रयोग करना होता है। अत: व्यावहारिक चतुराई, बुद्धिमत्ता या कौशल भी एक दुभाषिए हेतु काफी महत्त्वपूर्ण होता है। जो दोनों भाषाओं के मर्म और व्यंजना के साथ-साथ भाषायी स्वदेशिक प्रकृति से निकटता होने पर ही अपना चमत्कार दिखा सकती है।

अनुवाद पुनरीक्षण एवं मूल्यांकन

विद्वानों का मानना है कि अनुवाद कार्य में भी शब्दों तथा वाक्य रचना का वही महत्त्व है, जो साहित्य सृजन में होता है। इसलिए प्राय: देखा जाता है कि एक ही स्रोत कथ्य का अनुवाद जब दो अनुवादकों द्वारा किया जाता है तो शब्द का चयन तथा वाक्य-रचना में भी अन्तर पाया जाता है। ऐसे विभिन्न अनुवादों में स्रोत कथन की अभिव्यंजना की परीक्षा करना जरूरी हो जाता है। इसलिए

उसका मूल्यांकन आवश्यक होता है। अनुवाद कार्य को करने वाले बहुत से ऐसे अनुवादक होते हैं, जिन्हें स्रोत-भाषा का मौलिक जानकारी नहीं होती है, वह मूल-भाषा से अपने अनुवाद कार्य का उद्‌गम नहीं करते, वह किसी ऐसे अनुवाद का अनुसरण करते हैं, जो किसी ने मूल-भाषा से ऐसी भाषा में किया हो, जिसका ज्ञान उनको होता है। अत: यह स्वाभाविक है कि ऐसे अनुवाद कार्य मूल-भाषा की प्रकृति का अनुसरण नहीं करते। वह उस भाषा की प्रकृति का अनुसरण करते हैं, जिससे यह अनुवाद किये गये होते हैं। निश्चित रूप से इस प्रकार का अनुवाद ये त्रुटि भरी हुयी होती है। इसलिए भी अनुवाद कार्यो का पुनरीक्षण आवश्यक होता है।

स्पष्ट है कि स्रोत-भाषा की प्रकृति, रचना-शैली, भाव-व्यंजना को अनुवादक कितना लक्ष्य-भाषा में ला सकता है, इसी बात की परीक्षा करना उसका मूल्यांकन करना कहा जाता है तथा इसी को पुनरीक्षण की संज्ञा प्रदान की जाती है।

प्राय: यह देखने को मिलता है कि किसी भाषा की बहुचर्चित प्रतियों के अनुवाद को ही प्रथम प्रश्रय प्राप्त होता है। ऐसी कृतियाँ कालजयी भी होती हैं तथा अन्य भाषाओं के लिए महत्त्वपूर्ण भी। यह कृतियाँ सार्वदेशिक रुचि की होती है। अपनी रचना-शैली, भाव-व्यंजना और सूक्ष्म मानव व्यवहार का चित्रण करने वाली होती है। ऐसी कृतियों का अनुवाद यदि किसी सक्षम अनुवाद द्वारा नहीं कराने पर तो उन कृतियों की साहित्यिक महत्ता को ग्रहण लग जाता है। इसलिए इनका ऐसे विद्वानों द्वारा मूल्यांकन और परीक्षण किया जाना काफी आवश्यक होता है, जो स्रोत तथा लक्ष्य दोनों भाषाओं में गहरी पैठ रखते हों। यों तो आजकल प्राय: दूसरी भाषाओं के 'बैस्ट सैलर' साहित्य के अनुवाद का प्रचलन बहुत बढ़ गया है, जिनका मूल्यांकन और परीक्षण प्राय: नहीं होता और वह बाजार में इसलिए अनुवादित रूप देखने को मिलता है, क्योंकि वह 'बैस्ट सैलनर' के रूप में स्रोत-भाषा में जाने जाते है। इन कृतियों का भी सामान्यत: मूल्यांकन और परीक्षण होना चाहिए, परन्तु प्राय: ऐसा सम्भव नहीं हो पाता, विशेष रूप से प्रकाशकों के व्यावसायिक दृष्टिकोण के कारण, परन्तु बहुत से विज्ञ पाठक ऐसे भी होते है। जिनमें भौतिक रचना को पढ़ने की क्षमता होती है तथा अनूदित रचना को भी। वह स्वयं उन दोनों के गुण दोषों की परीक्षा कर लेते हैं।

नियत तो यह होना चाहिए कि यदि अनुवाद कर्म में ऐसे दोष परिलक्षित हो जायें तो प्रकाशक उनका निराकरण पुस्तक के द्वितीय संस्करण में कर देना

चाहिए। अनुवाद को भी अपनी संस्तुष्टि के लिए ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि वह अपनी रचना को विद्वानों को दिखावे। उनकी उसके संबंध में क्या राय है, उसकी जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। समीक्षा के लिए प्राप्त ऐसी कृतियों का मूल्यांकन समाचार-पत्र भी करते हैं, परन्तु ऐसी कृतियाँ कम ही होती हैं, जो चर्चा का विषय बनती हों।

एक अच्छे दुभाषिए के गुण

एक अच्छे दुभाषिए में निम्नलिखित गुण विद्यमान होने चाहिए-

(1) एक दुभाषिए को बहुत अधिक चौकन्ना एवं सजग होना चाहिए अन्यथा अर्थ का अनर्थ हो सकता है।

(2) एक दुभाषिए को ज्ञान बहुत अधिक होना चाहिए ताकि वह कठिन मुहावरों इत्यादि को समझकर उनका अनुवाद कर सके।

(3) एक दुभाषिए को स्थिर-मति तथा दृढ़-विश्वासी होना चाहिए ताकि वह विकट अवस्था प्राप्त कर सके।

(4) एक अच्छे अनुवादक को स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा दोनों की अच्छी जानकारी होनी चाहिए। उसे स्रोत-भाषा की प्रकृति और परिवेश तथा उनकी सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक पृष्ठभूमि से पूर्णतः परिचित होना चाहिए।

(5) एक अच्छे अनुवादक की अभिव्यक्ति, सुबोध, प्रांजल, भावपूर्ण तथा प्रवाहमयी होनी आवश्यक है।

(6) उसमें स्रोत-भाषा में कथित अभिव्यक्ति को ज्यों-की-त्यों लक्ष्य-भाषा में प्रस्तुत करने की योग्यता, दक्षता एवं प्रतिभा होनी चाहिए। उसे मूल भावों की रक्षा करने के गुण होने चाहिए।

(7) अच्छे अनुवादक को यह प्रयत्न करना चाहिए कि मूल रचना की शैली सुरक्षित रहे। अनुवाद की भाषा या लक्ष्य-भाषा यथासम्भव स्रोत-भाषा की प्रकृति के अनुरूप पायी जानी चाहिए।

(8) उसे स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा दोनों की संरचना का पूर्ण व्यावहारिक जानकारी होना चाहिए।

(9) चूँकि दुभाषिए के पास अधिक सोचने का समय नहीं होता इसलिए उसे प्रत्युपन्नमति का होना चाहिए जो अवसर के अनुकूल अनुवाद कर सके।

अनुवाद कार्य में पुर्निरीक्षण और मूल्यांकन

विद्वानों का मानना है कि अनुवाद कार्य में भी शब्दों तथा वाक्य रचना का वही महत्त्व है, जो साहित्य सृजन में होता है। इस प्रकार ऐसा माना जाता है कि एक ही स्रोत कथ्य का अनुवाद जब दो अनुवादकों द्वारा किया जाता है तो शब्द चयन और वाक्य-रचना में भी भेद देखने को मिलता है। ऐसे विभिन्न अनुवादों में स्रोत कथन की अभिव्यंजना की परीक्षा करना आवश्यक होता है। इसलिए उसका मूल्यांकन आवश्यक होता है। अनुवाद कार्य को करने वाले बहुत से ऐसे अनुवादक होते हैं, जिन्हें स्रोत-भाषा की मौलिक जानकारी नहीं होती है, वह मूल-भाषा से अपनु अनुवाद कार्य का उद्‌गम नहीं करते, वह किसी ऐसे अनुवाद का अनुसरण करते हैं, जो किसी ने मूल-भाषा से ऐसी भाषा में किया हो, जिससे वे अनभिज्ञ नहीं हैं। अत: यह स्वाभाविक है कि ऐसे अनुवाद कार्य मूल-भाषा की प्रकृति का अनुसरण नहीं करते। वह उस भाषा की प्रकृति का अनुसारण करते हैं, जिससे उनका अनुवाद किया जाता है। निश्चित रूप से इस प्रकार का अनुवाद कार्य सटीक नहीं होता। इसलिए भी अनुवाद कार्यों का पुनिरीक्षण जरूरी होता है।

अनुवाद का अर्थ

अनुवाद एक भाषिक क्रिया है। भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश में अनुवाद का महत्त्व प्राचीन काल से ही स्वीकृत है। आधुनिक युग में जैसे-जैसे स्थान और समय की दूरियाँ कम होती गईं वैसे-वैसे द्विभाषिकता की स्थितियों और मात्र में वृद्धि होती गई और इसके साथ-साथ अनुवाद का महत्त्व भी बढ़ता गया। अन्यान्य भाषा-शिक्षण में अनुवाद विधि का प्रयोग न केवल पश्चिमी देशों में वरन् पूर्वी देशों में भी निरन्तर किया जाता रहा है। बीसवीं शताब्दी में देशों के बीच दूरियाँ कम होने के परिणामस्वरूप विभिन्न वैचारिक धरातलों और आर्थिक, औद्योगिक स्तरों पर पारस्परिक भाषिक विनिमय बढ़ा है और इस विनिमय के साथ-साथ अनुवाद का प्रयोग और अधिक किया जाने लगा है। बहरहाल, अनुवाद की प्रक्रिया, प्रकृति एवं पद्धति को समझने के लिए 'अनुवाद क्या है ?' जानना बहुत जरूरी है। चर्चा की शुरुआत 'अनुवाद' के अर्थ एवं परिभाषा' से करते हैं।

'अनुवाद' का अर्थ- अंग्रेजी में एक कथन है : 'Terms are to be identified before we enter into the argument' इसलिए अनुवाद की चर्चा

करने से पहले 'अनुवाद' शब्द में निहित अर्थ और मूल अवधारणा से परिचित होना आवश्यक है। 'अनुवाद' शब्द संस्कृत का यौगिक शब्द है, जो 'अनु' उपसर्ग तथा 'वाद' के संयोग से बना है। संस्कृत के 'वद्' धातु में 'घ' प्रत्यय जोड़ देने पर भाववाचक संज्ञा में इसका परिवर्तित रूप है 'वाद'। 'वद्' धातु का अर्थ है 'बोलना या कहना' और 'वाद' का अर्थ हुआ 'कहने की क्रिया' या' कही हुई बात'। 'अनु' उपसर्ग अनुवर्तिता के अर्थ में व्यवहृत होता है। 'वाद' में यह 'अनु' उपसर्ग् जुड़कर बनने वाला शब्द 'अनुवाद' का अर्थ हुआ–'प्राप्त कथन को पुनः कहना'। यहाँ ध्यान देने की बात यह है कि 'पुनः कथन' में अर्थ की पुनरावृत्ति होती है, शब्दों की नहीं। हिन्दी में अनुवाद के स्थान पर प्रयुक्त होने वाले अन्य शब्द हैं : छाया, टीका, उल्था, भाषान्तर आदि। अन्य भारतीय भाषाओं में 'अनुवाद' के समानान्तर प्रयोग होने वाले शब्द हैं रूभाषान्तर(संस्कृत, कन्नड़, मराठी), तर्जुमा (कश्मीरी, सिंधी, उर्दू), विवर्तन, तर्ज्जुमा(मलयालम), मोषिये चर्ण्यु (तमिल),अनुवादम (तेलुगु), अनुवाद (संस्कृत, हिन्दी, असमिया, बांग्ला, कन्नड़, उोड़िआ, गुजराती, पंजाबी, सिंधी)।

प्राचीन गुरु–शिष्य परम्परा के समय से 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग विभिन्न अर्थों में भारतीय वाड़मय में होता आ रहा है। गुरुकुल शिक्षा पद्धति में गुरु द्वारा उच्चरित मंत्रों को शिष्यों द्वारा दोहराए जाने को 'अनुवचन' या' अनुवाक' कहा जाता था, जो 'अनुवाद' के ही पर्याय हैं। महान् वैयाकरण पाणिनी ने अपने 'अष्टाध्यायी' के एक सूत्र में अनुवाद शब्द का प्रयोग किया है : 'अनुवादे चरणानाम्'। 'अष्टाध्यायी' को 'सिद्धान्त कौमुदी' के रूप में प्रस्तुत करने वाले भट्टोजि दीक्षित ने पाणिनी के सूत्र में प्रयुक्त 'अनुवाद' शब्द का अर्थ 'अवगतार्थस्य प्रतिपादनम्' अर्थात् 'ज्ञात तथ्य की प्रस्तुति' किया है। 'वात्स्यायन भाष्य' में 'प्रयोजनवान् पुनः कथन' अर्थात् पहले कही गई बात को उद्देश्यपूर्ण ढंग से पुनः कहना ही अनुवाद माना गया है। इस प्रकार भर्तृहरि ने भी अनुवाद शब्द का प्रयोग दुहराने या पुनर्कथन के अर्थ में किया है –'आवृत्ति रनुवादो वा'। 'शब्दार्थ चिन्तामणि' में अनुवाद शब्द की दो व्युत्पत्तियाँ दी गई हैं –'प्राप्तस्य पुनः कथनम्' व 'ज्ञातार्थस्य प्रतिपादनम्'। प्रथम व्युत्पत्ति के अनुसार 'पहले कहे गये अर्थ ग्रहण कर उसको पुनः कहना अनुवाद है' और द्वितीय व्युत्पत्ति के अनुसार 'किसी के द्वारा कहे गये को भली–भाँति समझ कर उसका विन्यास करना अनुवाद है। दोनों व्युत्पत्तियों को मिलाकर अगर कहा जाए 'ज्ञातार्थस्य पुनः कथनम्', तो स्थिति अधिक स्पष्ट हो जाती है। इस परिभाषा के अनुसार किसी

के कथन के अर्थ को भली-भाँति समझ लेने के उपरान्त उसे फिर से प्रस्तुत करने का नाम अनुवाद है।

संस्कृत में 'अनुवाद' शब्द का प्रयोग बहुत प्राचीन होते हुए भी हिन्दी में इसका प्रयोग बहुत बाद में हुआ। हिन्दी में आज अनुवाद शब्द का अर्थ उपर्युक्त अर्थों से भिन्न होकर केवल मूल-भाषा के अवतरण में निहित अर्थया सन्देश की रक्षा करते हुए दूसरी भाषा में प्रतिस्थापन तक सीमित हो गया है। अंग्रेजी विद्वान मोनियर विलियम्स ने सर्वप्रथम अंग्रेजी में 'translation' शब्द का प्रयोग किया था। 'अनुवाद' के पर्याय के रूप में स्वीकृत अंग्रेजी 'translation' शब्द, संस्कृत के 'अनुवाद' शब्द की भाँति, लैटिन के 'trans' तथा 'lation' के संयोग से बना है, जिसका अर्थ है 'पार ले जाना'-यानी एकस्थान बिन्दु से दूसरे स्थान बिन्दु पर ले जाना। यहाँ एक स्थान बिन्दु 'स्रोत-भाषा' या Source Language' है तो दूसरा स्थान बिन्दु 'लक्ष्य-भाषा' या 'Target Language' है और ले जाने वाली वस्तु 'मूल या स्रोत-भाषा में निहित अर्थ या संदेश होती है। 'ऑक्सफोर्ड डिक्शनरी' में 'Translation' का अर्थ दिया गया है-'' written or spoken rendering of the meaning of a word, speech, book, etc- in an another language.' ऐसे ही 'वैब्स्टरडिक्शनरी' का कहना है-'Translation is a rendering from one language or representational system into another- Translation is an art that involves the recreation of work in another language] for readers with different background।'

बहरहाल, अनुवाद का मूल अर्थ होता है-पूर्व में कथित बात को दोहराना, पुनरुक्ति या अनुवचन जो बाद में पूर्वोक्त निर्देश की व्याख्या, टीका-टिप्पणी करने के लिए प्रयुक्त हुआ, परंतु आज 'अनुवाद' शब्द काअर्थ विस्तार होकर एक भाषा-पाठ (स्रोत-भाषा) के निहितार्थ, संदेशों, उसके सामाजिक-सांस्कृतिक तत्त्वों को यथावत् दूसरी भाषा (लक्ष्य-भाषा) में अंतरण करने का पर्याय बन चुका है। चूँकि दो भिन्न-भिन्न भाषाओं की अलग-अलग प्रकृति, संरचना, संस्कृति, समाज, रीति-रिवाज, रहन-सहन, वेशभूषा होती हैं, अतः एक भाषा में कही गई बात को दूसरी भाषा में यथावत् रूपांतरित करते समय समतुल्य अभिव्यक्ति खोजने में कभी-कभी बहुत कठिनाई होती है। इस कृष्टि से अनुवाद एक चुनौती भरा कार्य प्रतीत होता है, जिसके लिए न केवल लक्ष्य-भाषा और स्रोत-भाषा पर अधिकार होना जरूरी है, बल्कि अनुद्य सामग्री के विषय और संदर्भ का गहरा ज्ञान भी आवश्यक है। अतः अनुवाद दो भाषाओं के बीच एक

सांस्कृतिक सेतु जैसा ही है, जिस पर चलकर दो भिन्न भाषाओं के मध्य स्थित समय तथा दूरी के अंतराल को पार कर भावात्मकएकता स्थापित की जा सकती है। अनुवाद के इस दोहरी क्रिया को निम्नलिखित आरेख से आसानी से समझा जा सकता है –

अनुवाद की परिभाषा

साधारणत: अनुवाद कर्म में हम एक भाषा में व्यक्त विचारों को दूसरी भाषा में व्यक्त करते हैं। अनुवाद कर्म के मर्मज्ञ विभिन्न मनीषियों द्वारा प्रतिपादित अलग-अलग शब्दों में परिभाषित किए हैं। अनुवाद के पूर्ण स्वरूप को समझने के लिए यहाँ कुछ महत्त्वपूर्ण परिभाषाओं का उल्लेख किया जा रहा है:-

पाश्चात्य चिन्तन

नाइडा –'अनुवाद का तात्पर्य है स्रोत-भाषा में व्यक्त सन्देश के लिए लक्ष्य-भाषा में निकटतम सहज समतुल्य सन्देश को प्रस्तुत करना। यह समतुल्यता पहले तो अर्थ के स्तर पर होती है फिर शैली के स्तर पर।'

जॉन कनिंगटन –'लेखक ने जो कुछ कहा है, अनुवादक को उसके अनुवाद का प्रयत्न तो करना ही है, जिस ढंग से कहा, उसके निर्वाह का भी प्रयत्न करना चाहिए।'

कैटफोड –'एक भाषा की पाठ्य सामग्री को दूसरी भाषा की समानार्थक पाठ्य सामग्री से प्रतिस्थापना ही अनुवाद है।' 1.मूल-भाषा (भाषा)2. मूल भाषा का अर्थ (संदेश)3. मूल भाषा की संरचना (प्रकृति)

सैमुएल जॉनसन –'मूल भाषा की पाठ्य सामग्री के भावों की रक्षा करते हुए उसे दूसरी भाषा में बदल देना अनुवाद है।'

फॉरेस्टन –'एक भाषा की पाठ्य सामग्री के तत्त्वों को दूसरी भाषा में स्थानान्तरित कर देना अनुवाद कहलाता है। यह ध्यातव्य है कि हम तत्त्व या कथ्य को संरचना (रूप) से हमेशा अलग नहीं कर सकते हैं।'

हैलिडे –'अनुवाद एक सम्बंध है, जो दो या दो से अधिक पाठों के बीच होताहै, ये पाठ समान स्थिति में समान प्रकार्य सम्पादित करते हैं।'

न्यूमार्क –'अनुवाद एक शिल्प है, जिसमें एक भाषा में व्यक्त सन्देश के स्थानपर दूसरी भाषा के उसी सन्देश को प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाता है।'

इस प्रकार नाइडा ने अनुवाद में अर्थ पक्ष तथा शैली पक्ष, दोनों को महत्त्व देने के साथ-साथ दोनों की समतुल्यता पर भी बल दिया है। जहाँ नाइडा ने अनुवाद में मूल-पाठ के शिल्प की तुलना में अर्थ पक्ष के अनुवाद को अधिक महत्त्व दिया है, वहीं कैटफोड अर्थ की तुलना में शिल्प संबंधि तत्त्वों को अधिक महत्त्व देते हैं। सैमुएल जॉनसन ने अनुवाद में भावों की रक्षा की बात कही है, तो न्यूमार्क ने अनुवाद कर्म को शिल्प मानते हुए निहित सन्देश को प्रतिस्थापित करने की बात कही है। कैटफोड ने अनुवाद को पाठ सामग्री के प्रतिस्थापन के रूप में परिभाषित किया है। उनके अनुसार यह प्रतिस्थापन भाषा के विभिन्न स्तरों (स्वन, स्वनिम, लेखिम), भाषा की वर्ण संबंधी इकाइयों (लिपि, वर्णमाला आदि), शब्द तथा संरचना के सभी स्तरों पर होना चाहिए। नाइडा, कैटफोड, न्यूमार्क तथा सैमुएल जॉनसन की उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट हो जाता है कि अनुवाद एक भाषा पाठ में व्यक्त (निहित) सन्देश को दूसरी भाषा पाठ में प्रस्तुत करने की प्रक्रिया का परिणाम है। हैलिडे अनुवाद को प्रक्रिया या उसके परिणाम के रूप में न देखकर उसे दो भाषा-पाठों के बीच ऐसे संबंध के रूप में परिभाषित करते हैं,जो दो भाषाओं के पाठों के मध्य होता है।

भारतीय चिन्तन

देवेन्द्रनाथ शर्मा – 'विचारों को एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपान्तरित करना अनुवाद है।'

भोलानाथ – 'किसी भाषा में प्राप्त सामग्री को दूसरी भाषा में भाषान्तरण करना अनुवाद है, दूसरे शब्दों में एक भाषा में व्यक्त विचारों को यथा सम्भव और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दूसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास ही अनुवाद है।'

पट्टनायक– 'अनुवाद वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा सार्थक अनुभव (अर्थपूर्ण सन्देशया सन्देश का अर्थ) को एक भाषा-समुदाय से दूसरी भाषा-समुदाय में सम्प्रेषित किया जाता है।'

विनोद गोदरे – 'अनुवाद, स्रोत-भाषा में अभिव्यक्त विचार अथवा व्यक्त अथवा रचना अथवा सूचना साहित्य को यथासम्भव मूल भावना के समानान्तर बोध एवं संप्रेषण के धरातल पर लक्ष्य-भाषा में अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया है।'

रीतारानी पालीवाल– 'स्रोत-भाषा में व्यक्त प्रतीक व्यवस्था को लक्ष्य-भाषा की सहज प्रतीक व्यवस्था में रूपान्तरित करने का कार्य अनुवाद है।'

दंगल झाल्टे – 'स्रोत-भाषा के मूल पाठ के अर्थ को लक्ष्य-भाषा के परिनिष्ठित पाठके रूप में रूपान्तरण करना अनुवाद है।'

बालेन्दु शेखर – अनुवाद एक भाषा समुदाय के विचार और अनुभव सामग्री को दूसरी भाषा समुदाय की शब्दावली में लगभग यथावत् सम्प्रेषित करने की सोद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है।'

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि अनुवाद की परिकल्पना मेंस्रोत-भाषा की सामग्री लक्ष्य-भाषा में उसी रूप में, सम्पूर्णता में प्रकट होती है। सामग्री के साथ प्रस्तुति के ढंग में भी समानता हो। मूल-भाषा से लक्ष्य-भाषा में रूपान्तरित करने में स्वाभाविकता का निर्वाह अनिवार्यत: हो। और लक्ष्य-भाषा में व्यक्त विचारों में ऐसी सहजता हो कि वह मूल-भाषा पर आधारित न होकर स्वयं मूल-भाषा होने का एहसास पैदा करे। हम यह भी लक्ष्य करते हैं कि लगभग सभी परिभाषाओं में अनुवाद-प्रक्रिया को शामिल किया गया है। इन सभी परिभाषाओं के आधार पर 'अनुवाद' को परिभाषित किया जा सकता है-'अनुवाद, मूल-भाषा या स्रोत-भाषा में निहित अर्थ (या सन्देश) व शैली को यथा सम्भव सहज समतुल्य रूप में लक्ष्य-भाषा की प्रकृति व शैली के अनुसार परिवर्तित करने की सोद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है।'

अनुवाद सिद्धान्त का विकास

अनुवाद सिद्धान्त के वर्तमान स्वरूप को देखते हुए इसके विकास कों विहंग-दृश्य से दो चरणों में विभक्त करके देखा जाता है –

(1) आधुनिक भाषा विज्ञान, विशेष रूप से अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान, के विकास से पूर्व का युग-बीसवीं सदी पूर्वार्द्ध,

(2) इसके पश्चात् का युग-बीसवीं सदी उत्तरार्द्ध।

सामान्य रूप से कहा जाता है कि, सिद्धान्त विकास के विभिन्न युगों में और उसी विभिन्न धाराओं में विवाद का विषय यह रहा कि अनुवाद शब्दानुगामी हो या अर्थानुगामी, यद्यपि विवाद की 'भाषा' बदलती रही। ईसापूर्व प्रथम शताब्दी में रोमन युग से आरम्भ होता है, जब होरेंस तथा सिसरो ने शब्दानुगामी तथा अर्थानुगामी अनुवाद में अन्तर स्पष्ट किया तथा साहित्यिक रचनाओं के लिए अर्थानुगामी अनुवाद को प्रधानता दी। सिसरो ने अच्छे अनुवादक को व्याख्याकार

तथा अलंकार प्रयोग में दक्ष बताया। रोमन युग के पश्चात् जिसमें साहित्यिक अनुवादों की प्रधानता थी, दूसरी शक्तिशाली धारा बाइबिल अनुवाद की है। सन्त जेरोम (400 ईस्वी) ने भी बाइबिल के अनुवाद में अर्थानुगामिता को प्रधानता दी तथा अनुवाद में दैनन्दिन के व्यवहार की भाषा के प्रयोग का समर्थन किया। इसमें विचार यह था कि, बाइबिल का सन्देश जनसाधारण पर्यन्त पहुँच जाए और इसके निमित्त जनसाधारण के लिए बोधगम्य भाषा का प्रयोग किया जाए, जिसमें स्वभावतः अर्थानुगामी दृष्टिकोण को प्रधानता मिली।

जान वाइक्लिफ (1330-84) तथा विलियम टिंड्ल (1494-1936) ने इस प्रवृत्ति का समर्थन किया। बोधगम्य तथा सुन्दर भाषा में, तथा शैली एवं अर्थ के मध्य सामंजस्य की रक्षा करते हुए, बाइबिल के अनुवाद की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिला, जिसमें मार्टिन लूथर (1530) का योगदान उल्लेखनीय रहा। तृतीय धारा शिक्षाक्रम में अनुवाद के योगदान से संबंधित रही है। क्विटिलियन (प्रथम शताब्दी) ने अनुवाद तथा समभाषी व्याख्यात्मक शब्दान्तरण की उपयोगिता को लेखन अभ्यास तथा भाषण-दक्षता विकसित करने के सन्दर्भ में देखा। जिसका मध्यकालीन यूरोप में अधिक प्रसार हुआ। इससे स्थानीय भाषाओं का स्तर ऊपर उठा तथा उनकी अभिव्यक्ति सामर्थ्य में वृद्धि भी हुई। समृद्ध और विकसित भाषाओं से विकासशील भाषाओं में अनुवाद की प्रवृत्ति मध्यकालीन यूरोप के साहित्यिक जगत् की एक प्रमुख प्रवृत्ति है, जिसे ऊर्ध्व स्तरी आयाम की प्रवृत्ति कहा गया और इसी समय प्रचलित समान रूप से विकसित या अविकसित भाषाओं के मध्य अनुवाद की प्रवृत्ति को समस्तरी आयाम की प्रवृत्ति के रूप में देखा गया।

मध्यकालीन यूरोप के आरम्भिक सिद्धान्तकारों में फ्रेंच विद्वान ई. दोलेत (1509-46) ने 1540 में प्रकाशित निबंध में अनुवाद के पाँच विधि-निषेध प्रस्तावित किए –

(क) अनुवादक को मूल लेखक की भाषा की पूरा ज्ञान हो, परन्तु वह चाहे तो मूलभाषा की दुर्बोधता और अस्पष्टता को दूर कर सकता है।

(ख) अनुवादक का मूलभाषा और लक्ष्यभाषा का पूर्ण ज्ञान हो,

(ग) अनुवादक शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद से बचे,

(घ) अनुवादक दैनन्दिन के व्यवहार की भाषा का प्रयोग करे,

(ङ) अनुवादक ऐसा शब्दचयन तथा शब्दविन्यास करे कि उचित प्रभाव की निष्पत्ति हो।

जार्ज चौपमन (1559-1634) ने भी इसी प्रकार 'इलियड' के सन्दर्भ में अनुवाद के तीन सूत्र प्रस्तावित किए–

(क) शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद से बचा जाए,

(ख) मूल की भावना पर्यन्त पहुँचने का प्रयास किया जाए,

(ग) अनुवाद, विद्वत्ता के स्पर्श के कारण अति शिथिल न हो।

यूरोप के पुनर्जागरण युग में अनुवाद की धारा एक गौण प्रवृत्ति रही। इस युग के अनुवादकों में अर्थ की प्रधानता के साथ पाठक के हितों की रक्षा की प्रवृत्ति दिखाई देती है। हालैण्ड (1552-1637) के अनुवाद में मूलपाठ के अर्थ में परिवर्तन-परिवर्द्धन द्वारा अनूदित पाठ के संस्कार की झलक दीखती है। सत्रहवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड में सर जान डेनहम (1615-69) ने कविता के अनुवाद में शब्दानुगामी होने की प्रवृत्ति का विरोध किया और मूल पाठ के केन्द्रीय तत्त्व को ग्रहण कर लक्ष्य भाषा में उसके पुनःस्सर्जन की बात कहीय उसे 'अनुसर्जन' (ट्रांसक्रिएशन) कहा जाने लगा।

इस अविध में जान ड्राइडन (1631-1700) ने महत्त्वपर्ण विचार प्रकट किए। उन्होंने अनुवाद कार्य की तीन कोटियाँ निर्धारित की –

(क) शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद (मेटाफ्रेझ),

(ख) अर्थानुगामी अनुवाद (पैराफ्रेझ),

(ग) अनुकरण (इमिटेशन)।

ड्राइडन के अनुसार (क) और (ख) के मध्य का मार्ग अवलम्बन योग्य है। उनके अनुसार कविता के अनुवाद में अनुवादक को दोनों भाषाओं पर अधिकार हो, उसे मूल लेखक के साहित्यिक गुणों और उसकी 'भावना' का ज्ञान हो, तथा वह अपने समय के साहित्यिक आदर्शों का पालन करे। अलेग्जेंडर पोप (1688-1744) ने भी डाइडन के समान ही विचार प्रकट किए।

अठारहवीं शताब्दी में अनुवाद की अतिमूलनिष्ठता तथा अतिस्वतंत्रता के विवाद से एक सोपान आगे बढ़कर एक समस्या थी कि अपने समकालीन पाठक के प्रति अनुवादक का कर्त्तव्य। पाठक की ओर अत्यधिक झुकाव के कारण अनूदित पाठ का स्वरूप मूल पाठ से काफी दूर पड़ जाता था। इस पर डॉ. सैम्युएल जानसन (1709-84) ने कहा कि, अनुवाद में मूलपाठ की अपेक्षा परिवर्द्धन के कारण उत्पन्न परिष्कृति का स्वागत किया जा सकता है, परन्तु

मूलपाठ की हानि न हो ये ध्यान देना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा कि जिस प्रकार लेखक अपने समकालीन पाठक के लिए लिखता है, उसी प्रकार अनुवादक भी अपने समकालीन पाठक के लिए अनुवाद करता है। डॉ. जानसन की सम्मति में अनुवाद की मूलनिष्ठता तथा पाठकधर्मिता में सन्तुलन मिलता है। उन्होंने अनुवादक को ऐसा चित्रकार या अनुकर्ता कहा जो मूल के प्रति निष्ठावान होते हुए भी उद्दिष्ट दर्शक के हितों का ध्यान रखता है।

एलेग्जेंडर फ्रेजर टिटलर जिनकी पुस्तक प्रिंसिपल्स ऑफ ट्रांसलेशन (1791) अनुवाद सिद्धान्त पर पहली व्यवस्थित पुस्तक मानी जाती है। टिटलर ने तीन अनुवाद सूत्र प्रस्तावित किए –

(क) अनुवाद में मूल रचना के भाव का पूरा अनुरक्षण हो,

(ख) अनुवाद की शैली मूल के अनुरूप हो,

(ग) अनुवाद में मूल वाली सुबोधता हो।

टिटलर ने ही यह कहा कि, अनुवाद में मूल की भावना इस प्रकार पूर्णतया संक्रान्त हो जाए कि उसे पढ़कर पाठकों को उतनी ही तीव्र अनुभूति हो, जितनी मूल के पाठकों को हुई थी, प्रभावसमता का सिद्धान्त यही है।

उन्नीसवीं शताब्दी में रोमांटिक तथा उत्तर-रोमांटिक युगों में अनुवाद चिन्तन पर तत्कालीन काव्य चिन्तन का प्रभाव दिखाई देता है। ए. डब्ल्यू. श्लेगल ने सब प्रकार के मौखिक एवं लिखित भाषा व्यवहार को अनुवाद की संज्ञा दी (तुलना करें, आधुनिक चिन्तन में 'अन्तर संकेतपरक अनुवाद' से), तथा मूल के गठन को संरक्षित रखने पर बल दिया। इस युग में एक ओर तो अनुवादक को सर्जनात्मक लेखक के तुल्य समझने की प्रवृत्ति दिखाई देती है, तो दूसरी ओर अनुवाद को शब्दानुगामी बनाने पर बल देने की बात कही गई। कुछ विद्वानों ने अनुवाद की भिन्न उपभाषा होने का चर्चा की जो उपर्युक्त मान्यताओं से मेल खाती है।

विक्टोरियन धारा के अनुवादक इस बात के लिए प्रयत्नशील रहे कि देश और काल की दूरी को अनुवाद में सुरक्षित रखा जाए-विदेशी भाषाओं की प्राचीन रचनाओं के अनुवाद में विदेशीयता और प्राचीनता की हानि न हो-जिसके फलस्वरूप शब्दानुगामी अनुवाद की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिला। लौंगफेलो (1807-81) इसके समर्थक थे, परन्तु उमर खैयाम की रुबाइयों के अनुवादक फिटजेरल्ड (1809-63) के विचार इसके विपरीत थे। वे इस मान्यता के समर्थक थे कि अनुवाद के पाठक को मूल भाषा पाठ के निकट लाने के स्थान

पर मूलभाषा पाठ की सांस्कृतिक विशेषताओं को लक्ष्यभाषा में इस प्रकार प्रस्तुत किया जाए कि वह लक्ष्यभाषा का अपनी सजीव सम्पत्ति प्रतीत हो, तथा इस प्रक्रिया में मूलभाषा से अनुवाद की बढी हुई दूरी की उपेक्षा कर दी जाए।

बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में दो-तीन अनुवाद चिन्तक उल्लेखनीय हैं। क्रोचे तथा वेलरी ने अनुवाद की सफलता, विशेष रूप से कविता के अनुवाद की सफलता, में सन्देह व्यक्त किये हैं। मैथ्यू आर्नल्ड ने होमर की कृतियों के अनुवाद में सरल, प्रत्यक्ष और उदात्त शैली को अपनाने पर बल दिया।

इस प्रकार आधुनिक भाषाविज्ञान के उदय से पूर्व की अवधि में अनुवाद चिन्तन प्रायः दो विरोधात्मक मान्यताओं के चारों ओर घूमता रहा। वो दो मान्यताएँ इस प्रकार हैं -

(1) अनुवाद शब्दानुगामी हो या स्वतंत्र हो,

(2) अनुवाद अपनी आन्तरिक प्रकृति की दृष्टि से असम्भव है, परन्तु सामाजिक दृष्टि से नितान्त आवश्यक।

इस अवधि के अनुवाद चिन्तन में कुल मिलाकर संघटनात्मक तथा विभेदात्मक दृष्टियों का सन्तुलन देखा जाता रहा - संघटनात्मक दृष्टि से अनुवाद सिद्धान्त का ऐसा स्वरूप अभिप्रेत है, जो सामान्य कोटि का हो, तथा विभेदात्मक दृष्टि में पाठों की प्रकृतिगत विभिन्नता के आधार पर अनुवाद की प्रणाली में आवश्यक परिवर्तन की चर्चा का अन्तर्भाव है। विद्वानों ने इस अवधि में अमूर्त चिन्तन तो किया, परन्तु वे अनुवाद प्रणाली का सोदाहरण पल्लवन नहीं कर पाए। मूलपाठ के अन्तर्जानमूलक बोधन से वे विश्लेषणात्मक बोधन के लक्ष्य की ओर तो बढ़े, परन्तु उसके पीछे सुनिश्चित सिद्धान्त की भूमिका नहीं रही। ऐसे चिन्तकों में अनुवादकों के अतिरिक्त साहित्यकार तथा साहित्य-समीक्षक ही अधिक थे, भाषाविज्ञानी नहीं। इसके अतिरिक्त वे एक-दूसरे के चिन्तन से परिचित हों, ऐसा भी प्रतीत नहीं होता था।

आधुनिक भाषाविज्ञान का उदय यद्यपि बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में हुआ, परन्तु अनुवाद सिद्धान्त की प्रासंगिकता की दृष्टि से उत्तरार्द्ध की अवधि का महत्त्व है। इस अवधि में भाषाविज्ञान से परिचित अनुवादकों तथा भाषाविज्ञानियों का ध्यान अनुवाद सिद्धान्त की ओर आकृष्ट हुआ। संरचनात्मक भाषाविज्ञान का विकास, अर्थविज्ञान की प्रगति, सम्प्रेषण सिद्धान्त तथा भाषाविज्ञान का समन्वय, तथा अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की विभिन्न शाखाओं -समाज भाषाविज्ञान, शैलीविज्ञान, मनोभाषाविज्ञान, प्रोक्ति विश्लेषण का विकास, तथा संकेतविज्ञान, विशेषतः पाठ

संकेतविज्ञान, का उदय ऐसी घटनाएँ मानी जाती हैं, जो अनुवाद सिद्धान्त को पुष्ट तथा विकसित करने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण मानी जाती रही।

आग्ल-अमरीकी धारा में एक विद्वान् यूजेन नाइडा भी माने जाते हैं। उन्होंने बाइबिल-अनुवाद के अनुभव के आधार पर अनुवाद सिद्धान्त और व्यवहार पर अपने विचार ग्रन्थों के रूप में प्रकट किए (1964-1969)। इनमें अनुवाद सिद्धान्त का विस्तृत, विशद तथा तर्कसंगत रूप देखने को मिलता है। नाइडा ने अनुवाद प्रक्रिया का विवरण देते हुए मूलभाषा पाठ के विश्लेषण के लिए एक सुनिश्चित भाषासिद्धान्त प्रस्तुत किया तथा लक्ष्यभाषा में स्क्रान्त सन्देश के पुनर्गठन के विभिन्न आयाम निर्धारित किए। उन्होंने अनुवाद की स्थिति से सम्बद्ध दोनों भाषाओं के बीच विविधस्तरीय समायोजनों का विवरण प्रस्तुत किया।

अन्य विद्वान् कैटफोर्ड (1965) हैं, जिनके अनुवाद सिद्धान्त में संरचनात्मक भाषाविज्ञान के अनुप्रयोग का उदाहरण मिलता है। उन्होंने शुद्ध भाषावैज्ञानिक आधार पर अनुवाद के प्रारूपो का निर्धारण किया, अनुवाद-परिवृत्ति का भाषावैज्ञानिक विवरण दिया तथा अनुवाद की सीमाओं पर विचार किया। तीसरे प्रभावशाली विद्वान् पीटर न्युमार्क (1981) हैं, जिन्होंने सुगठित और घनिष्ठ शैली में अनुवाद सिद्धान्त का तर्कस्गत तथा गहन विवेचन प्रस्तुत करने का प्रयास किया। वे अपने विचारों को उपयुक्त उदाहरणों से स्पष्ट करते चलते हैं। उन्होंने नाइडा के विपरीत, पाठ प्ररूपभेद के अनुसार विशिष्ट अनुवाद प्रणाली की मान्यता प्रस्तुत की। उनका अनुवाद सिद्धान्त को योगदान है कि अनुवाद की अर्थकेन्द्रित (मूलभाषापाठ केन्द्रित) तथा सम्प्रेषण केन्द्रित (अनुवाद के पाठक पर केन्द्रित) प्रणाली की संकल्पना। उन्होंने पाठ विश्लेषण, सन्देशान्तरण तथा लक्ष्यभाषा में अभिव्यक्ति की स्थितियों में संबंधित अनेक अनुवाद सूत्र प्रस्तुत किएय यह भी इनका एक उल्लेखनीय वैशिष्ट्य माना जाता है।

यूरोपीय परम्परा में जर्मन भाषा का लीपझिग स्कूल प्रभावशाली माना जाता है। इसकी मान्यता है कि सब प्रकार के अनुभवों का अनुवाद सम्भव है। यह स्कूल पाठ के संज्ञानात्मक (विकल्पनरहित) तथा सन्दर्भपरक (विकल्पनशील) अंगों में अन्तर मानता है तथा रूपान्तरण व्याकरण और पाठसंकेतविज्ञान का भी उपयोग करता है। इस शाला ने साहित्येतर पाठों के अनुवाद पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया। वस्तुतः अनवाद सिद्धान्त पर सबसे अधिक साहित्य जर्मन भाषा में मिलता है ऐसा माना जाता है। रूसी परम्परा में फेदोरोव अनुवाद सिद्धान्त को

स्वतंत्र भाषिक अनुशासन मानते हैं। कोमिसारोव ने अनुवाद संबंधी समस्याओं की चर्चा निम्नलिखित शीर्षकों से की –

(क) अनुवाद सिद्धान्त का प्रतिपाद्य, उद्देश्य तथा अनुवाद प्रणाली,

(ख) अनुवाद का सामान्य सिद्धान्त,

(ग) अनुवादगत मूल्यसमता,

(घ) अनुवाद प्रक्रिया,

(ङ) अनुवादक की दृष्टि से भाषाओं का व्यतिरेकी विश्लेषण।

यान्त्रिक अनुवाद, आधुनिक युग की एक मुख्य गतिविधि है। यन्त्र की आवश्यकताओं के अनुसार भाषा के भाषावैज्ञानिक विश्लेषण के प्रारूप तैयार किए गए हैं, तथा विशेषतया प्रौद्योगिकीय पाठों के अनुवाद में संगणक से सहायता ली गई है। भोलानाथ तिवारी के अनुसार द्विभाषिक शब्द-संग्रह में तो संगणक बहुत सहायक है ही, अब अनुवाद के क्षेत्र में इसकी सम्भावनाएँ निरन्तर बढ़ती जा रही हैं।

अनुवाद की सीमाएँ

अनुवाद और अनुवाद-प्रक्रिया की जिन विलक्षणताओं को अनुवाद विज्ञानियों ने बार-बार रेखांकित किया है, उन्हीं के परिपार्श्व से हिन्दी अनुवाद की अनेकानेक समस्याएँ भी उभरी हैं। बकौल प्रो. बालेन्दु शेखर तिवारी हिन्दी के उचित दाय की संप्राप्ति में जिन बहुत सारी समस्याओं को राह का पत्थर समझा जा रहा है उनमें अनुवाद की समस्याएँ अपनी विशिष्ट पहचान रखती हैं।

अनुवाद से भाषा का संस्कार होता है, उसका आधुनिकीकरण होता है। वह दो भिन्न संस्कृतियों को जोड़ने वाला संप्रेषण सेतु है। एक भाषा को दूसरी भाषा में अन्तरण की प्रक्रिया में अनुवादक दो भिन्न संस्कृति में स्थित समतुल्यता की खोज करता है। एतदर्थ उसे पर्यायवाची शब्दों के विविध रूपों से जूझना पड़ता है। इसी खोज और संतुलन बनाने की प्रक्रिया में कभी-कभी एक ऐसा भी मोड़ आता है जहाँ अनुवादक को निराश होना पड़ता है। समतुल्यता या पर्यायवाची शब्द हाथ न लगने की निराशा। अननुवाद्यता(untranslatability) की यही स्थिति अनुवाद की सीमा है। जरूरी नहीं कि हर भाषा और संस्कृति का पर्यायवाची दूसरी भाषा और संस्कृति में उपलब्ध हो। प्रत्येक शब्द की अपनी सत्ता और सन्दर्भ होता है। कहा तो यह भी जाता है कोई शब्द किसी का पर्यायवाची नहीं होता। प्रत्येक शब्द एवं रूप का अपना-अपना प्रयोग गत

अर्थ-सन्दर्भ सुरक्षित है। इस दृष्टि से एक शब्द को दूसरे की जगह रख देना भी एक समस्या है। स्पष्ट है कि हर रूप की अपनी-अपनी समस्याएँ हैं और इन समस्याओं के कारण अनुवाद की सीमाएँ बनी हुई हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए कैटफोर्ड ने अनुवाद की सीमाएँ दो प्रकार की बतायी हैं-

भाषापरक सीमाएँ और सामाजिक-सांस्कृतिक सीमाएँ

भाषापरक सीमा से अभिप्राय यह है कि स्रोत-भाषा के शब्द, वाक्यरचना आदि का पर्यायवाची रूप लक्ष्य-भाषा में न मिलना। सामाजिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के अन्तरण में भी काफी सीमाओं का सामना करना पड़ता है, क्योंकि प्रत्येक भाषा का संबंध अपनी सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था से जुड़ा हुआ है, परन्तु पोपोविच का कहना है कि भाषापरक समस्या दोनों भाषाओं की भिन्न संरचनाओं के कारण उठ सकती है, किन्तु सामाजिक-सांस्कृतिक समस्या सर्वाधिक जटिल होती है। इसके साथ ही उन्होंने यह भी कहा है कि भाषापरक और सामाजिक-सांस्कृतिक समस्याएँ एक-दूसरे के साथ गुँथी हुई हैं, अतः इसका विवेचन एक दूसरे को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। बहरहाल, इस चर्चा से यह स्पष्ट हो गया कि अनुवाद की सीमाओं को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है –

अनुवाद की भाषापरक सीमाएँ

जैसा कि ऊपर संकेत किया जा चुका है कि प्रत्येक भाषा की अपनी संरचना एवं प्रकृति होती है। इसीलिए स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा के भाषिक रूपों में समान अर्थ मिलने की स्थिति बहुत कम होती है। कई बार स्रोत-भाषा के समान वाक्यों में सूक्ष्म अर्थ की प्राप्ति होती है, लेकिन उनका अन्तरण लक्ष्य-भाषा में कर पाना सम्भव नहीं होता। उदाहरणार्थ इन दोनों वाक्यों को देखें –'लकड़ी कट रही है' और 'लकड़ी काटी जा रही है'। सूक्ष्म अर्थ भेद के कारण इन दोनों का अलग-अलग अंग्रेजी अनुवाद संभव नहीं होगा। फिर किसी कृति में अंचल-विशेष या क्षेत्र-विशेष के जन-जीवन का समग्र चित्रण अपनी क्षेत्रीय भाषा या बोली में जितना स्वाभाविक या सटीक हो पाता है उतना भाषा के अन्य रूप में नहीं। जैसे कि फणीश्वरनाथ रेणु का 'मैला आँचल'। इस उपन्यास में अंचल विशेष के लोगों की जो सहज अभिव्यक्ति मिलती है उसे दूसरी भाषा में अनुवाद करना बहुत कठिन कार्य है। इसके अतिरिक्त भाषा की विभिन्न बोलियाँ अपने क्षेत्रों की विशिष्टता को अपने

भीतर समेटे होती हैं। यह प्रवृत्ति ध्वनि, शब्द, वाक्य आदि के स्तरों पर देखी जा सकती है। जैसे चीनी, जापानी आदि भाषाएँ ध्वन्यात्मक न होने के कारण उनमें तकनीकी शब्दों को अनूदित करना श्रम साध्य होता है। अनुवाद करते समय नामों के अनुवाद की समस्या भी सामने आती है। लिप्यन्तरण करने पर उनके उच्चारण में बहुत अन्तर आ जाता है। स्थान विशेष भी भाषा को बहुत प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए एस्किमो भाषा में बर्फ के ग्यारह नाम हैं, जिसे दूसरी भाषा में अनुवाद करना सम्भव नहीं है।

वास्तव में हिन्दी में अनुवाद की समस्याएँ इस भाषा के मूलभूत चरित्र की न्यूनताओं और विशिष्टताओं से जुड़ी हुई हैं। वस्तुत: हिन्दी जैसी विशाल हृदय भाषा में अनुवाद की समस्याएँ अपनी अलग पहचान रखती हैं। भिन्नार्थकता, न्यूनार्थकता, आधिकारिकता, पदाग्रह, भिन्नाशयता और शब्दविकृति जैसे दोष ही हिन्दी में अनुवाद कार्य के पथबाधक नहीं हैं, बल्कि हिन्दी के अनुवादक को अपनी रचना की संप्रेषणीयता की समस्या से भी जूझना पड़ता है।

अनुवाद की पाठ-प्रकृतिपरक सीमाएँ

अनुवाद की आवश्यकता का अनुभव हिन्दी में इसी कारण तीव्रता से किया गया कि भाषाओं के पारस्परिक आदान-प्रदान से हिन्दी को समृद्ध होने में सहायता मिलेगी और भाषा के वैचारिक तथा अभिव्यंजनामूलक स्वरूप में परिवर्तन आएगा। हिन्दी में अनुवाद के महत्त्व को मध्यकालीन टीकाकारों ने पांडित्य के धरातल पर स्वीकार किया था, लेकिन यूरोपीय सम्पर्क के पश्चात्हिन्दी को अनुवाद की शक्ति से परिचित होने का बृहत्तर अनुभव मिला। हिन्दी में अनुवाद की परम्परा भले ही अनुकरण से प्रारम्भ हुई, लेकिन आज ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न शाखाओं में अनुवाद की विभिन्न समस्याओं ने हिन्दी का रास्ता रोक रखा है। विभिन्न विषयों तथा कार्यक्षेत्रों की भाषा विशिष्ट प्रकार की होती है। प्रशासनिक क्षेत्र में कई बार 'sanction' और 'pproval' का अर्थ सन्दर्भ के अनुसार एक जैसा लगता है, अत: वहाँ दोनों शब्दों में भेद कर पाना सम्भव नहीं है। इसी प्रकार जीवविज्ञान में 'poison' और 'venom' शब्दों का अर्थ एक है, किन्तु ये अपने विशिष्ट गुणों के कारण भिन्न हो जाते हैं। अत: पाठ की प्रकृति के अनुसार पाठ का विन्यास करना पड़ता है। जब तक पाठ की प्रकृति और उसके पाठक का निर्धारण नहीं हो पाता तब तक उसका अनुवाद कर पाना सम्भव नहीं हो पाता।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि हर भाषा की अपनी संरचनात्मक व्यवस्था और सामाजिक-सांस्कृतिक परम्परा होती है। इसके साथ-साथ विभिन्न प्रयोजनों में प्रयुक्त होने के कारण उसका अपना स्वरूप भी होता है। यही कारण है कि अनुवाद की प्रक्रिया में स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा की समतुल्यता के बदले उसका न्यूनानुवाद या अधिक अनुवाद ही हो पाता है।

अनुवादक के गुण

अनुवाद कला में सफलता प्राप्त करने के लिए अभ्यास ही किसी अनुवादक को पारंगत कर सकता है, परन्तु कभी-कभी अभ्यास भी किन्हीं अनुचित अनुवाद क्रियाओं का हो जाता है, इसलिए पहले यह समझ लेना चाहिए कि अनुवाद कार्य करने वाले विद्वानों को किन-किन दोषों से बचना तथा किन-किन गुणों को प्राप्त करने का अभ्यास करना चाहिए। अनुवाद शास्त्रियों ने अनुवादक में निम्नांकित गुणों का होना आवश्यक बताया है–

(1) पूर्वाग्रह रहित होना–अनुवाद कार्य के लिए प्रयोजित रचना या उसके विषय के प्रति यदि अनुवाक किसी प्रकार के पूर्वाग्रहों से युक्त हो, जैसा कि प्रायः होता है, तो वह रचना मूल रचनाकार की रचना में अभिव्यकित दोष का सृजन कर देता है। अनुवाद कार्य में यह दोष सबसे बड़ा है। अनुवादक के लिए यह ध्यान में रखना आवश्यक है कि वह अनुवाद करते समय अभिव्यक्ति में स्वतंत्र नहीं है, अतः उसे स्वयं को मूल रचना के भावों तथा विचारों को दूसरी भाषा में अन्तरण करने के अलावा उसे और कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। यह सत्य है कि कभी-कभी वह रचना के विषय संबंधी ज्ञान में मूल रचनाकार के ज्ञान से अधिक ज्ञान रखता हो तथा यह भी सम्भव है कि कभी-कभी अनुवादक मूल रचना के अनेक भाव विचार उसके भाव-विचारों से मेल नहीं खाते हैं अर्थात् मूल रचना के भाव-विचारों के प्रति वह किन्हीं पूर्वाग्रहों से ग्रस्त है या विषय संबंधी उसकी पूर्वाग्रही धारणा सिद्धान्त-संकल्पना में मूल रचनाकार की संकल्पना में, अपनी धारणा को प्रच्छन्न रूप से अनुबद्ध हुई समझ लेता है, तो वह अनुवाद करते समय ऐसी धारणा के स्वरूप में परिवर्तन कर देगा। इसके उदाहरण प्रायः हम संसार के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'श्रीमद्भगवद्गीता' के अनुवादों में देख सकते हैं, जिनमें अनुवादकों ने गीता के कुछ मूल दार्शनिक सिद्धान्तों को प्रायः विशेषण प्रतिबद्धित कर दिया है। इसका एक उदाहरण हम गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित गीता के अनुवाद में से ही देना उचित समझते हैं–

मत्कर्म कृन्मत्परमो मक्तः सवर्जितः।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः समापेति पाण्डव॥ 55॥ (ग्यारहवाँ अध्याय)

इस श्लोक का अर्थ अनुवादक ने इस प्रकार किया है–

हे अर्जुन ! जो पुरुष केवल मेरे ही लिए, सब कुछ मेरा समझते हुए, **यज्ञ, दान और तप आदि सम्पूर्ण कर्त्तव्य कर्मों** को करने वाला है और मेरे परायण है अर्थात् मेरे को परम आश्रय और परगति मानकर मुझे प्राप्त करने के लिए तत्पर है, अर्थात् मेरा नाम, गुण प्रभाव और रहस्य के श्रवण, कीर्तन, मनन, ध्यान और पठन–पाठन का प्रेम सहित निष्काम भाव से निरन्तर अभ्यास करने वाला है और आसक्ति रहित है अर्थात् स्त्री, पुत्र और धनादि सम्पूर्ण सांसारिक पदार्थों के प्रति उसमें स्नेह नहीं है और सम्पूर्ण भूत प्राणियों में बैर–भाव से रहित है, ऐसा वह अनन्य भक्ति वाला पुरुष ही मुझे प्राप्त कर सकता है।

यह श्लोक अनुवादक की व्याख्या से युक्त है। प्रसंग के अनुसार यह व्याख्या पूर्व रूप से उपयुक्त मानी जा सकती है, परन्तु इसमें 'कर्मो' के साथ 'यक्ष, दान, तप, आदि कर्त्तव्य' शब्दों का उपयोग अनुवाद क्रिया के सैद्धान्तिक पक्ष के अनुकूल नहीं है। इसके बाद का अर्थ भी व्याख्यापरक है। यदि किसी स्थिति में अनुवादक को व्याख्या करनी हो तो मूल रचना के अन्य प्रसंगों का अध्ययन कर उन्हीं प्रसंगों का उल्लेख पाद टिप्पणी के रूप में करना अधिक उपयुक्त हो सकता है, परन्तु यह कार्य अनुवाद की स्वभावजन्य इच्छा के कारण होता है, (भले ही प्रस्तुत उदाहरण में पूर्वाग्रह नहीं भी हो, परन्तु अनुवादक का स्वज्ञान के प्रकाशन का मोह तो है ही) इसे दूर करने का सिर्फ एक ही उपाय अभ्यास माना जाता है। अभ्यास से ही अनुवादक अपनी किसी ऐसी बलवती इच्छा को रोक सकता है, अन्यथा वह इस तरह से प्रवृत्त अवश्य हो जायेगा। कार्ल मार्क्स के शिष्यों द्वारा उसके दर्शन का अनुवाद इसी परम्परा से किया है और उसके क्षेत्र को बढ़ावा दिया है। इसी तरह के अनुवाद दोष अन्य कई यूरोपियन समाज वैज्ञानिकों के दर्शन सिद्धान्तों के अनुवाद में पाये जाते हैं।

(2) स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा का ज्ञान–अनुवाद एक भाषा से दूसरी भाषा में किया जाता है। अतः अनुवादक के लिए दोनों-स्रोत और लक्ष्य भाषाओं का ज्ञान होना आवश्यक नहीं, अपितु अनिवार्य भी है, परन्तु अनुवादशास्त्री इस बात को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि दोनों भाषाओं का ज्ञान ही समस्या का समाधान नहीं है। अनुवाद कार्य की कठिनता के संबंध में स्वतंत्र भारत के प्रथम **राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद** का मन्तव्य अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है। उनके

शब्दों में, "एक प्रकार से मौलिक लेख लिखना जितना आसान है, किसी दूसरी भाषा से अनुवाद करना उतना ही कठिन है। मेरा निजी अनुभव है कि मैं अंग्रेजी से हिन्दी में और हिन्दी से अंग्रेजी में उतनी आसानी से अनुवाद नहीं कर सकता **जितनी आसानी से बोल या लिख सकता हूँ।** गहन विषयों का अनुवाद तो और भी अधिक मुश्किल हो जाता है। अनुवादक को केवल उन दोनों भाषाओं का जिनमें से कि एक से दूसरी में अनुवाद करना है, अच्छा ज्ञान होना ही जरूरी नहीं, बल्कि उस विषय पर अच्छा अधिकार भी होना चाहिए जिस विषय से वह अनुवाद किये जाने वाला ग्रन्थ संबंध रखता है। इसलिए किसी को यह नहीं समझना चाहिए कि अगर वह दो भाषाओं से सिर्फ अवगत है तो वह एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद कर सकता है।"

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के इस उद्धरण से यह बात प्रकट होती है कि प्रायः विद्वान लोग भी जितनी आसानी से वह स्रोत या लक्ष्य-भाषा में स्वाभाविक रूप से कोई विचार प्रकट कर सकते हैं, उनके लिए भी अनुवाद कार्य में ऐसा कर पाना कठिन होता है। इसका भी मूल कारण अभ्यास का अभाव ही होता है। डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के ही अनुसार अनुवादक का स्रोत तथा लक्ष्य भाषानुवाद विद्व-ज्ञान से ही काम नहीं चलता, वरन् उसे अपेक्षित अनुवाद के विषय का भी ज्ञान होना आवश्यक है। यह गुण भी अनुवादक द्वारा विषय संबंधी पुस्तकें पढ़ने के अभ्यास से सम्भव है। आजकल अनेक विद्वान अनुवाद तो करते हैं, परन्तु उन्हें मूल रचना के विषय का ज्ञान नहीं होता। वास्तविक बात यह है कि विषय के ज्ञान से स्रोत कृति में प्रयुक्त अनेक सन्दर्भों को अनुवादक अनूदित कृति में विषय सन्दर्भों की पृष्ठभूमि के आधार पर अनुवाद करने में सक्षम हो सकता है।

(3) भाषा की प्रकृति का ज्ञान-वस्तुतः स्रोत-भाषा तथा लक्ष्य-भाषा के शब्दों के अर्थ की सम्यक् जानकारी से काम नहीं चल सकता। अनुवाद को सफल बनाने के लिए शब्दों की प्रकृति और उनके परिवेश की सूक्ष्म और यथार्थ जानकारी का होना अत्यंत जरूरी है। अन्यथा अनुवादक स्रोत-भाषा के साथ न्याय कर ही नहीं सकता। उदाहरणार्थ-अशोक के लिए ब्राह्मणों द्वारा प्रयुक्त **'देवाना प्रियः'** संस्कृत शब्द का प्रयोग किया गया है। कई अनुवादक इस शब्द का प्रयोग ब्राह्मणों के दुर्वचन रूप में मानते हैं और इसी सन्दर्भ को लेकर वह अशोक को वैदिक धर्म का विद्वेषी सिद्ध करने के लिए **'देवानां प्रियः'** शब्द का अनुवाद करते हैं। यह अनुवादकों के विषय ज्ञान की कमी को तो उजागर करता है ही साथ ही, संस्कृत भाषा की प्रकृति से अपरिचय का भी द्योतक है। यही स्थिति

अंग्रेजी के यू (You) और डियर (Dear) शब्दों की है। यह दोनों शब्द छोटों-बड़ों और समान स्तर तथा आयु के व्यक्तियों के लिए एक समान प्रयोग किए जाते हैं। अनुवादक को देखना होगा कि कहाँ यू का अनुवाद तू करना है, कहाँ तुम और कहाँ आप। इसी प्रकार डियर का अनुवाद कहाँ प्रिय, कहाँ सामान्य और कहाँ आदरणीय करना उपयुक्त होगा-अनुवादक के लिए यह देखना आवश्यक हो जाता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि दोनों-स्रोत और लक्ष्य-भाषाओं की जानकारी का अर्थ यह कदापि नहीं कि केवल शब्द कोश में निहित अर्थ की अथवा व्याकरणिक रूप की जानकारी होनी चाहिए। इसे तो सिर्फ सतही ज्ञान ही कहा जाएगा। सत्य तो यह है कि दोनों भाषाओं की प्रकृति, परम्परा और उनके सांस्कृतिक परिवेश के मर्म को बिना समझे तथा जाने अनुवादक अनुवाद की गहराई में जा ही नहीं सकता। उदाहरणार्थ-नर्स के लिए प्रयुक्त 'मिडवाइफ' शब्द का हिन्दी में 'आधी पत्नी' अनुवाद तो कभी सही नहीं माना जायेगा।

वस्तुत: स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा की प्रकृति और परम्पराओं का ज्ञान इन भाषाओं के निरन्तर सम्पर्क-अभ्यास से ही हो सकता है। अंग्रेजी समाचार-पत्रों में निरन्तर नये शब्द प्रयोग में लाए जाते हैं। अनुवादक को यदि अंग्रेजी समाचार-पत्रों के प्रति लगाव नहीं होता और वह अपनी विद्वता के आधार पर ही अनुवाद में प्रवृत्त होता है, तो यह उसकी भूल है। अंग्रेजी समाचार-पत्रों में प्राय: नई-नई तरह की वाक्स रचनाएँ भी देखी जाती है बाद में जिनका अनुकरण अंग्रेजी के विद्वान भी अपनी पुस्तकों में करते हैं। प्राय: अंग्रेजी के कुछ शब्दों के प्रयोग तो इस तरह किये जाने लगे हैं, जिन्हें हम सदा से एकार्थक रूप में ही जानते हैं। इस तरह के शब्दों का ज्ञान तथा प्रयोग सिर्फ अभ्यास के द्वारा ही किया जा सकता है।

(4) सामाजिक संस्कृति का ज्ञान-इसके अतिरिक्त अनुवाद के लिए दोनों-स्रोत और लक्ष्य-भाषाओं के वक्ताओं की सामाजिक मर्यादाओं और परम्पराओं का ज्ञान होना भी अत्यंत आवश्यक है। उदाहरणार्थ किसी अपरिचित अथवा सम्मानित महिला के लिए अंग्रेजी भाषा के 'डियर मैडम' का हिन्दी अनुवाद 'प्रिय श्रीमती जी' सही नहीं होगा। भारतीय समाज में सामान्यतया महिलाओं के विशेष आदर देने की प्रथा एवं परम्परा हैं अत: यहाँ 'डियर मैडम' का सही अनुवाद 'आदरणीया महोदया' या 'सुश्री' ही होगा।

(5) सन्दर्भ का ज्ञान–अनुवादक के लिए सन्दर्भ और प्रसंग की जानकारी का होना भी सर्वथा अपेक्षित है। इसके बिना अनुवाद कार्य में न्याय हो ही नहीं सकता। उदाहरणार्थ अंग्रेजी के सन् (Son) का अर्थ सभी स्थानों पर पुत्र ही करना उचित नहीं होगा। 'सन् ऑफ इण्डिया' का सही अनुवाद 'भारत का सपूत' होगा न कि भारत को पुत्र। इसी तरह कहीं आत्मज, कहीं बेटा, लड़का तो कहीं कुलदीपक का प्रयोग किया जाएगा। इस संबंध में एक विद्वान का यह कथन बड़ा ही उपयुक्त है–**"शब्द भाव अथवा विचार की पोशाक नहीं है, जो इच्छानुसार बदली जा सके अर्थात् पैंट-कमीज के स्थान पर धोती-कुर्ता पहना दिया जाये।"** यह तो भाव या विचार का मांस अथवा उसकी त्वचा है। अत: भाव विचार के अनुकूल एवं अनुरूप शब्दों के प्रयोग से ही अनुवाद सफल और सजीव बन सकता है।

इसी सन्दर्भ में उमर खय्याम की रुबाइयों के अनुवादक फिट्ज जेराल्ड के अनुवाद कार्य की समीक्षा करते हुए डॉ. हरिवंशराय बच्चन ने बड़ा ही स्टीक वक्तव्य दिया है और कहा है कि- "यदि अनुवाद का अर्थ यह है कि एक भाषा के शब्द के स्थान पर दूसरी भाषा का शब्द लाकर रख दिया जाये तो फिट्ज जेराल्ड सफल अनुवादक नहीं है और अगर अनुवाद का अर्थ यह है कि मूलभावों को दूसरी भाषा के माध्यम से जाग्रत किया जाये तो फिट्ज जेराल्ड आदर्श अनुवादक हैं।" वस्तुत: यदि अनुवाद मूल भाषा में अभिव्यक्त संवेदना को सम्प्रेष्य बनाने में समर्थ नहीं है तो वह सर्वथा निष्फल और निरर्थक है। अनुवाद का सजीव होना आवश्यक है यदि उसमें किसी कारणवश मूल प्राणों की प्रतिष्ठा नहीं हो सकती तो उसमें अपनी ही सांसों का संचार कर देना चाहिए।

'अपनी ही सांसों का संचार' शब्द भी बहुत वृहत् भावी शब्द है। स्रोत-भाषा के भाव और मूल यथार्थ की रक्षा करना अवश्य ही अनुवाद का कार्य है, लेकिन इसकी रक्षा कैसे की जाए यह एक समस्या है। ऐसे नहीं कि जहाँ स्रोत भाषा की मूल सांसों का भी अतिक्रमण हो' या 'अतिक्रमण हो रहा है' इसकी प्रकृति का ज्ञान भी अभ्यास के क्षेत्र के भीतर ही आता है।

(6) मुहावरों और लोकोक्तियों में निहित मर्म का ज्ञान–प्रत्येक भाषा में लाक्षणिक प्रयोगों के रूप में कुछ मुहावरों और जीवन के किसी सत्य को जीवित रूप देने के लिए लोकोक्तियों की रचना की जाती है तथा उनको प्रचलन में लाया जाता है। उनका शब्दानुवाद करना न तो सम्भव होता है और न ही वांछनीय। उदाहरणार्थ–हिन्दी में पुत्र को 'बुढ़ापे की लकड़ी' कहा जाता है।

इसका अंग्रेजी अनुवाद `A stick of old age कभी उस अर्थ को सूचित नहीं कर पायेगा। इसी तरह भारत की भाषाओं में 'मुँह में तिनका दबाना' का भावार्थ अधीनता स्वीकार करना ही लेना होगा। ऐसी लोकोक्तियों तथा मुहावरों के अनुवाद के लिए लक्ष्य-भाषा में, स्रोत-भाषा में प्रयुक्त लोकोक्तियों तथा मुहावरों की ही खोज करनी पड़ सकती है, परन्तु यह तब तक नहीं हो सकता है जब तक गहनपूर्वक किये गये अभ्यास द्वारा उनका संकलन अनुवादक के पास नहीं हो। इसके लिए केवल कोशों से काम नहीं चलता। बहुत-सी लोकोक्तियाँ और मुहावरों की समकक्ष लोकोक्तियाँ तथा मुहावरे कोशों में होते ही नहीं। कभी-कभी ऐसे मुहावरों आदि के समकक्ष मुहावरे आदि गढ़ लेने के अनुवादक के अधिकार को भी अमान्य नहीं किया जा सकता, परन्तु अनुवादक इसी अधिकार का प्रयोग तभी कर सकता है, जब इसी प्रकार की क्रियाओं को अभ्यास में लगातार लाता रहा हो।

(7) विषय का ज्ञान—अनुवादक के लिए जहाँ स्रोत-भाषा का पर्याप्त और गहन ज्ञान अपेक्षित है, दोनों भाषाओं के शब्दों की प्रवृत्ति और परिवेश की जानकारी अपेक्षित है, वहाँ उसके लिए अनूदित की जाने वाली रचना में निरुपित समय, स्थान, विषय और समजा आदि की भी सही, पूरी और गहरी जानकारी का होना आवश्यक है अन्यथा वह अनुवाद कार्य के लिए न्याय कर ही नहीं सकता। अनुवादशास्त्रियों ने इसे अनुवाद कार्य में अत्यंत सहायक माना है, लेकिन ऐसा प्रायः अनुवादकों के लिए सम्भव नहीं होता। फिर भी स्रोत रचना में इनकी जानकारी कराने वाले तत्त्व अवश्य होते हैं। यह स्रोत-भाषा की सांस्कृतिक और सामाजिक परम्पराओं के होते हैं, जिनकी अनुवादक को जानकारी अवश्य होनी चाहिए ताकि वह उनके वर्णन को उनकी यथार्थता का प्रसंग प्रदान कर सके। इसे सामान्य ज्ञान की भी बात कहा जा सकता है, क्योंकि सामान्य अभ्यास के लिए सामान्य ज्ञान होना आवश्यक है।

अनुवाद करते रहने के अभ्यास से अनुवाद सभी समस्याओं का समापन हो सकता है। जिनको अपने भाषा प्रवाह को आकर्षक और रुचिपूर्ण बनाने की इच्छा होती है, वह इसके लिए निरन्तर अभ्यास करते हैं। प्रायः स्रोत-भाषा की मूल रचना और लक्ष्य-भाषा के विभिन्न अनुवादों को पढ़ने का अभ्यास तो आवश्यक है ही, परन्तु स्वयं अनुवाद करते रहने का अभ्यास इसके लिए सर्वोत्मक क्रिया है। इसके लिए अनुवाद कार्य में अनुकूल परिणाम प्राप्त करने के लिए निम्नांकित रूप में अभ्यास किया जा सकता है-

1. स्वयं स्रोत-भाषा की मूल रचना का अनुवाद करके उसका किसी आदर्श अनुवाद से मिलान करना और यह पहचान करना कि ऐसे आदर्श अनुवाद की शैली और शब्द-रचना कैसी है। क्या वैसा निर्वाह करने में आप सक्षम है ?
2. किसी स्रोत-भाषा का स्वयं लक्ष्य-भाषा में अनुवाद करना, तदुपरान्त अपने लक्ष्य अनुवाद को स्रोत-भाषा में अनूदित करना और स्वयं ही अपनी कमियों को निकालना। समाचार-पत्रों के लिए अनुवाद करने वालों के लिए तो यह प्रक्रिया बहुत आवश्यक है।

2

अनुवाद की प्रकृति एवं प्रकार

प्रथम विश्व युद्ध के काल तक सिर्फ कुछ ही यूरोपियन भाषाओं में वैज्ञानिक संप्रेषण से जुड़ी सूचना सामग्रियों की उपलब्धता थी, लेकिन आगे चलकर यूरोप एवं दुनिया की अन्य भाषाओं की वैज्ञानिक संप्रेषण से जुड़ी सामग्रियों को तैयार किया जाने लगा। अब वैज्ञानिक सम्प्रेषण के लिए बहुत-सी भाषाएँ उभरकर सामने आई हैं। यह मुख्यत: विश्वयुद्ध के उपरान्त हुए अनुसंधान के क्रियाकलापों के कारण हुआ है। वैज्ञानिक साहित्य का इतनी भाषाओं में प्रकाशन होने के परिणामस्वरूप इनके प्रबंध, संचय एवं सूचना उपयोग में बहुत सी कठिनाइयाँ उत्पन्न हुई हैं। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि दुनिया में विभिन्न भाषाओं में लगभग 15 लाख लेख प्रतिवर्ष विज्ञान तथा तकनीकि के क्षेत्र में दुनिया की लगभग 70 भाषाओं में प्रकाशित होते हैं, जिनमें से 50% केवल अंग्रेजी भाषा और शेष दूसरी विदेशी भाषाओं में प्रकाशित होते हैं। अंग्रेजी के अलावा जर्मन, फ्रेंच, रूसी, जापानी, चीनी तथा कई अन्य यूरोपीय भाषाओं में भी वैज्ञानिक सूचनात्मक सामग्रियों का प्रकाशन होता है।

J.E. Holmstrome के अनुसार वर्तमान इंजीनियरिंग साहित्य का 2/3 भाग अंग्रेजी में प्रकाशति होता है, लेकिन संसार के 2/3 भाग में Professional Engineers अंग्रेजी नहीं पढ़ सकते हैं, तथा वे जो अंग्रेजी पढ़ लेते हैं। संसार की दूसरी विदेशी भाषाओं को नहीं पढ़ सकते।

ब्रिटेन में उसके वैज्ञानिकों पर एक सर्वेक्षण किया गया, जिसमें यह स्पष्ट किया गया कि प्रत्येक 10 वैज्ञानिकों में से मात्र एक ही ऐसा था, जो रूसी भाषा के ग्रन्थ समझ व पढ़ सकता था। 3 से 2 जर्मन समझ सकते थे तथा 10 में से 9 मात्र फ्रेन्च भाषा जानते थे। संसार में वैज्ञानिक एवं तकनीकी के क्षेत्र में कार्यरत वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों, अनुसंधानकर्ताओं में से कोई भी ऐसा नहीं है, जिसे अनेक या दो से अधिक विदेशी भाषाओं का पूर्ण एवं कामचलाऊ ज्ञान हो। ज्यादातर ऐसे लोगों को केवल एक ही भाषा का ज्ञान होता है।

ऐसी स्थिति में वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय साहित्य की अनूदित सामग्रियाँ ही इनकी सूचना सेवा करती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि पूर्ण प्रकाशित वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य के पूर्ण अभिगम के लिए केवल एक मात्र उत्तर अनुवाद सेवाओं की व्यवस्था करना है, जिसके लिए यह आवश्यक है कि वैज्ञानिकों/ तकनीकी विशेषज्ञों एवं अन्वेषणकर्ताओं के उपयोग एवं जानकारी के लिए अन्य भाषाओं की सामग्रियों के अनुवाद समय से सुलभ कराये जायँ। देश के तमाम प्रलेखीकरण एवं सूचना केन्द्रों में त्वरित अनुवाद सेवाओं की उपलब्धता नहीं कायम हो पाई है। इसलिए अनुवाद सेवा को सुचारु करने की आवश्यकता है।

अनुवाद की प्रकृति

'अनुवाद' एक कर्म के रूप में बेहद जटिल क्रिया है और एक विधा के रूप में बहुत संश्लिष्ट। यही कारण है कोई इसे 'अनुवाद कला' कहता है, कोई 'अनुवाद शिल्प', तो कोई 'अनुवाद विज्ञान'। अनुवाद कर्म के मर्म को समझने के लिए अनुवाद की प्रकृति और अनुवाद के प्रभेद को जानना-समझना बहुत जरूरी है। चर्चा की शुरुआत अनुवाद की प्रकृति से करते हैं।

अनुवाद सिद्धान्त एवं व्यवहार पर उपलब्ध पुस्तकों के शीर्षकों को देखने से मन में यह प्रश्न स्वत: उठता है कि आखिर अनुवाद की प्रकृति क्या है ? विद्वानों का एक वर्ग इसे 'कला' मानता आया है तो दूसरा वर्ग इसके विपरीत इसे 'विज्ञान' की श्रेणी में रखना पसन्द करता है। एक वर्ग ऐसा भी है, जो अनुवाद को कला या विज्ञान की श्रेणी से अलग 'शिल्प' की कोटि में रखता है। ऐसे में अनुवाद की प्रकृति पर विचार करना जरूरी हो जाता है। पहले हम इसके विज्ञान पक्ष पर विचार करते हैं।

अनुवाद का वैज्ञानिक पक्ष

विज्ञान का साधारण अर्थ होता है 'विशिष्ट ज्ञान'। मगर आज 'विज्ञान' शब्द केवल 'विशिष्ट ज्ञान' तक सीमित न रह कर समूचे वैज्ञानिक व तकनीक चिन्तन, अनुशासनों, यथा- भौतिकी, रसायन, गणित, जीवविज्ञान, कम्प्यूटर आदि को अपने में समाहित कर चुका है, जिसमें पूर्ण सार्वभौमिक सत्यता(universal truth) विद्यमान होती है। इसे सार्वभौमिक सत्यता इसलिए कहा जाता है, क्योंकि यह सामान्यत: स्थान, समय व परिवेश से प्रभावित नहीं होती। इसमें हमेशा 2़2=4 या H2+0H20 होता है, परन्तु अनुवाद में ऐसी सार्वभौमिक सत्यता नहीं होती। हर अनुवादक से उसे एक नया रूप मिलता है। फिर अनुवाद में अनिवार्यत: अनुवादक के युग, समाज, भौगोलिक परिवेश आदि का प्रभाव भी मौजूद रहता है। अनुवाद को उस अर्थ में विज्ञान नहीं कहा जा सकता जिस अर्थ में भौतिकी, रसायन, गणित, जीवविज्ञान आदि को विज्ञान कहा जाता है। अनुवाद को विज्ञान मानने के पीछे कारण यह है कि अनुवाद की प्रकिया में विज्ञान की भाँति ही विश्लेषण, तुलना, निरीक्षण, अनुशीलन आदि सोपान होते हैं।

डार्टेस्ट ने अनुवाद को अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान (Applied Linguistics) की एक शाखा के रूप में परिभाषित करते हुए लिखा है कि अनुवाद, अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की वह शाखा है, जिसमें विशेषत: एक प्रतिमानित प्रतीक समूह से दूसरे प्रतिमानित प्रतीक समूह में अर्थ को अन्तरित करने की समस्या या तत्संबंधी तथ्यों पर विचार-विमर्श किया जाता है–

अनुवाद को अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान के अन्तर्गत शामिल करने का कारण यह है कि अनुवाद कर्म में स्रोत-भाषा से लक्ष्य-भाषा तक पहुँचने में हम जिन प्रक्रियाओं से होकर गुजरते हैं। उसका वैज्ञानिक विश्लेषण (scientific analysis) किया जा सकता है। भाषा विज्ञानियों का मानना है कि अनुवाद क्रिया में पहले स्रोत-भाषा का विकोडीकरण (decoding of Source Language) होता है, जिसका बाद में लक्ष्य-भाषा में पुन:कोडीकरण (encoding of Target Language) किया जाता है। अत: अनुवाद कर्म में विज्ञान का कुछ गुण अवश्य है, परन्तु इतने भर से इसको पूर्णत: वैज्ञानिक विधा नहीं माना जा सकता।

अनुवाद का कला पक्ष

कला एक प्रकार की सर्जना(creation) है। शायद यही कारण है कि सृजनात्मक साहित्य को कला की श्रेणी में रखा जाता है। जब सृजनात्मक साहित्य

का अनुवाद किया जाता है तो वह मात्र शाब्दिक प्रतिस्थापन नहीं होता, बल्कि अनुवादक को मूल लेखक के उस महान् जीवन क्षण को फिर से जीना होता है, जिससे अभिभूत होकर कवि या रचनाकार ने उस रचना को अंजाम दिया। इसलिए आग्निस गेर्गली ने कहा है –Translation must find and reproduce the impulse of the original work- हमेशा सहज समतुल्यता की खोज में अनुवादक को अक्सर पुनःसृजन करना पड़ता है, जिसमें अनुवादक के सौन्दर्यबोध एवं सृजनशील प्रतिभा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। शैली के शब्दों में कहें तो सृजनात्मक साहित्य का अनुवाद एक प्रकार से कलात्मक प्रक्रिया है। साहित्यिक अनुवाद का पुनर्सृजित रूप निम्नलिखित दो अनुवादों से स्पष्ट हो जाएगा –

उदाहरण-1 मूल –लूटि सकै तौ लूटियौ, राम नाम है लूटि। पीछे ही पछिताहुगे, यह तन जैहै छूटि।। -कबीर

अनुवाद –Rejoice O KabirIn this great feastof Love !Once deathknocks at your door, This golden momentwill be goneFor ever ! &Translated by Sahdev Kumar

उदाहरण-2 मूल –One Moment inAnnihilation*s Waste]One Moment, of the Well of Life to tasteThe Stars are setting and the Caravan, Starts for the dawn of Nothing& oh, make haste! &Rubaiyat (Fitzgerald)

अनुवाद– अरे, यह विस्मृति का मरु देश एक विस्तृत है, जिसके बीच खिंची लघु जीवन-जल की रेख, मुसाफिर ले होठों को सींच। एक क्षण, जल्दी कर, ले देख बुझे नभ-दीप, कि धर पर भोरकारवाँ मानव का कर कूचबढ़ चला शून्य उषा की ओर ! खैयाम की मधुशाला हिन्दी अनुवाद –हरिवंशराय बच्चन

उपर्युक्त दोनों अनुवाद मूल के आधार पर नई रचनाएँ बन गई हैं। ये अनुवाद नहीं बल्कि मूल का 'अनुसृजन' है। इसमें मूल लेखक की भाँति अनुवादक की सृजनशील प्रतिभा की स्पष्ट झलक देखने को मिल रही है। राजशेखर दास ने ठीक ही कहा है –'कविता का अनुवाद कितना ही सुन्दर क्यों न हो वह केवल मूल विचारों पर आधृत एक नई कविता ही हो सकती है।' यही कारण है कि साहित्यिक अनुवाद को एक कलात्मक प्रक्रिया माना गया है।

अनुवाद का शिल्प पक्ष

कई भाषाविज्ञानियों का मानना है कि अनुवाद-कार्य एक शिल्प-कर्म है। उनका तर्क है कि स्रोत-भाषा में व्यक्त सन्देश को लक्ष्य-भाषा में प्रस्तुत करने में अनुवादक के कौशल, उसके भाषा-चातुर्य की अहम् भूमिका होती है। यह शिल्प शब्द अंग्रेजी के skill o craft के निकट पड़ता है। न्यूमार्क ने अनुवाद कर्म को 'शिल्प' स्वीकारा है –'अनुवाद एक शिल्प है, जिसमें एक भाषा में लिखित सन्देश को दूसरी भाषा में उसी सन्देश को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया जाता है।' फिर अनुवाद में जितना अधिक अभ्यास किया जाएगा या प्रशिक्षण लिया जाएगा, अनुवाद उतना ही सुन्दर होता जाएगा। इसके अलावा कला और शिल्प का अभिन्न संबंध भी रहा है। जहाँ कला होगी वहाँ निश्चय ही शिल्प होगा और इसके विपरीत जहाँ शिल्प होगा वहाँ अनिवार्यत: कला होगी। अत: अनुवाद में अंशत: शिल्प का तत्त्व भी समाहित है।

अनुवाद में कला-विज्ञान-शिल्प के तीनों तत्त्व

नाइडा द्वारा प्रस्तावित अनुवाद प्रक्रिया में तीन सोपानों का उल्लेख है –

1. विश्लेषण
2. अन्तरण
3. पुनर्गठन।

दरअसल ये तीनों चरण क्रमानुसार विज्ञान, शिल्प और कला के ही तीनों सोपान हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि अनुवाद-प्रक्रिया का पहला चरण है मूल-पाठ का 'वैज्ञानिक विश्लेषण', दूसरा सोपान है मूल-पाठ के सन्देश व शिल्प का 'अन्तरण कौशल' तथा तीसरा सोपान है लक्ष्य-भाषा में उसका 'कलात्मक पुनर्गठन'। मगर अनुवाद में ये तीनों (कला, विज्ञान और कौशल) का अनुपात सदैव समान नहीं रहता। इन तीनों का अनुपात अनुद्य सामग्री की प्रकृति पर निर्भर रहता है। सृजनात्मक सामग्री में कला तत्त्व का प्राधान्य होने के कारण इसके अनुवादक में भी सृजनात्मक प्रतिभा का होना अपरिहार्य माना गया है। यही कारण है कि साहित्यिक अनुवादक अनुवाद को कलात्मक क्रिया मानते आए हैं। इसके विपरीत तकनीकी या वैज्ञानिक सामग्री के अनुवादक को अनु। विषय का सम्यक ज्ञान होना जरूरी है। अनुवादक का विषय ज्ञान जितना अधिक होगा अनुवाद उतना सटीक होगा। अन्यथा 'woody portion' का अनुवाद 'काष्ठमय अंश' हो जाने में देर नहीं लगती। इसके अलावा तकनीकी-वैज्ञानिक सामग्री के अनुवाद में हमें कुछ नियमों

का अनुसरण भी करना पड़ता है। इसीलिए तकनीकी विषय के अनुवाद में अनुवादक का कौशल बखूबी काम करता है। इस सन्दर्भ में नाइडा का कथन है –'Translation is far more than a Science] it is also a Skill and in the ultimate analysis fully satisfactory translation is always anArt.' अर्थात् अनुवाद विज्ञान से बढ़कर है, वह कौशल भी है और अन्तिम विश्लेषण में पूर्णत: सन्तोषजनक अनुवाद हमेशा एक कला रहा है, परन्तु डॉ. नगेन्द्र अनुवाद को एक स्वतंत्र विधा मानते हैं। उनका कहना है –'अनुवाद पारिभाषिक अर्थ में न विज्ञान है और न कला। इसके अतिरिक्त उसे निश्चित रूप से शिल्प भी कहना तर्कसंगत नहीं होगा। वास्तविक स्थिति यह है कि आधार विषय के अनुसार अनुवाद में इन तीनों के ही तत्त्वों का यथानुपात समावेश रहता है। साहित्यिक अनुवाद विशेष रूप से काव्यानुवाद का अन्तर्भाव जहाँ कला की परिधि में ही हो जाता है, वहाँ वैज्ञानिक तथा शास्त्रीय अनुवाद में विज्ञान के आधार तत्त्वों का प्राधान्य रहता है, जबकि शिल्प का प्रयोग प्राय: सर्वत्र ही मिलता है। इस प्रकार अनुवाद एक स्वतंत्र विधा है।' निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि अनुवाद में कला, विज्ञान और शिल्प तीनों विधाओं के तत्त्व अंशत: विद्यमान हैं। दूसरे शब्दों में, अनुवाद के विश्लेषण में वैज्ञानिकता है, उसकी सिद्धि में कलात्मकता जिसके लिए आवश्यकता होती है शिल्पगत कौशल की।

अनुवाद के प्रकार

अनुवाद को इस आधार पर दो भागों में बाँटा जा सकता है–

(1) सीमा, (2) भाषिक स्तर, (3) श्रेणी या पदक्रम।

(1) सीमा के आधार पर–अनुवाद के इन प्रकार या आधार का उल्लेख किया जा सकता है, लेकिन प्रमुख रूप से इसके विशेष आधार में इन तत्त्वों की चर्चा प्रमुख तत्त्व है–

(क) पूर्ण अनुवाद (Full translation),

(ख) आंशिक अनुवाद (Partial translation)A

(क) पूर्ण अनुवाद–पूर्ण अनुवाद में सम्पूर्ण अनूद्य-सामग्री का अनुवाद किया जाता है। स्रोत-भाषा के पाठ को उसके पूर्णरूप में भाषान्तरित किया जाता है।

(ख) आंशिक अनुवाद- आंशिक अनुवाद में स्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री के कुछ अंशों को त्याग भी दिया जाता है। इस प्रकार के अनुवाद में विलास के

तारतम्य को बनाये रखना अभीष्ट होता है, परन्तु ऐसा करने में स्थानिक विशेषता वाले पाठों को छोड़ना उचित नहीं होता। साहित्यिक अनुवाद में प्रायः ऐसा किया जाता है।

(2) भाषिक स्तर के आधार पर–अनुवाद के दो भेद भाषिक स्तर के आधार पर किए जाते हैं–

(क) समग्रता में अनुवाद (Total translation),

(ख) निर्बद्ध अनुवाद (Restricted translation)A

(क) समग्रता में अनुवाद–ऐसे अनुवाद में स्रोत भाषा के पाठ का मूल रूप में समग्र अनुवाद किया जाता है। स्रोत-भाषा के व्याकरण और शब्दावली को भी लक्ष्य-भाषा के व्याकरण और शब्दावली के समकक्षों द्वारा सम्पूर्णता देनी होती है।

(ख) निर्बद्ध अनुवाद–इस प्रकार के अनुवाद में स्रोत-भाषा के पाठ को उसके समानार्थक स्तर पर प्रतिस्थापित किया जाता है। इसमें स्वर-विज्ञान या लिपि-विज्ञान या व्याकरण या शब्द-विज्ञान का आधार अपेक्षित है। लिप्यन्तरण एक जटिल प्रक्रिया है, जिसमें स्वर-विज्ञानपरक अनुवाद तथा स्रोत और लक्ष्य-भाषा में स्वर-विज्ञान ओर लिपि-विज्ञान का परस्पर संबंध रहता है। लिप्यन्तशरण में स्रोत-भाषा की लिपि-विज्ञानपरक इकाइयों को तदनुरूप स्वर-विज्ञानपरक इकाइयों में प्रतिस्थापित करना पड़ता है फिर इन स्रोत-भाषा की स्वर-विज्ञानपरक इकाइयों को उनके समकक्ष लक्ष्य-भाषा की स्वर-विज्ञानपरक इकाइयों में अन्तरित करना होता है। अन्त में यह लक्ष्य-भाषा को स्वर-विज्ञानपरक इकाइयाँ तदनुरूप लिपि-विज्ञानपरक इकाइयों में ढाल दी जाती है।

(3) श्रेणी या पद-क्रम के आधार पर-इस प्रकार के अनुवाद का स्वरूप व्याकरणिक या स्वर-वैज्ञानिक पद-क्रम के क्रमागत आधार पर स्थापित किए गए अनुवाद समानार्थकों में निर्वाह किया जाता है। इसे क्रमबद्ध अनुवाद भी कहते हैं। **मुक्त अनुवाद** (Free translation), **शब्दानुवाद** (Literal translation), **शब्दशः अनुवाद** (Word for word translation) भी आंशिक रूप से इसी श्रेणी के अनुवाद हैं।

मुक्तानुवाद–प्रायः इस प्रकार का अनुवाद शब्द-स्तर पर क्रमबद्ध रूप में होता है।

शब्दानुवाद–इस प्रकार का अनुवाद मुक्तानुवाद और शब्दशः अनुवाद के बीच की श्रेणी का होता है, जो शब्दशः अनुवाद से आरम्भ होता है। इसमें

लक्ष्य-भाषा के अनुरूप, स्रोत-भाषा के व्याकरण-अनुरूप परिमार्जित कर लिए जाते हैं अर्थात् अतिरिक्त शब्द जोड़ दिए जाते हैं और संरचना को अनुवादक किसी भी क्रम में बदल भी सकता है।

भाषा-वैज्ञानिक आधार के अलावा इन आधारों पर भी अनुवाद के भेद या प्रकार किए जा सकते हैं। इनमें से प्रमुख आधार का उल्लेख इस प्रकार किया जा सकता हैं–

(1) वाङ्मय, (2) गद्य-पद्य, (3) विधा, (4) विषय, (5) अनुवाद-प्रकृति।

(1) वाङ्मय के आधार पर-इस आधार पर अनुवाद के दो भेद हैं–

(क) ज्ञान का साहित्य (Literature of Knowledge) अनुवाद के इस क्षेत्र में भौतिक-शास्त्र, वनस्पति-शास्त्र, जीव-विज्ञान, रसायन शास्त्र आदि जैसी सभी ज्ञान की धाराएँ आती हैं। वैज्ञानिक अनुवाद कार्य विश्व भर में इसी प्रकार तेजी से हो रहा है।

(ख) शक्ति का साहित्य (Literature of Power)–इस कोटि के अनुवाद में मुख्य रूप से विशुद्ध साहित्य का समावेश है। इसमें ललित कलाओं की स्थिति प्रमुख है। कविता-कहानी-नाटक का अनुवाद ललित साहित्य के अनुवाद का एक प्रमुख अंग है।

(2) गद्य-पद्य के आधार पर-इस आधार पर अनुवाद के भेद इस प्रकार है–

(क) पद्यानुवाद–इस कोटि के अनुवाद में पद्य (poetry) का अनुवाद पद्य में ही किया जाता है। जैसे कालिदास के 'मेघदूत' के अनुक अनुवाद हुए हैं। शेक्सपियर के 'हेमलेट' या 'मैकबैथ' के अनुवाद भी इसी प्रकार हैं, परन्तु यह भी प्रचलन है कि पद्य का अनुवाद गद्य में किया जाए। जैसे कवि नागार्जुन द्वारा कालिदास के 'मेघदूत' का गद्यानुवाद। पद्य से पद्य के अनुवाद को ही पद्यानुवाद कहते हैं। शब्द-लय तथा अर्थ-लय के अनुकरण पर इस प्रकार का अनुवाद होता है।

(ख) गद्यानुवाद–गद्य का अनुवाद प्राय: गद्य में ही किया जाता है। प्रेमचन्द के प्रख्यात उपन्यास 'गोदान' के अंग्रेजी आदि में कई गद्यानुवाद हुए है। गद्य से गद्य में अनुवाद करने का कोई रूढ़ नियम भी नहीं है। ऐसे उदाहरण मिलते हैं कि गद्य का गद्य में अनुवाद हुआ है। गोल्डस्मिथ 'The Traveller* का श्रीधर पाठक ने 'श्रान्तपथिक' नाम से पद्य में अच्छा अनुवाद किया है।

(ग) छन्दबद्ध अनुवाद–इस प्रकार के अनुवाद में मूल भाषा के छन्द को यथावत् कायम रखा जाता है। जैसे अंग्रेजी के Sonnet का अनुवाद करते

समय उसके 11 वर्णों अथवा 14 पंचपदियों में उसकी स्वत: पूर्ण विषय-विचार शृंखला को ढालने का प्रयास किया जाए। अंग्रेजी के अधिकांश 'सॉनेट' Petrach की भाँति दो चतुष्पदियों और दो त्रिपदियों या स्पेंसर और शेक्सपियर की भाँति तीन चतुष्पदियों और एक युग्मक में रचित है।

(घ) छन्दमुक्त अनुवाद- इसमें अनुवादक स्रोत-भाषा के पाठ के छन्द-बन्धन से युक्त होता है। अत: वह लक्ष्य-भाषा में प्रचलित किसी भी छन्द को अपना लेता है। जैसे कालिदास का 'मेघदूत' संस्कृत के मन्दाक्रान्ता छन्द में है, किन्तु डॉ. भगवतशरण उपाध्याय ने इसका अनुवाद मुक्तक छन्द में किया है। कवि पोव के प्रसिद्ध काव्य `Essay on Criticism का अनुवाद कविवर पं. जगन्नाथदास रत्नाकर ने हिन्दी के रोला छन्द में 'समालोचनादर्श' नाम से किया है।

(3) विधा के आधार पर—साहित्यिक विधा के आधार पर अनुवाद के प्रमुख भेद इस प्रकार किए जा सकते हैं—

(क) काव्यानुवाद—किसी भाषा की काव्य कृतियाँ दूसरी भाषा में भी काव्य रूप में ही अनुदित होती है। हिन्दी में संस्कृत काव्यों को काव्य में अनुदित करने की एक समृद्ध परम्परा रही है। भारतेन्दु-युग में लाला सीताराम ने कालिदास के 'रघुवंश' का अनुवाद दोहा-चौपाइयों में किया। श्रीधर पाठक ने कालिदास के 'ऋतुसंहार' का अनुवाद ब्रजभाषा के सवैया छन्द में किया। यह लगातार कहा जाता रहा है कि काव्यानुवाद हो ही नहीं सकता, किन्तु ऐसा लगता है कि अनुवादकों ने इस कथन की कभी परवाह नहीं की। प्राचीन परम्परा से इस बात के पर्याप्त प्रमाण दिए जा सकते हैं कि काव्यानुवाद बड़ी लगन से किए जाते रहे हैं। यह काव्यानुवाद निबद्ध तथा अनिबद्ध काव्य के दोनों रूपों का हुआ है। यूनानी कवि होमर के विकसनशील महाकाव्य 'इलियट' के विश्वभर में अनेक काव्यानुवाद हुए हैं।

(ख) नाट्यानुवाद—हाल के वर्षों में नाट्यानुवाद का प्रचलन बढ़ा है। सारे संसार में नाट्यानुवाद की परंपरा रही है। हिन्दी में गोपीनाथ एम. ए. ने सन् 1950 में शेक्सपियर के तीन नाटकों के हिन्दी के अनुवाद किए। उन्होंने `Romeo and Juliet* का 'प्रेमलीला' नाम से `As You Like It* तथा `Merchant of Venice* का नये नामों से अनुवाद किया। मथुरा प्रसाद चौधरी ने 'मैकबेथ' का 'साहसेन्द्र साहस' नाम से अनुवाद किया। कवि बच्चन तथा अमृतराय ने 'हेमलेट' तथा 'मैकबेथ' का अनुवाद किया। कवि रघुवीर सहाय ने 'मैकबेथ' का पुन: 'बरनम वन' नाम से अनुवाद किया है।

हिन्दी में भारतेन्दु हरीशचन्द्र ने संस्कृत के मुद्राराक्षस नाटक का तथा लक्ष्मण सिंह ने अभिज्ञान शाकुन्तलम् हिन्दी में अनुवाद किया। फिलहाल ही हबीब तनवीर ने 'मृच्छ-कटिकम्' का 'मिट्टी की गाड़ी' के रूप में अनुवाद किया है। इसके अतिरिक्त नाट्य रूपान्तर (कहानी-उपन्यासादि के) इस दौर में अत्यधिक लोकप्रिय हुए हैं, जैसे विष्णु प्रभाकर द्वारा 'गोदान' का 'होरी' में नाट्य-रूपान्तर।

नाटक रंगमंच का विषय है। इसका अनुवाद सरल नहीं है। इसमें कई प्रकार की कठिनाईयाँ हैं। इसलिए इन्हें 'अनुवाद श्रेणी' में रखना, अनुवाद के क्षेत्र को बढ़ाना मात्र लगता है। नाट्य-रूपान्तरकार का रंगमंच से जुड़ा होना अत्यन्त आवश्यक होता है। रंगमंच के व्यावहारिक ज्ञान के बिना नाट्यानुवाद सफलता से किया ही नहीं जा सकता। इसलिए इसे अनुवाद विधा से मुक्त रूपांतर विधा के रूप में देखा जाता है।

(ग) कथानुवाद–कथानुवाद का आशय साहित्य गद्य कृतियों जैसे कहानी, उपन्यास, संस्मरण के अनुवाद से है। कहानियों तथा उपन्यासों का अनुवाद काव्यानुवाद की तुलना में काफी सरल होता है। साथ ही ये अनुवाद ज्यादा प्रचलित एवं लोकप्रिय भी हैं। टॉलस्टाय के उपन्यास `War and Peace के अनेक भाषाओं में हुए अनुवाद काफी लोकप्रिय हुए है। अज्ञेय ने जैनेन्द्र के प्रख्यात उपन्यास 'त्यागपत्र' का अंग्रेजी में `The Resignation नाम से सफल अनुवाद किया है। हिन्दी में भारतीय भाषाओं के हजारों उपन्यास सफलता से अनूदित हुए हैं। संस्कृत की कहानियों-'पंचतंत्र' या 'कथा-सरित्सागर' के विदेशी भाषाओं में सैकड़ों अनुवाद हुए हैं।

(घ) अन्य साहित्यिक विधाओं के अनुवाद–निबन्ध, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण आदि के अनुवाद बहुत समय से प्रचलित हैं। स्वयं आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने बेकन के निबन्धों का अनुवाद 'बेकन विचार-रत्नावली' के नाम से हिन्दी में किया। गांधीजी की 'आत्मकथा' के अनेंक भारतीय भाषाओं में अच्छे अनुवाद किए गए हैं।

(4) विषय के आधार पर–अनुवाद का वर्गीकरण विषय के आधार पर भी किया जाता है। इस रूप में अनुवाद को इन कोटियों में बांटा जा सकता है–

(क) ललित साहित्य का अनुवाद।

(ख) धार्मिक-पौराणिक साहित्य का अनुवाद।

(ग) साहित्यिक साहित्य का अनुवाद

(घ) गणित का अनुवाद।

(ड़) प्रशासनिक साहित्य का अनुवाद।

(च) अभिलेखों, गजेटियरों आदि का अनुवाद।

(छ) पत्रकारिता से संबंधित विषयों का अनुवाद।

(ज) समाजशास्त्रीय विषयों का अनुवाद।

(झ) काव्यशास्त्र तथा भाषा-वैज्ञानिक विषयों से संबंधित अनुवाद।

(5) अनुवाद-प्रकृति के आधार पर-अनुवाद के भेद अनुवाद-प्रकृति के आधार पर भी किए जाते हैं।

(क) शब्दानुवाद—अनुवाद में शब्दानुवाद और शब्दशः अनुवाद को प्रायः एक नहीं माना जाता है। इसमें यह कहा जा सकता है कि शब्दानुवाद में स्रोत-भाषा के प्रत्येक शब्द पर अनुवादक को ध्यान रखना पड़ता है, लेकिन शब्दशः अनुवाद में शब्द के स्तर पर क्रमबद्ध अनुवाद की ओर ध्यान दिया जाता है। शब्दानुवाद का तात्पर्य यह भी नहीं है कि स्रोत-भाषा की वाक्य-व्यंजना के ढंग से लक्ष्य-भाषा की वाक्य-व्यंजना की जाए। तात्पर्य यह है कि मूलपाठ में कही गई प्रत्येक बात को लक्ष्य-भाषा में ढंग से अन्तरित किया जाए। गणित, विधि जैसे विषयों में ऐसा अनुवाद आवश्यक होता है, क्योंकि वहाँ 'कुछ भी छूट जाने' या 'कुछ जोड़ दिये जाने से' भयंकर भूलें हो जाती हैं। यह ध्यान रखा जाना जरूरी है कि शब्दानुवाद में अनुवाद क्रिया के साथ आत्मा की भाषा का स्वाभाविक प्रवाह शामिल हो। तिरस्कार नहीं करना चाहिए। इस प्रकार की गलतियाँ अनुवाद को हास्यास्पद बना देती हैं। स्रोत-भाषा की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अर्थ-ध्वनियों और भाव की विशिष्ट भंगिमाओं को पकड़ने में अनुवादक जब असमर्थ होता है तो उससे यह गलती हो जाती है और स्रोत-भाषा का मूलार्थ अपनी अनुगूंज में लक्ष्य-भाषा में गड़बड़ा जाता है। ऐसी स्थिति में व्यंजना-प्रधान सामग्री का अनुवाद करना प्रायः कठिन होता है। शब्दानुवाद करते समय अनुवादक लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ के स्तरों को नहीं पकड़ पाता। ऐसा अनुवाद अर्थविहीन हो जाता है। जैसे He prefers dying to living का अनुवाद 'वह जिन्दगी के बजाय मौत पसन्द करता है' बड़ा ही अटपटा और बढ़ंगा लगता है, इसके बजाय इसका अनुवाद यदि यह कहा जाए कि 'वह जीने के बजाय मरना बेहतर समझता है' अधिक उचित प्रतीत होता है।

(ख) भावानुवाद—अनुवादक भावनुवाद में भाव, विचार और अर्थ पर अधिक ध्यान देता है तब वह पूरी शक्ति से उसी को लक्ष्य भाषा में अन्तरित

करने का प्रयास करता है। भाषा के पद और वाक्यों पर अधिक ध्यान न देने के कारण यह अर्थ-विज्ञान के अधिक निकट होता है। स्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री के सम्पूर्ण अर्थ को लाने का प्रयास करता है इसलिए इनमें स्रोत-भाषा की आत्मा प्रायः सुरक्षित रहती है।

भावानुवाद कई प्रकार के होते हैं। कभी-कभी स्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री का शब्दानुवाद अत्यन्त जटिल प्रक्रिया में फँसा होता है, ऐसी स्थिति में भावानुवाद करना उपयुक्त होता है। भावानुवाद में स्रोत-भाषा की शारीरिक योजना नहीं रहती अतः अनुवाद मुक्त दिखाई देता है, परन्तु ऐसे अनुवाद में सृजनात्मकता आ जाती है। इस प्रकार भावानुवाद एक सृजनात्मक कार्य है, जो अनुवादक की मौलिकता से मौलिक रचना की तरह का रचनात्मक आनन्द प्राप्त कराता है। हिन्दी में **बाबू 'यामसुन्दरदास** ने 'साहित्यालोचन' में हडसन की पुस्तक `Inroduction to the Study of Literature का इतना सफल भावानुवाद किया है कि उसमें अनुवादक की मौलिकता दर्शनीय है।

अपनी पुस्तक 'साहित्यलोचन' बाबूजी ने उसका भावानुवाद इस प्रकार प्रस्तुत किया है–"अतएव किसी साहित्य के अध्ययन में ऐतिहासिक दृष्टि से हमें दो बातों पर विचार करना पड़ता है–एक तो उसके परम्परागत जीवन पर अर्थात् उसके जातीय भाव पर और दूसरे, उस जीवन के परिवर्तनशील रूप पर अर्थात् इस बात पर कि वह जातीय जीवन किस प्रकार भिन्न-भिन्न समयों के भावों को अपने में अन्तर्निहित करके उन्हें व्यंजित करता है। अतएव किसी जाति के काव्य-समूह या साहित्य के अध्ययन से हम यह जान सकते हैं कि इस जाति या देश का मानसिक जीवन कैसा था और वह क्रमशः किस प्रकार विकसित हुआ।" (साहित्यालोचन, पृ. 44)। इस अनुवाद में हडसन से ज्यादा बाबूजी के व्यक्तित्त्व और शैली की छाप दिखाई देती है।

भावानुवाद की कुछ त्रुटियां भी हैं, क्योंकि उसमें अनुवादक अपनी भाव-सम्पदा, विचार-सम्पदा तथा शैली से पाठक को आक्रान्त कर लेता है, परन्तु यह अत्यन्त असंगत तर्क है, क्योंकि भावानुवाद दूसरी भाषा के महत्त्वपूर्ण विचारों और अाि व्यंजनाओं को अपनी भाषा में लाकर दोनों भाषाओं को सम्मान भी देता है तथा मूल लेखक की सृजनात्मकता को भी समृद्ध करता है। साहित्य के अनुवाद में यह सर्वाधिक उपयोगी पद्धति है।

(ग) छायानुवाद–'छाया' संस्कृत का बहुत पुराना शब्द है और इसका प्रयोग नाटकों में यत्र-तत्र दृष्टिगत होता है। संस्कृत पाठ की छाया जब हिन्दी

पाठ पर दृष्टिगत होती है तो उसे छायानुवाद कहा जाता है, जैसे **अवन्ति वर्मा** का यह श्लोक देखिए–

'दु:सहतापभयादिव सम्प्रति मध्यस्थिते दिवसानके।
छायामिव वाछन्ती छायापि गता तरुलतानि॥' शार्ङ्ग 3835

इसका छायानुवाद बिहारी के दोहे में इस प्रकार मिलता है–

'बैठि रही अतिसघन वन पैठि सदन तन माँह।
निरखि दुपहरी जेठ की छाहो चाहति छाँह॥'

छायानुवाद का प्रचलन विदेशी कृतियों की प्रविधि के सृजन में खासकर इस्तेमाल किया जाता है। जैसे अज्ञेयजी के 'नदी के द्वीप' पर डी. एच. लारेन्स के Lady Chattergis's Lover की धुंधली छाया दृष्टिगत होती है। भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास 'चित्रलेखा' पर 'ताइस' की छाया या प्रेमचन्द्र के 'रंगभूमि' पर थैकरे के 'Vanity Fair' के छाया। कभी-कभार लेखक विशेष की कुछ पंक्तियों पर देशी-विदेशी लेखक की छाया दृष्टिगत होती है। पन्तजी की पंक्ति है–'सिखा दो ना हे मधुपकुमारि मुझे भी अपने मीठे गान'-(Teach me half of the gladness that they brains mus know)A

(घ) रूपान्तरण–रूपांतरण के अंतर्गत अनुवादक अनुवाद के अलावा किसी रचना की विधा को भी अन्य विधा में रूपांतरित करता है। प्राय: इसमें विधा परिवर्तन होता है। उपन्यास या कहानी को नाटक में बदल दिया जाता है। सुविधा के अनुसार पात्र और काल-योजना में भी हेर-फेर हो सकता है। शेक्सपियर के प्रसिद्ध नाटक `Othello का हिन्दी में उपन्यासपरक रूपान्तर शत्रुध्नलाल शुक्ल ने किया। यह रूपान्तर एक ही भाषा में विधागत परिवर्तन के रूप में हो सकता है। शेक्सपियर के नाटकों को चार्ली लैम्ब ने `Tales from Shakespeare' में कहानियों के रूप में रूपान्तरित किया है।

(ड.) सारानुवाद–इस प्रकार के अनुवाद में स्रोत-भाषा की सामग्री का लक्ष्य-भाषा में सारांश प्रस्तुत किया जाता है। लम्बें भाषणों, राजनीतिक-वार्ताओं आदि में दुभाषिए इस प्रकार की अनुवाद-पद्धति का ही सहारा लेते हैं। इसमें आवश्यकता इस बात की है, जो कि जो बातें स्रोत-भाषा में कही गई हैं उनका मुख्यार्थ उपेक्षित न हो।

(च) भाषा या टीकापरक अनुवाद–यह अनुवाद की ऐसी पद्धति है, जिसमें अनुवाद के साथ स्रोत-भाषा के मूल की व्याख्या भी की जाती है। इसमें काव्य के स्पष्टीकरण के लिए भाष्यकार अपनी ओर से उद्धरण, उदाहरण और

प्रमाण जोड़ सकता है। भाष्यकार अपने व्यक्तित्त्व की महत्ता को अर्जित ज्ञान के माध्यम से उस पर स्थापित करता है। जैसे आचार्य विश्वेश्वर की 'हिन्दी अभिनव भारती', 'हिन्दी ध्वन्यावलोकलोचन' आदि की वैदुष्यपूर्ण व्याख्याएँ या संस्कृत की काव्यशास्त्रीय रचना 'साहित्य-दर्पण' पर डॉ. सत्यव्रत सिंह की व्याख्या। गीता पर बाल गंगाधर तिलक का 'गीता-भाष्य'। इसमें समालोचना तत्त्व का भी सम्मिश्रण हो जाता है। वेदों और उपनिषदों के अनेकानेक भाष्य इसी मनीषी परम्परा में होते रहे हैं। इस प्रकार के भाषा टीका को लिखने की परंपरा वर्तमान समय में भी प्रचलित है।

(छ) आशु अनुवाद—आशु अनुवाद का प्रचलन अब काफी बढ़ता जा रहा है। इसे विभिन्न भाषा, बोलियों वाले समाज में मनुष्यों के त्वरित संवाद के रूप में देखा जाता है। वैश्वीकरण के इस दौर में देश-विदेश के सामान्य लोगों का भी परस्पर मिलना-जुलना अधिक सहज हो चला है और ऐसे विभिन्न भाषी लोगों को एक-दूसरे से जोड़ने का काम दुभाषिए करते हैं। उन्हें दोनों की बातों का आशु अनुवाद करना पड़ता है। आशु अनुवादक का भाषा-ज्ञान गहन एवं अत्यन्त प्रामाणिक होना चाहिए। तमाम महत्त्वपूर्ण भाषाओं, वार्ताओं, अनुबन्धों आदि का अनुवाद उसे कोश या सन्दर्भ ग्रन्थों की सहायता के बिना आमने-सामने करना पड़ता है। इस दृष्टि से भाषा ही नहीं, दोनों देशों के इतिहास और संस्कृति तथा समाज से गहरे परिचय की अपेक्षा की जाती है। उसकी छोटी-सी भूल कभी बहुत भारी पड़ सकती है। इस प्रकार के अनुवाद का एक विशिष्ट सांस्कृतिक महत्त्व भी है। वर्तमान समय में राजनीतिक, सांस्कृतिक तथा वैज्ञानिक क्षेत्रों में वैश्विक संबंधों के व्यापक होने से अनुवाद का महत्त्व बढ़ता जा रहा है।

कासाग्रॉदे नामक पश्चिमी विद्वान ने अनुवाद के निम्नवत् चार भेद माने हैं—

(1) भाषापरक अनुवाद—स्रोत-भाषा के मूल कथ्य का लक्ष्य भाषा में रूपान्तरण भाषापरक अनुवाद है।

(2) तथ्यपरक अनुवाद—स्रोत-भाषा में व्यक्त तथ्यों की लक्ष्य-भाषा की प्रकृति के अनुरूप प्रस्तुति तथ्यपरक अनुवाद है। वैज्ञानिक और तकनीकी साहित्य का अनुवाद इसी भेद के अन्तर्गत है।

(3) संस्कृतिपरक अनुवाद—स्रोत-भाषा में, अभिव्यक्त धार्मिक, आध्यात्मिक और योगपरक तथ्यों-विचारों की लक्ष्य-भाषा में प्रस्तुति संस्कृतिपरक अनुवाद है।

(4) सौन्दर्यपरक अनुवाद–साहित्य संगीत तथा अन्योन्य ललित कलाओं का स्रोत-भाषा से लक्ष्य-भाषा में अनुवाद सौन्दर्यपरक अनुवाद कहलाता है।

कई विद्वानों के द्वारा अनुवाद के कई अन्य भेदों का भी उल्लेख किय गया है जैसे–(1) प्रत्यक्ष, (2) परोक्ष, (3) लिखित तथा (4) मौखिक आदि।

भोलानाथ तिवारी के अनुसार अनुवाद के भेद इन चार आधारों पर किए जा सकते हैं–

(1) इस प्रकार साहित्यिक विधाओं के आधार पर भी उसके दो भेदों का उल्लेख किया जा सकता है–1. काव्यानुवाद, 2. गद्यानुवाद।

(2) **साहित्यक विधाओं के आधार पर** पुनः उसके दो रूप भेद हैं–(क) काव्यानुवाद, (ख) गद्यानुवाद।

(3) अनुवाद को विषय के आधार पर छः भागों में बांटा गया है–

(क) ललित साहित्य का अनुवाद,

(ख) धार्मिक-पौराणिक साहित्य का अनुवाद,

(ग) विधि साहित्य का अनुवाद,

(घ) समाजशास्त्रीय साहित्य का अनुवाद,

(ड़)प्रशासनिक साहित्य का अनुवाद,

(च) वैज्ञानिक एवे तकनीकी साहित्य का अनुवाद।

(4) **अनुवाद की प्रकृति के आधार पर** पर उसके दो रूप भेद हैं–मूलनिष्ठ और मूलमुक्त। प्रचलित रूप भेद आठ हैं–

(क) भावानुवाद

(ख) शब्दानुवाद

(ग) व्याख्यानुवाद

(घ) छायानुवाद

(ं) वार्तानुवाद

(च) सारानुवाद

(छ) आदर्श अनुवाद

(ज) रूपान्तरण।

3

अनुवाद की प्रक्रिया तथा प्रविधि

'प्रक्रिया' शब्द अंग्रेजी के 'process' का पर्याय है, जो 'प्रक्रिया' के संयोग से बनकर 'विशिष्ट क्रिया' का बोध कराता है। किसी कार्य की प्रक्रिया या विशिष्ट क्रिया को जानने का अर्थ होता है, कार्य को कैसे सम्पादित किया जाए। इस अर्थ में अनुवाद कर्म में हम स्रोत-भाषा से लक्ष्य-भाषा तक पहुँचने के लिए जिन क्रमबद्ध सोपानों से होकर गुजरते हैं, उन सुनिश्चित व सोद्देश्य सोपानों को 'अनुवाद-प्रक्रिया' कहा जाता है। अनुवाद प्रक्रिया की चर्चा की शुरुआत ख्यात भाषाविज्ञानी नोअमचॉमस्की(Noam Chomsky) के निष्पादक व्याकरण (GenerativeGrammar) से करते हैं।

अनुवाद की प्रक्रिया

सैद्धान्तिक दृष्टि से 'अनुवाद कैसे होता है' का निर्वैयक्तिक विवरण ही अनुवाद की प्रक्रिया है। भाषा व्यवहार की एक विशिष्ट विधा के रूप में अनुवाद प्रक्रिया का स्पष्टीकरण एक ऐसी दृष्टि की अपेक्षा रखता है, जिसमें अनुवाद कार्य संबंधी बहिर्लक्षी परिस्थतियों और भाषा-संरचना एवं भाषा-प्रयोग संबंधी अन्तर्लक्षी स्थितियों का सन्तुलन हो। उपर्युक्त परिस्थितियों से संबंधित सैद्धान्तिक प्रारूपों के सन्दर्भ में यह स्पष्टीकरण प्रस्तुत करना आधुनिक अनुवाद सिद्धान्त

का वैशिष्ट्य माना जाता है। तदनुसार चिन्तन के अंग के रूप में अनुवाद की इकाई, अनुवाद का पाठक, और कला, कौशल (या शिल्प) एवं विज्ञान की दृष्टि से अनुवाद के स्वरूप पर दृष्टिपात के साथ साथ अनुवाद की प्रक्रिया का विशद विवरण किया जाता है।

अनुवाद की इकाई

सामान्यत: सन्देश का अनुवाद किया जाता है –अत: अनुवाद की इकाई भी सन्देश को माना जाता है। विभिन्न प्रकार के अनुवादों में सन्देश की अभिव्यंजक भाषिक इकाई का आकार भी भिन्न-भिन्न रहता है। यान्त्रिक अनुवाद में एक रूप या पद अनुवाद की इकाई होता है, परन्तु मानव अनुवाद में इकाई का आकार अधिक विशाल होता है। इसी प्रकार आशु मौखिक अनुवाद (अनुभाषण) में यह इकाई एक वाक्य होती है, तो लिखित अनुवाद में इकाई का आकार वाक्य से बड़ा होता है (और क्रमिक मौखिक अनुवाद की इकाई भी एक वाक्य होती है, कभी एकाधिक वाक्यों का समुच्चय भी)।

लिखित माध्यम के मानव अनुवाद में, अनुवाद की इकाई एक पाठ को माना जाता है। अनुवादक पाठ स्तर के सन्देश का अनुवाद करते हैं। पाठ के आकार की सीमा एक वाक्य से लेकर एक सम्पूर्ण पुस्तक या पुस्तकों के एक विशिष्ट समूह पर्यन्त कुछ भी हो सकती है, परन्तु एक सन्देश उसमें अपनी पूर्णता में अभिव्यक्त हो जाता हो ये आवश्यक है। उदाहरण के लिए, किसी सार्वजनिक सूचना या निर्देश का एक वाक्य ही पूर्ण सन्देश बन सकता है। जैसे 'प्रवेश वर्जित' है। दूसरी ओर 'रंगभूमि' या 'कामायनी' की पूरी पुस्तक ही पाठ स्तर की हो सकती है। भौतिक सुविधा की दृष्टि से अनुवादक पाठ को तर्कसंगत खण्डों में बाँटकर अनुवाद कार्य करते हैं, ऐसे खण्डों को अनुवादक पाठांश कह सकते हैं अथवा तात्कालिक सन्दर्भ में उन्हें ही पाठ भी कहा जाता है। इन्हें अनुवादक अनुवाद की तात्कालिक इकाई कहते हैं तथा सम्पूर्ण पाठ को अनुवाद की पूर्ण इकाई।

पाठ की संरचना

पाठ की संरचना का ज्ञान, अनुवाद प्रक्रिया को समझने में विशेष सहायक माना जाता है। पाठ संरचना के तीन आयाम माने गये हैं - पाठगत, पाठसहवर्ती

तथा अन्य पाठपरक। संकेतविज्ञान की मान्यता के अनुसार तीनों का समकालिक अस्तित्त्व होता है तथा ये तीनों अन्योन्याश्रित होते हैं।

पाठगत आयाम

पाठगत (पाठान्तर्वर्ती) आयाम पाठ का आन्तरिक आयाम है, जिसमें उसके भाषा पक्ष का ग्रहण होता है। दोनों ही स्थितियों में सुगठनात्मकता पाठ का आन्तरिक गुण है। पाठ की पाठगत संरचना के दो पक्ष हैं –

(1) वाक्य के अन्तर्गत आने वाली इकाइयों का अधिक्रम,

(2) भाषा-विश्लेषण के विभिन्न स्तरों पर, अनुभव होने वाली संसक्ति।

वाक्य की इकाइयाँ, वाक्य, उपवाक्य, पदबन्ध, पद और रूप (प्रत्यय) इस अधिक्रम में संयोजित होती हैं, परन्तु पाठ की दृष्टि से यह बात महत्त्वपूर्ण है कि एक से अधिक वाक्यों वाले पाठ के वाक्य अन्तर वाक्य योजकों द्वारा इस प्रकार समन्वित होते हैं कि, पूरे पाठ में संसक्ति का गुण अनुभव होने लगता है, परन्तु संसक्ति तत्पर्यन्त सीमित नहीं। उसे हम पाठ विश्लेषण के विभिन्न स्तरों पर भी अनुभव कर सकते हैं। तदनुसार सन्दर्भगत संसक्ति, शब्दगत संसक्ति, और व्याकरणिक संसक्ति की बात की जाती है।

पाठसहवर्ती आयाम

पाठसहवर्ती आयाम में पाठ की विषयवस्तु, उसकी विशिष्ट विधा, उसका सामाजिक-सांस्कृतिक पक्ष, पाठ के समय या लेखक का अभिव्यक्तिपरक विशिष्ट आशय, उद्दिष्ट पाठक का सामाजिक व्यक्तित्त्व और उसकी आवश्यकता आदि का अन्तर्भाव होता है। पाठसहवर्ती आयाम के उपर्युक्त पक्ष परस्पर इस प्रकार सुबद्ध रहते हैं कि सम्पूर्ण पाठ एकान्वित इकाई के रूप में अनुभव होता है। यह स्पष्टतया माना जाता है कि, पाठ में पाठगत आयाम से ही पाठसहवर्ती आयाम की अभिव्यक्ति होती है और पाठसहवर्ती आयाम से पाठगत आयाम अनुशासित होता है। इस प्रकार ये दोनों अन्योंन्याश्रित हैं। पाठभेद से सुगठनात्मकता की गहनता में भी अन्तर आ जाता है-अनुभवी पाठक अपने अभ्यासपुष्ट अन्तर्जांन से ग्रहण करता है। तदनुसार, साहित्यिक रचना में सुगठनात्मकता की जो गहनता उपलब्ध होती है वह अन्तिम विवरण में अनुभूत नहीं होती।

पाठपरक आयाम

पाठ संरचना के अन्य पाठपरक आयाम में एक विशिष्ट पाठ की, उसके समान या भिन्न सन्दर्भ वाले अन्य पाठों से संबंध की चर्चा होती है। उदाहरण के लिए, एक वस्त्र के विज्ञापन की भाषा की, प्रसाधन सामग्री के विज्ञापन की भाषा से प्रयोग शैली की दृष्टि से जो समानता होगी तथा बैंकिग सेवा के विज्ञापन से जो भिन्नता होगी वो संबंध पर चर्चा की जाती है।

विभिन्न प्रारूप

इस में अनुवाद प्रक्रिया के प्रमुख प्रारूपों की प्रक्रिया संबंधी चिन्तन के विभिन्न पक्षों को जानने के लिए चर्चा होती है। प्रारूपकार प्राय: अपनी अनुवाद परिस्थितियों तथा तत्संबंधी चिन्तन से प्रेरित होने के कारण प्रक्रिया के कुछ ही पक्षों पर विशेष बल दे पाते हैं। सर्वांगीणता में इस न्यूनता की पूर्ति इस रूप में हो जाती है कि, विवेचित पक्ष के संबंध में पर्याप्त जानकारी मिल जाती है। इस दृष्टि से बाथगेट (1981) द्रष्टव्य है। अनुवाद प्रक्रिया के प्रारूपों की रचना के पीछे दो प्रेरक तत्त्व प्रधान रूप से माने जाते हैं - मानव अनुवादकों का प्रशिक्षण तथा यन्त्र अनुवाद का यान्त्रिक पक्ष। इन दोनों की आवश्यकताओं से प्रेरित होकर अनुवाद प्रक्रिया के सैद्धान्तिक स्पष्टीकरण प्रस्तुत किए गए। बहुधा केवल मानव अनुवादकों के प्रशिक्षण की आवश्यकता से प्रेरित अनुवाद प्रक्रिया प्रारूपों से होती है। अनुप्रयोगात्मक आयाम में इनकी उपयोगिता स्पष्ट की जाती है।

सामान्य सन्दर्भ

अनुवाद प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु है लक्ष्यभाषा में मूलभाषा पाठ के अनुवाद पर्याय प्रस्तुत करना। यह प्रक्रिया एकपक्षीय होती है -मूलभाषा से लक्ष्यभाषा में। परन्तु भाषाओं की यह स्थिति अन्त:परिवर्त्य होती है -जो प्रथम बार में मूलभाषा है, वह द्वितीय बार में लक्ष्यभाषा हो सकती है। इस प्रक्रिया को सम्प्रेषण सिद्धान्त से समर्थित मानचित्र द्वारा भी समाझाया जाता है, जो निम्न प्रकार से है (न्यूमार्क 1969) –

(1) वक्ताध्लेखक का विचार – (2) मूलभाषा की अभिव्यक्ति रुढियाँ (3) मूलभाषा पाठ– (4) प्रथम श्रोताध्पाठक की प्रतिक्रिया (5) अनुवादक का अर्थबोध (6) लक्ष्यभाषा की अभिव्यक्ति रुढियाँ (7) लक्ष्यभाषा पाठ घ (8) द्वितीय श्रोता/पाठक की प्रतिक्रिया।

इस प्रारूप के अनुसार अनुवाद प्रक्रिया के कुल आठ सोपान हो सकते हैं। लेखक या वक्ता के मन में उठने वाला विचार मूलभाषा की अभिव्यक्ति रूढियों में बँधकर मूलभाषा के पाठ का आकार ग्रहण करता है, जिससे पहले (मूलभाषा के) श्रोता या पाठक के मन में वक्ता/लेखक के विचार के अनुरूप प्रतिक्रिया प्रकट होती है। तत्पश्चात् अनुवादक अपनी प्रतिभा, भाषाज्ञान और विषयज्ञान के अनुसार मूलभाषा के पाठ का अर्थ समझकर लक्ष्यभाषा की अभिव्यक्ति रूढ़ियों का पालन करते हुए लक्ष्यभाषा के पाठ का सर्जन करता है, जिसे दूसरा (लक्ष्यभाषा का) पाठक ग्रहण करता है। इस व्याख्या से स्पष्ट होता है कि सं. 5, अर्थात् अनुवादक का सं. 3, 4 और 1 इन तीनों से संबंध है। वह मूलभाषा के पाठ का अर्थबोध करते हुए पहले पाठक के समान आचरण करता है और मूलभाषा का पाठ क्योंकि वक्ता/लेखक के विचार का प्रतीक होता है, अतः अनुवादक उससे भी जुड़ जाता है।

इसी प्रारूप को विद्वानों ने प्रकारान्तर से भी प्रस्तुत किया है। उदारण के लिए नाइडा, न्यूमार्क, और बाथगेट के अंशदानों की चर्चा की जाती है।

अनुवाद प्रक्रिया के प्राविधिक मूल तत्त्व

अनुवाद प्रक्रिया के बारे में भलीभांति यह समझ लेना चाहिए कि अनुवाद प्रक्रिया अपने आप में जितनी महत्त्वपूर्ण है, उतनी ही परतंत्र भी है। मूल स्रोत भाषा का रचनाकार अपने आपमें जितना स्वतंत्र होता है, लक्ष्य भाषा का अनुवादक उतना ही परतंत्र होता है। उसे न तो मूल कथन की भाव-व्यंजना का अधिकार होता है और न व्याख्या का, वह एक ओर मूल लेखक के भाव पक्ष से बँधा होता है तो दूसरी ओर लक्ष्य भाषा की अभिव्यक्तिक सीमाओं के बन्धन में भी होता है, क्योंकि भाषाओं की भावाभिव्यक्ति, न केवल अपने रचना शिल्प में ही भिन्न होती है, अभिव्यक्ति के उपागमों में भी भिन्न होती है। इसी कारण अनुवाद प्रक्रिया का प्राविधिक रूप समान-सा लगते हुए भी एक जैसा नहीं होता। अनुवादक को स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा के समानान्तरण स्वरूप के साथ-साथ उसके विभिन्नता स्वरूप का भी ध्यान रखना अनिवार्य होता है।

अनुवाद में यह कमी प्रायः देखने को मिलती है। इसी कारण प्रायः विज्ञ पाठक एक कृति के विभिन्न अनुवादकों द्वारा किये गये अनुवादों में से 'अच्छा अनुवाद' खोजते हुए देखे जाते हैं। ऐसे पाठकों में प्रायः वह पाठक आते हैं, जिन्हें स्रोत भाषा का भी 'कुछ' ज्ञान होता है। अनुवाद प्रक्रिया में अनुवादक की अपनी

रचना शैली भी बाधक होती है। प्रायः ही कोई ऐसा अनुवादक होता है, जो मूल लेखक की रचना शैली का अनुकरण कर सकता हो। वास्तविक बात यह है कि स्रोत रचना का विशिष्ट सौन्दर्य उसकी रचना शैली में ही निहित होता है। प्रायः यह देखा जाता है कि एक बात को विभिन्न लेखों द्वारा कहा जाता है, परन्तु वही बात किसी विशेष लेखक से स्वयमेव जुड़ जाती है। अनुवादक इस बात को अच्छी तरह जानता है कि उसका दायित्व यह भी होता है कि वह इस बात को उसी रूप में अनूदित भाषा में भी उसकी मूल प्रस्तुति को सुरक्षित करने की चेष्टा करे। अनुवाद प्रक्रिया की प्राविधिकता की और इससे संकेत किया जा सकता है। अनुवाद अन्तःसंप्रेषण की प्रक्रिया ही नहीं, वह इस स्तर पर अन्तः भाव संवेदना की प्रक्रिया भी बन जाती है। वह इसी रूप में मानव की मूलभूत एकता, व्यक्ति चेतना तथा विश्व चेतना की मानक रूप प्रविधि सिद्ध हो सकती है। अनुवाद तत्त्ववेत्ता **थियोडोर सेवरो** इसे सम्भव मानते हैं, असम्भव नहीं, क्योंकि वह कहते हैं कि "सभी देशों के मानव मूल रूप में एक ही वंश (स्पीशीज) के हैं। यह बात जीव विज्ञान की मान्यतानुसार सत्य भी हो सकती है और नहीं भी, लेकिन मनोवैज्ञानिक स्तर पर ऐसा प्रतीत होता है कि समान परिस्थितियों, वातावरण और देश-काल के संदर्भों में मनुष्य की भावात्मक तथा क्रियात्मक चेष्टाएँ समान ही होती हैं। शायद भाषाओं के गहन स्तरों पर पाई जाने वाली मान की मूलभूत एकता इसका प्रमाण भी है।

जार्ज स्टीमर ने अनुवाद की प्रक्रिया में समाहित सूक्ष्म तत्त्वों की और इस क्रम की बखूबी संकेत किया है–"अनुवाद करने का तात्पर्य है दो भाषाओं की बाह्य भिन्नताओं की तह में जाकर मानवीय अस्तित्त्व के साधन तत्त्वों को प्रकाश में लाना। मानव की खोई सार्वभौम सामान्य भाषा की मिथकीय कल्पना यहाँ चरितार्थ होती है।" ऐसा यदि कभी था तो, सांस्कृतिक परिवेशों में व्यतिरेक ने भाषायी भिन्नता पैदा की, उनकी संरचना तथा अभिव्यक्ति व्यंजना में अन्तर आया, परन्तु अनुवादक को उसे समझ पाना इतना सरल नहीं होता कि वह इस अभिव्यक्तिव्यंजना पर गहराई से विचार कर सके। इसकी कोई प्रविधि भी नहीं है। फिर भी सांस्कृतिक सेतु के निर्माण का दायित्व लेकर अनुवादक अपना कार्य नहीं करता है, परन्तु यह भी ध्यान रखना चाहिए कि अनुवादक यह कार्य किसी ऐसे दायित्व का निर्वाह करने के लिए ही अनुवाद कार्य नहीं करता, कभी-कभी तो वह यंत्रवत् सरकारी अनुवाद संस्थाओं से जुड़ा होता है, जिनका उद्देश्य मूलरूप में अपने साहित्य द्वारा अपने सांस्कृतिक वैभव का प्रकाश फैलाना होता

है। प्रायः ऐसे संस्थानों में विश्वबन्धुत्व के दायित्व को अनुभव करने वाले अनुवादक नहीं होते, अतः वह अनुवाद कार्य की प्रक्रिया को एक स्तरीय महत्त्व का कार्य समझकर स्तरीय प्रविधि से ही अनुवाद कार्य करते हैं, परन्तु ऐसा होते हुए भी अनुवादक की व्यक्तित्त्व अपने ज्ञान की परितृप्ति के लिए अपनी प्राविधिक चेष्टाएँ प्रकट न करता हो, संभव है ऐसा नहीं हो और अनुवाद की प्रक्रिया में अनुवाद कार्य के भेद स्वयं ही अपेक्षानुसार प्रकट हो।

किसी भी अनुवादक के लिए यह प्राथमिक कार्य होता है कि वह अनुवाद सामग्री को स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में सुचारु रूप से पुन प्रस्तुत करे। वह भी जानता है कि एक भाषा से दूसरी भाषा में भाषान्तर करना एक चुनौती भरा कार्य है। विज्ञ अनुवादक इस चुनौतीपूर्ण कार्य को, अर्थात् एक भिन्न प्रकृति-परवेश को उससे भिन्न प्रकृति-परिवेश में परकाया प्रवेश क्रिया को कुशलतापूर्वक सम्पन्न कर भी देता है। उसी यह कुशलता प्रक्रियात्मक रूप में उसकी प्राविधिकता को, उसके दोनों भाषाओं की वाक्य, पदबन्ध, रचनाशैली, ध्वनि, अर्थ, अर्थ-लय, शब्द-रूप, शब्द-गठन-विन्यास, अलंकार, छन्द, लोकोक्ति, मुहावरों की प्रयोग-विधि में प्रकट करती है। वह अनुवाद प्रक्रिया को एक प्रविधात्मक रूप देता है, जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसमें विशेष रूप से सांस्कृतिक, ऐतिहासिक तथा प्रकृतिगत विशेषता परिप्रेक्ष्यों का सामंजस्य करना एक अनिवार्य आवश्यकता होती है। इसका उद्देश्य केवल यही होता है कि स्रोत भाषा की विशिष्टताओं के प्रभाव को लक्ष्य भाषा की विशिष्टताओं के प्रभाव भावाभिव्यक्ति और अर्थ अभिव्यक्ति में निस्तेज न कर दे। इस कार्य को कुशल अनुवादक इस प्रकार भी सम्पन्न कर देते हैं कि स्रोत-भाषा-संरचना की सशक्त प्रभावशैली का रूपान्तरण उसी रूप में लक्ष्य-भाषा-संरचना की विशेषताओं में समायोजित करके उसे अनुकरणीय बना देता है और अनुवाद प्रक्रिया में नई प्राविधिकता का जन्म होता है।

इस प्रकार के संचरण और संक्रमण से भाषा समृद्ध भी होती है, लेकिन यह स्रोत भाषा की अभिव्यक्ति क्षमता और लक्ष्य भाषा में स्रोत की संपूर्ण अभिव्यक्ति को प्रकट करने की क्षमता से कम या अधिक होती है। ऐसा होने के कारण अनुवाद कार्य में घपला खड़ा हो जाता है। लक्ष्य भाषा में यदि स्रोत-भाषा की शब्द-शक्तियों को पकड़ने की सही स्थिति न हुई तो भाषान्तर या व्याख्यात्मक आवृत्ति में बड़ा अनर्थ हो जाता है।

संस्कृत में भाषा के अंदर साधन और साध्य के संदर्भ शब्द और अर्थ के इस अनर्थ से बचने के लिए भारतीय वैयाकरणों ने अभिधा-लक्षणा एवं व्यंजना नामक शब्द-शक्तियों पर विस्तार से विचार किया है। तीनों शब्द-शक्तियों के सूक्ष्म भेद-प्रभेद को समझने के लिए इन तीन शब्द-शक्तियों के अनकानेक भेद उदाहरण देकर प्रस्तुत किए हैं। शब्द और अर्थ की पारस्परिकता, भिन्नता या स्वतंत्रता पर विचार करते हुए स्पष्ट कहा गया है–"योयं शब्दः सोर्थः स शब्दः" इति। शब्दार्थ के शक्तिवाद के लिए वैयाकरणें ने (जाति, गुण, क्रिया एवं यदृच्छा शब्द) शब्द-चतुष्टयवाद का खुलकर पक्ष लिया है। इस धारणा के मूल में यह तथ्य निहित हे कि किसी भी भाषा को पढ़-सुनकर स्रोत-भाषा में अनुवाद करते समय चूक होना सम्भव होता है। स्रोत-भाषा की अर्थ-ध्वनियाँ, नादात्मक झँकारें तथा अनुकरणात्मक और अनुरणनात्मक संगतियों में अभिव्यक्तिगत अन्तर होने के कारण लक्ष्य भाषा में स्रोत-भाषा का समानार्थक अनुवाद सम्भव नहीं होता। स्रोत भाषा के अर्थ को लक्ष्य-भाषा या तो बढ़ाती है या संकुचित करती है, या घटाती है या सन्दर्भन्च्युत कर देती है या एकदम भिन्नार्थक स्थिति में पहुँचा देती है। यही कारण है कि नुवादक सम्पूर्ण निष्ठा से दोनों के आस-पास की अर्थ-सम्भावनाअें से अर्थ उजागर कर पाता है। इसलिए अनुवाद में मूल भाषा और अनुदित भाषा में समानार्थक नहीं वरन् निकटार्थक स्थिति कायम होती है। अनुवाद एक प्रकार से समानता की कला न बनकर सम्भावनार्थक समझौते की प्रविधात्मक कला है। इसी कोण से अनुवाद में 'सम्पूर्णता' की माँग एक गलत नारा बनकर रह जाती है, क्योंकि लक्ष्य-भाषा और स्रोत-भाषा के बीच का काल-भेद, देश-भेद, जाति-भेद आदि की दूरी या निकटता के प्रश्न का अनुवाद पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इसका उदाहरण शेक्सपियरिसन ट्रेजेडी है, जिनको आज बीसवीं शताब्दी में हिन्दी-अनुवाद करते समय यही समस्या रहती है, जिसे शेक्सपियर के नाटक 'हेमलेट के द्वारा कवि बच्चन तथा 'मैकबेथ' द्वारा कवि रघुवीर सहाय के अनुवाद को पढ़ते हुए पाठक अवगत होता है।

यह स्वाभाविक शर्त है कि अनुवाद में अनवादक को मूल भाषा और लक्ष्य भाषा का पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए। उसे विषय-वस्तु (Subject matter) विशेष की पर्याप्त जानकारी हानी चाहिए। वह जिस भाषा से अनुवाद कर रहा है और जिसमें वह अनुवाद कर रहा है, उन दोनों की पर्याप्त पकड़ के साथ-साथ उसमें दोनों में सोचन-विचारने और गहन चिन्तन करने की पर्याप्त क्षमता होनी चाहिए। इसमें कोश एक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं, किन्तु वे विषय की समझ और

चिन्तन का तर्क-शक्ति का स्थान नहीं ले सकते। अनुवाद का स्वरूप अगर बहुत ज्यादा कोशगत हो तो वैसी स्थिति में उसे अच्छा नहीं माना जा सकता है। अनुवाद का बेहतर रूप इन अनुवादकों के अनुवादों में दिखाई देता है, जो नैसर्गिक प्रतिभा से जुड़े होते हैं।

अनुवाद की प्राविधिकता की सफलता केवल स्रोत-भाषा के पाठ को लक्ष्य-भाषा के समानार्थकों द्वारा प्रतिस्थापित करने में ही नहीं माना जाती है, यह अनेक ऐसे सन्दर्भों और सांस्कृतिक अर्थ-अभिप्रायों को लक्ष्य-भाषा में अन्तरित करना भी है, जो लक्ष्य-भाषा की सस्कृति में मौजूद ही नहीं है, परन्तु सांस्कृतिक अर्थ-अभिप्राय और अर्थ-गुच्छ स्रोत-भाषा में ठीक वैसे के वैसे उपलब्ध नहीं होते हैं। अत: इन्हें अभिव्यक्त करना असम्भव-सा लगने लगता है। मूल समस्या तो यही है कि स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा में पूरी तरह समानतापरक या समान अभिव्यक्तियाँ उपलब्ध नहीं हो पाती। इस स्थिति से बचने के लिए अनुवादक स्रोत-भाषा और लक्ष्य-भाषा में समानता लाने की चेष्टा में स्रोत-भाषा के ऐसे प्रयोग भी लक्ष्य-भाषा में हू-ब-हू लाने की भयंकर भूल कर बैठता है, जिन शब्दों को लख्य भाषा की प्रकृति के काफी अनुकूल नहीं माना जा सकता है।

इन वजहों से लक्ष्य भाषा में होने वाले अनुवाद में कई बार कृत्रिमता की अभिव्यक्ति भी समाहित हो जाती है। जैसे अंग्रेजी का एक वाक्य है—`The man, who does not see that the good of every living creature is his own good, is a fool.*'वह आदमी, जो यह नहीं देखता कि प्रत्येक जीवधारी की भलाई उसकी अपनी भलाई है मूर्ख है।' किन्तु यह हिन्दी का सहज वाक्य नहीं है। हिन्दी की प्रवृत्ति के अनुसार यह वाक्य होना चाहिए—'व आदमी मूर्ख है, जो प्रत्येक जीवधारी की भलाई में अपनी भलाई नहीं देखता।' ऐसी भूलों से बचने के लिए जरूरी है कि अनुवादक को स्रोत और लक्ष्य-भाषा की प्रकृति और परिवेश, सांस्कृतिक-ऐतिहासिक पीठिका का प्रामाणिक एवं गहरा ज्ञान हो।

अनुवादक के लिए आवश्यक है कि लक्ष्य भाषा मूल भाषा की तरह ही सुबोधता, प्रांजलता और प्रवाहम्यता को समावेश हो। इसके साथ-साथ अनुवाद में शाब्दिक स्वाभाविकता और परिशुद्धता भी हो।

यह भी महत्त्वपूर्ण है कि अनूदित भाषा में मूल भाषा की तरह ही सृजनात्मकता के तत्त्व विद्यमान हो। इस भाषा की गत्यात्मकता में सहजता और स्वाभाविकता का समावेश आवश्यक है। इसका सफल संयोजन होने पर मूल तथा अनुवाद की तुलना करने पर यह पता लगना असम्भव-सा हो सकता है कि

कौन-सा मूल है और कौन-सा अनुवाद। अनुवाद को-चाहे वह साहित्यिक अनुवाद करता हो, या तकनीकी या वैज्ञानिक अनुवाद, सफल अनुवादकर्ता के रूप में प्रतिष्ठित होने के लिए इस तथ्य को अंगीकार करना चाहिए।

एक अच्छे अनुवाद के लिए जरूरी है कि वह इन तीन गुणों से अनुवाद को भलीभांति करने में कुशल हो–(1) अनुवाद सामग्री का पर्याप्त ज्ञान, (2) जिस भाषा में अनुवाद करना है, उसमें पर्याप्त अधिकार का प्रश्न, (3) इन दोनों के बीच की प्रक्रिया। अनुवाद संबंधी समस्याओं पर किये गये सभी अध्ययन इस बात को स्वीकार करते हैं कि अनुवादक के लिए पाठ-सामग्री की ज्ञानात्मक चेतना, भाषा और संवेदना, संरचनात्मक गठन, पद-संबंध, अन्तर्गठन, पदांशों की आवृत्ति, वाक्य-गठन आदि की सम्पूर्ण जानकारी आवश्यक है, परन्तु यह कितना कठिन है, स्वयमेव समझा जा सकता है।

किसी भी अनुवादक के लिए मूल की व्याख्या उसके अनुवाद कर्त्तव्य की सीमाओं में शामिल है। अनुवादक एक व्यायात्मक कला (InterpretativeArt) है, किन्तु अनुवादक ऐसी प्राविधिकता से बन्धन में बंधा हुआ व्याख्यात्मक कलाकार है, जो उस मूल में जिसे वह अपने शब्दों में प्रस्तुत करना चाहता है, रचा-बसा नहीं है। प्रत्येक व्यायात्मक कलाकार की भाँति अनुवादक का कार्य पराये सौन्दर्य-बोध को अपनी ज्ञानात्मक संवेदना में तादात्मीकृत करते हुए अन्तरित करने का है।

अनुवादक को भाषा के एक मौलिक कलाकार के रूप में भी देखा जाता है, जो अपनी सृजनात्मक प्रतिभा का उपयोग मूल स्रोत को एक नई सज्जा सम्पन्नता में देता है। अनुवादक भी आत्माभिव्यक्ति का इच्छुक होता है। वह भी पूरी साधना से पराए ढाँचे में अपना अनुभव 'फिट' कर देना चाहता है। यह अनुभव ऐतिहासिक, समाजशास्त्रीय, आत्मवृत्तान्तपरक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक या सांस्कृतिक किसी भी प्रकार का हो सकता है। इसलिए अनुवाद को इस प्रसंग में पुनर्सजन या पुनर्प्रस्तुतिकरण भी कहा जाता है।

अनुवादक के बारे में ऐसा कहा जाता है कि उसके पास मौलिक कहने के लिए कुछ नहीं होता, क्योंकि पाठ-सामग्री-परिवर्तन सम्भव नहीं है, पाठ सामग्री में चाहे परिवर्तन सम्भव नहीं हो परन्तु यह ध्यान रखना चाहिए कि अनुवादक जब अपनी ही सृजनात्मक अभिकल्पना से मूल भाव की भावाभिव्यक्तियों को उसकी मूल शब्द शक्ति को लाने के लिए किस शब्द-शक्ति और शैली का प्रयोग करता है वह उसकी मौलिक धारणा से प्रादुर्भूत होती है। अतः चाहे कोई

भी कहे अनुवादक एक साहित्यिक कलाकार है, जो अपने अनुभव की अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त रूप अपने से बाहर खोजता है। (The translator is a literary artist looking outside himself for the form suited to the experience he wished to express.) अनुवादक एक वैज्ञानिक भी है, जो अनुवाद प्रक्रिया की प्रविधात्मक भूमि भी स्वयं तैयार करता है। ऐसी स्थिति में यह दृष्टिकोण मूलत: गलत है कि अनुवादक एक उथला कलामर्मज्ञ या खोखला रूपवादी (empty formalist) होता है या वह सर्जक नहीं है। वह एक ऐसा भाषाशिल्पी होता है कि जिसके पास अपनी अभिव्यक्ति की कोई खास चीजें नहीं होती।

अनुवादक के परिप्रेक्ष्य में अनुवाद क्रिया को साहित्यिक अनुकरण के रूप में देखा जा सकता है। स्रोत भाषा की कविता अनुवादक के लिए कएक 'मॉडल' बन जाती है और वह मात्र अनुकरण से प्रेरित नहीं होता, बल्कि वैकल्पिक सादृश्य से प्रेरित होता है। वस्तु का आकर्षण उसे इतना आकृष्ट करता है कि वह अपनी वस्तु (Content) के अनुकूल रूप (Form) खोजकर तादात्म्य स्थापित कर लेता है। इस प्रकार वह एक प्राविधिक प्रक्रिया को जन्म देता है, जो उसकी अपनी ही होती है और उसके नियंत्रण में होती है। अत: अनुवाद मनोवैज्ञानिक रूप से एक आभ्यन्तरीकरण की प्रक्रियात्मक प्रविधि है—पलायन की नहीं। इसमें निवैयक्तिकरण की प्रवृत्ति के साथ तादाम्यीकरण की प्रक्रिया का भी समावेश होता है।

अनुवाद का सिद्धांत विभिन्न भाषाओं के बीच एक विशिष्ट प्रकार के संबंध की स्थापना करता है। अत: अनुवाद, तुलनात्मक भाषा-विज्ञान की एक शाखा है। किन्हीं दो भाषाओं-बोलियों के बीच अनुवाद समानार्थकता (Translation equivalence) खोजी जा सकती है और अनुवाद किया जा सकता है, यह हो सकता है कि स्थानिक, कालिक, सामाजिक या अन्य किसी प्रकार से संबंधित नहीं हो।

अनुवाद में यह कोई जरूरी नहीं है कि दिशात्मक होने के कारण भाषाओं के बीच के संबंध में सदैव संतुलन विद्यमान हो, परन्तु अनुवाद प्रक्रिया के रूप में तो वह एक-दिशात्मक ही होता है और उसकी प्रक्रिया सदैव एक निर्दिष्ट दिशा में होती है, क्योंकि वह सदैव स्रोत-भाषा से लक्ष्य-भाषा की दिशा में होता है। इन तीन विद्वानों के द्वार अनुवाद को इस प्रकार परिभाषित किया गया है—

प्रसिद्ध विद्वान **डॉटेंस्ट** ने अनुवाद को भाषा के प्रायोगिक अनुप्रयुक्त विज्ञान की शाखा के रूप में देखा जा सकता है। प्रतिमानिक प्रतीकों के एक समूह से दूसरे समूह में अर्थ को अन्तरित करती है। (Translation is that branch of applied science of language which is especially concerned with the problem--or the fact--of the transference of meaning from one set of patterned symbols...into another set of patterned symbols.)

डांटेस्ट के अलावा **जे.सी केटफोर्ड** ने भी अनुवाद को परिभाषित किया है–"अनुवाद स्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री को लक्ष्य-भाषा के समानार्थी पाठ में प्रतिस्थापित करने की प्रक्रिया है।" (The replacement of textual material in one language (S L) by equivalent textural material in another language (TL) ".

अनुवाद के बारे में **रोनाटो पोगिआलो** का यह कथन भी समीचीन है कि, 'अनुवाद एक व्याख्यात्मक कला है।' (Translation is an interpretative art.)

अनुवाद में स्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री को संपूर्णता में थाहना जरूरी होता है। इसके बिना प्राविधिक रूप में स्रोत भाषा की सामग्री को प्रामाणिकता से लक्ष्य भाषा में प्रतिस्थापित करना संभव नहीं होता, परन्तु सही प्रतीकों का लक्ष्य-भाषा में प्रतिस्थापन कार्य सम्भव है। भाषा के अनेक स्तरों पर असमानार्थी लक्ष्य-भाषा सामग्री द्वारा प्रतिस्थापन किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अन्तिम प्रघटन के रूप में अनेक बार कुछ भी प्रतिस्थापित न किया जा सकने पर स्रोत-भाषा की पाठ-सामग्री को लक्ष्य-भाषा में सामान्य सरल रूप से रूपांतरित कर देना भी ठीक रहता है।

अनुवाद में लक्ष्य भाषा और मूल भाषा में पार्थक्यता के अवयव सादृश्यता तथा पाठ समानार्थकता के बीच खासकर निहित होते हैं। किसी भी लक्ष्य-भाषा की पाठ-समानार्थकता में पाठ सदैव विशिष्ट ध्यान की अपेक्षा करता है, जिसे विशिष्ट स्थितियों में प्रस्तुत किया गया हो। उसे स्रोत-भाषा के समानार्थक शब्दों के पाठ या पाठांश के मूलार्थ को सही स्थितियों में ग्रहण करने के लिए लक्ष्य-भाषा की सामान्य सादृश्यता, जिसमें वाक्य, वाक्य-रचना, पद-बन्ध, संरचना, संरचनात्मक तत्त्व आदि होते हैं, अधिकाधिक निकटता से ही ग्रहण किया जा सकता है। इस भाषा की विशिष्ट संरचनात्मक प्रकृति के रूप में समझा जा सकता है।

अनुवाद की प्रक्रिया में पाठ समानार्थकता तथा बाहरी सादृश्य में जो भिन्नता पाई जाती है उसमें अंतर को समझना जरूरी है। समानार्थक को खोजना अनुवादक की दो भाषाओं की गहरी जानकारी और भाषा की अधिकारी क्षमता पर निर्भर रहता है। लम्बे पाठ के अनुवाद के दौरान प्रायः प्रयुक्त होने वाले स्रोत-भाषा के शब्दों के लक्ष्य-भाषा में समानार्थक अक्सर एक से अधिक हुआ करते हैं। सन्दर्भ एवं प्रसंग के अनुसार भी उनमें अर्थ-भेद हो जाना स्वाभाविक है। किसी भी शब्द का कोई भी शब्द अन्तिम समानार्थी शब्द नहीं माना जा सकता। अनुवाद में समानार्थकता की संभावनाएँ शब्दों को खोजने के अनुवादक के यत्न को प्रोत्साहित करती है।

अनुवाद प्रक्रिया के मार्ग-निर्देशक सूत्र

कई विद्वान अनुवाद-प्रक्रिया को इस प्रकार की क्रिया के रूप में देखते हैं, जिसमें इसका स्वरूप भलीभांति स्पष्ट होता है। अनुवाद को कुछ विद्वान संप्रेषण की क्रिया के रूप में भी देखते हैं। कई विद्वान अनुवाद-प्रक्रिया को अनुवाद करने की कला के रूप में पहचानते हैं तथा उसकी प्रविधि किन वैज्ञानिक तत्त्वों से निहित होनी चाहिए इस पर विचार करते हैं। अनुवाद के स्वरूप को अनुवाद की प्रक्रिया स्पष्ट करती है और जिन संप्रेषण तत्त्वों से युक्त होकर अनुवाद का स्वरूप पुष्ट होता है, उन्हें हमारे सामने प्रस्तुत करती है। अनुवाद कई तत्त्वों से युक्त होकर स्वरूपगत स्तर पर सशक्त संप्रेषण प्रस्तुत करता है। रेखाचित्र अनुवाद को कौन से निदेशक सिद्धान्त संप्रेषण शक्ति प्रदान करते हैं, उसे सौष्ठावित करने के लिए अनुवादक को क्या करना चाहिए, यह सभी बातें अनुवाद प्रक्रिया और उसकी प्रविधि के अध्याय है। अनुवाद कला मनुष्य की संप्रेषण आवश्यकताओं के साथ ही जन्मी और पली-बढ़ी है, इन्हीं के कारण मानव जीवन के इतिहास में उसका सदा से वर्चस्व भी रहा है। अनुवाद में मौलिक सृजनात्मकता के तत्त्व होते हैं। अनुवाद में किसी बात की एक भाषा में पुनरावृत्ति करने में सृजनात्मकता के तत्त्व दूसरी भाषा में उसके पुनर्प्रकटीकरण में अपना चमत्कार दिखाते हैं।

अनुवाद में विविध विषयों का समावेश होता है। इसमें वैज्ञानिक विषयों के अलावा जीवन के रोजमर्रा के प्रसंगों से जुड़े सामान्य विषय तक शामिल हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में यदि कहें कि वह सभी कुछ जिनको हम दूसरों तक पहुँचाना चाहते हैं, या दूसरों से ग्रहण करना चाहते हैं, अनुवाद क्रिया के आश्रित

होते हैं। अत: अनुवादक मानव-जीवन की बहुत महत्त्वपूर्ण सेवा करता है, लेकिन उसका यत्न तभी सफल होता है जब स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अनुवाद की प्रक्रिया में अनुवादक इन तीन बातों का समुचित रूप से ध्यान रखें–

(1) विषय के लेखक या वक्ता ने क्या कहा है ?

(2) विषय, जो रचित रूप में जिसके द्वारा प्रस्तुत हुआ है, उसके बारे में वह स्वयं क्या सोचता है तथा क्या उसके मर्म को उसने ह्रदयंगत कर लिया है ? तथा

(3) क्या वह उसके मूलभाव तथा मर्म-व्यंजना को यथारूप में लक्षित भाषा या वाणी का रूप दे सकता है ?

इस बात को समझने के लिए अनुवादक हेतु जरूरी है कि वह लेखक के आधार-वाक्य या कला के आगमनात्मक (Inductive) तथा निगमनात्मक (Deductive) तर्कों और उनके निष्कषों के समग्र रूप पर भी ध्यान देना आवश्यक है, क्योंकि अनुवादक को लेखक के लेखन या वक्ता के वक्तव्य संदर्भ में अनुवाद को पक्षान्तरित करना होता है। अनुवादक से यह स्वाभाविक रूप में अपेक्षित होता है कि वह स्रोत-लेखन या वक्तव्य का र्यान्तरण बिना उसके चरित्र तत्त्व में फेरबदल किये ही करेगा, इसलिए इस सावधानी की सुरक्षा हेतु अनुवादशास्त्रियों ने अनुवाद-प्रक्रिया संबंधी कुछ दिशा-निर्देश दिये हैं, हालाँकि इन्हें सिद्धान्त रूप में तो अंगीकार नहीं किया जा सकता, क्योंकि अनुवाद संबंधी कोई मानक-क्रिया निर्धारित करना उतना ही कठिन है, जितना कि संगीत-कला, चित्रकला या काव्य-कला पर नियम-प्रविधि का निरूपण करना। इसलिए अनुवाद में स्वभावत: ऐसी बातें अपेक्षित होती हैं। एक अनुवादक के लिए यह जरूरी है कि वह अनुवाद में इन बातों का विशेष रूप से ध्यान रखें–

अनुवादक इसका ध्यान रखे–

(1) अनुवाद में मानसिक क्रमबद्धता, एकरूपता तथा सुबोधगम्यता लाने के लिए अनुवाद करते समय एक-एक पैराग्राफ पढ़कर अनुवाद करते जाने के बजाय सम्पूर्ण स्रोत-भाषा से समग्रता में परिचय बेहतर होता है।

(2) किसी भी नयी जटिल, अपरिचित पाठ-सामग्री पर अनुवाद कार्य आरम्भ करने से पहले स्रोत-भाषा में उसके नवीनतम ग्रन्थ सूचीपरक सन्दर्भों की खोज कर लेनी चाहिए ताकि सन्दर्भों से पारिभाषिक समस्याओं का समाधान किया जा सके। प्राय: लक्ष्य-भाषा में प्रत्यक्ष सन्दर्भ उपलब्ध नहीं

हो पाते, इस स्थिति में विश्वकोशों तथा विषय से संबंधित कोशों से सहायता लेनी चाहिए। विशेषज्ञों से परामर्श लेना भी उचित होता है।

(3) नये शब्दों, तकनीकी मुहावरों, वनस्पति-विज्ञान की शब्दावली, व्यावसायिक नामों, उत्पादों, संघटनात्मक संकल्पनापरक पारिवर्णी शब्दों (।बतवदलउ) के दोनों भाषाओं में समकक्षों को अन्योन्य सन्दर्भों के साथ सूचीबद्ध रूप में रखना बहुत सुविधाजनक होता है। इन सूचियों को समय-समय पर अद्यतन बनाते रहने से विभिन्न विषयों की नवीनतम शब्दावली अनुवादक के पास हर समय रहेगी।

(4) समसामायिक पुस्तकों, निबंधों, पत्र-पत्रिकाओं के अनुवाद के संबंध में यदि स्वयं लेखक से सम्पर्क स्थापित किया जाए तो अनुवाद सर्वथा प्रामाणिक तथा उपयुक्त हो जाता है, क्योंकि तकनीकी, वैज्ञानिक एवं साहित्यिक विषयों के अनुवाद या प्रकाशन के बारे में लेखक को पता चलता है, तो वह सामान्य रूप से हर संभव रूप से उसे अद्यतन रूप देने में महत्त्वपूर्ण साबित होता है।

(5) अनुवादक के लिए यह भी आवश्यक है कि वह स्रोत भाषा की सामग्री से भलीभांति खुद को अवगत कराए। इसे स्रोत भाषा से तादात्म्यीकरण के रूप में देखा जा सकता है। उसका यह प्रयास उसे लक्ष्य-भाषा में निर्वैयक्तिकता के साथ पुनर्सृजित करने में बहुत सहायक होता है। अपनी भाषा से विदेशी भाषा में अनुवाद करने पर विचार-क्षेत्र में परिवर्तन करना होता है, क्योंकि उसके अपने जीवन-ढंग, रहन-सहन, आचार-विचार-व्यवहार आदि सभी से परिचित एवं विलक्षण होते है। तादात्म्यीकरण की प्रक्रिया की अनुवाद में बड़ी भूमिका होती है।

(6) भाषा अपने आस-पास के परिवेश से काफी प्रभावित होता है। इसलिए स्रोत तथा लक्ष्य-भाषाओं की परिस्थितिजन्य स्थितियों से अनुवादक को अवगत रहना उपयुक्त होता है।

(7) साहित्यिक और मानविकी से संबंधित विषयों के अनुवाद में भाषागत सांस्कृतिक सन्दर्भों की जानकारी प्रत्येक अनुवादक को होना एकदम अनिवार्य है, क्योंकि सांस्कृतिक संघर्ष और द्विविधाएँ भाषा पर विशेष छाप डालती है।

(8) अनुवादक को इन बातों को समझना खासकर जरूरी है कि वह विषय को ध्यान में रखते हुए उसका अनुवाद किस प्रकार करे। अनुवाद के प्रकारों पर ध्यान देना उसके लिए पूरी तरह उचित रहता है।

अनुवाद स्मृति

अनुवाद स्मृति (translation memory, or TM) एक डेटाबेस है, जिसमें स्रोत भाषा के किसी खण्ड (वाक्यांश, वाक्य, मुहावरा, अनुच्छेद आदि) के संगत लक्ष्य भाषा का खण्ड भण्डारित रहता है। स्रोत भाषा एवं लक्ष्य भाषा के ये युग्म पहले से मानव अनुवादकों द्वारा तैयार किये गये होते हैं। अनुवाद स्मृति में शब्द और उसका अनुवाद नहीं भण्डारित किया जाता, बल्कि ये अनुवाद शब्दावली में दिये गये होते हैं। अनुवाद-स्मृति का उपयोग मानव अनुवादकों की सहायता करने के लिए किया जाता है। अनुवाद-स्मृति का प्रयोग आमतौर पर कम्प्यूटर सहायित अनुवाद (CAT), शब्द संसाधक प्रोग्रामों, शब्दावली-प्रबंधन प्रणालियों, बहुभाषी शब्दकोशों तथा 'कच्चे' मशीनी अनुवाद के साथ मिलकर किया जाता है (न कि अकेले)।

उदाहरण

अनुवाद-स्मृति में 'Don't loose temper' के लिए 'क्रोधित मत हो' तथा 'Do come tomorrow' के लिए 'कल जरूर आना' संचित किया जा सकता है।

किसी बड़े टेक्स्ट (पाठ) का अनुवाद करते समय मशीन देखती है कि इसका कोई अंश (या उससे मिलता-जुलता खण्ड) अनुवाद-स्मृति में मौजूद है या नहीं। यदि है तो यह स्मृति से ले लिया जाता है और माना जाता है कि अनुवाद शत-प्रतिशत शुद्ध हो गया, जो खण्ड स्मृति में नहीं पाये जाते उन्हें अन्य विधि का सहारा लेते हुए अनुवाद किया जाता है। वे प्रोग्राम जो 'अनुवाद स्मृति' फाइल के निर्माण, उसको व्यवस्थित करने, उसमें नये अनुवाद-युग्म जोडने, अनुवाद-युग्म हटाने, एक प्रकार की अनुवाद-स्मृति फाइल को दूसरे प्रकार में बदलने आदि का कार्य करते हैं उन्हें अनुवाद स्मृति प्रबंधक कहते हैं।

4

द्विभाषिया प्रविधि : विस्तृत फलक

अनुवाद सिद्धान्त का एक विकासमान आयाम है अनुसन्धान की प्रवृत्ति। अनुवाद सिद्धान्त की बहुविद्यापरक प्रकृति के कारण विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ–भाषाविज्ञानी, समाजशास्त्री, मनोविज्ञानी, शिक्षाविद्, नृतत्त्वविज्ञानी, सूचना सिद्धान्त विशेषज्ञ–परस्पर सहयोग के साथ अनुवाद के सैद्धान्तिक अंशो पर शोधकार्य में रुचि लेने लगे। अनुवाद कार्य का क्षेत्र बढ़ता गया। अलग–अलग संस्कृतियों के लोगों में सम्पर्क बढ़ा – लोग विदेशों में शिक्षा के लिए जाते, व्यापारिक–औद्योगिक संगठन विभिन्न देशों में काम करते, विभिन्न भाषा भाषी लोग सम्मेलनों में एक साथ बैठकर विमर्श करते, राष्ट्रों के मध्य राजनयिक अनुबंध होने लगे। इन सभी में अनुवाद की अनिवार्य रूप से आवश्यकता प्रतीत हुई और अनुवाद की विशिष्ट समस्याएँ उभरने लगी। इन समस्याओं का अध्ययन अनुवाद संबंधी अनुसन्धान का उर्वर क्षेत्र बना। एक ओर भाषा और संस्कृति तथा दूसरी ओर भाषा और विचार के मध्य संबंध पर अनुवाद द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर नया चिन्तन सामने आया।

मशीन अनुवाद तथा मौखिक अनुवाद के क्षेत्रों में नई–नई सम्भावनाएँ सामने आने लगी, जिसने इन क्षेत्रों में अनुवाद अनुसन्धान को गति प्रदान की। मानव अनुवाद तथा लिखित अनुवाद के परम्परागत क्षेत्रों पर भी भाषा अध्ययन

की नई दृष्टियों ने विशेषज्ञों को नूतन पद्धति से विचार करने के लिए प्रेरित किया। इन सब प्रवृत्तियों से अनवाद सिद्धान्त को प्रतिष्ठा का पद मिलने लगा और इसे सैद्धान्तिक शोध के एक उपयुक्त क्षेत्र के रूप में स्वीकृति प्राप्त होने लगी।

अनुवाद दशा में पहला सार्थक प्रयास एच. एच. विल्सन ने 1855 में 'ग्लोरी ऑफ ज्यूडिशियल एंड रेवेन्यू टर्म्स' के द्वारा किया। सन् 1961 में राजभाषा विधायी आयोग की स्थापना हुई। इसका काम अखिल भारतीय मानक विधि शब्दावली तैयार करना था। 1970 में विधि शब्दावली का प्रकाशन हुआ। इसका परिवर्द्धन होता आ रहा हे। इसका नवीन संस्करण 1984 में निकला। इस आयोग ने कानून संबंधी अनेक ग्रंथो का अनुवाद किया हे। कई न्यायालयों में न्यायाधीश हिंदी में भी निर्णय देने लगे है।

अनुवाद के क्षेत्र

आज की दुनिया में अनुवाद का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है। शायद ही कोई क्षेत्र बचा हो जिसमें अनुवाद की उपादेयता को सिद्ध न किया जा सके। इसलिए यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि आधुनिक युग के जितने भी क्षेत्र हैं सबके सब अनुवाद के भी क्षेत्र हैं, चाहे न्यायालय हो या कार्यालय, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी हो या शिक्षा, संचार हो या पत्रकारिता, साहित्य का होया सांस्कृतिक संबंध। इन सभी क्षेत्रों में अनुवाद की महत्ता एवं उपादेयता को सहज ही देखा-परखा जा सकता है। चर्चा की शुरुआत न्यायालय क्षेत्र से करते हैं।

न्यायालय –अदालतों की भाषा प्राय: अंग्रेजी में होती है। इनमें मुकद्दमों के लिए आवश्यक कागजात अक्सर प्रादेशिक भाषा में होते हैं, किन्तु पैरवी अंग्रेजी में ही होती है। इस वातावरण में अंग्रेजी और प्रादेशिक भाषा काबारी-बारी से परस्पर अनुवाद किया जाता है।

सरकारी कार्यालय –आजादी से पूर्व हमारे सरकारी कार्यालयों की भाषाअंग्रेजी थी। हिन्दी को राजभाषा के रूप में मान्यता मिलने के साथ ही सरकारी कार्यालयों के अंग्रेजी दस्तावेजों का हिन्दी अनुवाद जरूरी हो गया। इसी के मद्देनजर सरकारी कार्यालयों में राजभाषा प्रकोष्ठ की स्थापना कर अंग्रेजी दस्तावेजों का अनुवाद तेजी से हो रहा है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी –देश-विदेश में हो रहे विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी केगहन अनुसंधान के क्षेत्र में तो सारा लेखन-कार्य उन्हीं की अपनी भाषा मेंकिया

जा रहा है। इस अनुसंधान को विश्व पटल पर रखने के लिए अनुवाद ही एक मात्र साधन है। इसके माध्यम से नई खोजों को आसानी से सबों तक पहुँचाया जा सकता है। इस दृष्टि से शोध एवं अनुसंधान के क्षेत्र में अनुवाद बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

शिक्षा –भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश के शिक्षा-क्षेत्र में अनुवाद की भूमिका को कौन नकार सकता है। कहना अतिशयोक्ति न होगी कि शिक्षा का क्षेत्र अनुवाद के बिना एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता। देश की प्रगति के लिए परिचयात्मक साहित्य, ज्ञानात्मक साहित्य एवं वैज्ञानिक साहित्य का अनुवाद बहुत जरूरी है। आधुनिक युग में विज्ञान, समाज-विज्ञान, अर्थशास्त्र,भौतिकी, गणित आदि विषय की पाठ्य-सामग्री अधिकतर अंग्रेजी में लिखी जाती है। हिन्दी प्रदेशों के विद्यार्थियों की सुविधा के लिए इन सब ज्ञानात्मक अंग्रेजी पुस्तकों का हिन्दी अनुवाद तो हो ही रहा है, अन्य प्रादेशिक भाषाओं में भी इस ज्ञान-सम्पदा को रूपान्तरित किया जा रहा है।

जनसंचार –जनसंचार के क्षेत्र में अनुवाद का प्रयोग अनिवार्य होता है। इनमें मुख्य हैं समाचार-पत्र, रेडियो, दूरदर्शन। ये अत्यन्त लोकप्रिय हैं और हर भाषा-प्रदेश में इनका प्रचार बढ़ रहा है। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन में भारत की सभी प्रमुख भाषाओं में समाचार प्रसारित होते हैं। इनमें प्रतिदिन 22 भाषाओं में खबरें प्रसारित होती हैं। इनकी तैयारी अनुवादकों द्वारा की जाती है।

साहित्य –साहित्य के क्षेत्र में अनुवाद वरदान साबित हो चुका है। प्राचीन और आधुनिक साहित्य का परिचय दूरदराज के पाठक अनुवाद के माध्यम सेपाते हैं। 'भारतीय साहित्य' की परिकल्पना अनुवाद के माध्यम से ही संभव हुई है। विश्व-साहित्य का परिचय भी हम अनुवाद के माध्यम से ही पाते हैं। साहित्य के क्षेत्र में अनुवाद के कार्य ने साहित्यों के तुलनात्मक अध्ययन को सुगम बना दिया है। विश्व की समृद्ध भाषाओं के साहित्यों का अनुवाद आज हमारे लिए कितना जरूरी है कहने या समझाने की आवश्यकता नहीं।

अन्तर्राष्ट्रीय संबंध –अन्तर्राष्ट्रीय संबंध अनुवाद का सबसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। विभिन्न देशों के प्रतिनिधियों का संवाद मौखिक अनुवादक की सहायता से ही होता है। प्राय: सभी देशों में एक दूसरे देशों के राजदूत रहते हैं और उनके कार्यालय भी होते हैं। राजदूतों को कई भाषाएँ बोलने का अभ्यास कराया जाता है। फिर भी देशों के प्रमुख प्रतिनिधि अपने विचार अपनी ही भाषा में प्रस्तुत करते हैं। उनके अनुवाद की व्यवस्था होती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय

मैत्री एवं शान्ति को बरकरार रखने की दृष्टि से अनुवाद की भूमिका बहुत ही महत्त्वपूर्ण है।

संस्कृति –अनुवाद को 'सांस्कृतिक सेतु' कहा गया है। मानव-मानव को एक दूसरे के निकट लाने में, मानव जीवन को अधिक सुखी और सम्पन्न बनाने में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। 'भाषाओं की अनेकता' मनुष्य को एक दूसरे से अलग ही नहीं करती, उसे कमजोर, ज्ञान की दृष्टि से निर्द्धन और संवेदन शून्य भी बनाती है। 'विश्वबंधुत्व की स्थापना' एवं 'राष्ट्रीय एकता' को बरकरार रखने की दृष्टि से अनुवाद एक तरह से सांस्कृतिक सेतु की तरह महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है।

राष्ट्रीय एकता में अनुवाद का महत्त्व

भारत विविधताओं से परिपूर्ण दूनिया का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। यहां पर प्रत्येक कोस पर पानी और चार कोस पर वाणी बदल जाती है। भौगोलिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक दृष्टियों से हमारा देश बहुकोणीय है। एक साथ कई धर्मों, कई संप्रदायों, कई जातियों, कई भाषाओं और कई आचार-व्यवहारों के समन्वय से बना है भारत का मानचित्र। इतनी सारी विचारधाराओं, परंपराओं और ज्ञान-संपदा के उपकरणों को मिलाकर भारत की तस्वीर बनती है कि इन सबके सम्यक् परिज्ञान के बिना न तो भारतवर्ष के इतिहास और भूगोल की सही जानकारी मिल सकती है और न भारत की एकता की पहचान हो सकती है। यहां हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा का दर्जा दिया है, जिसके कारण अनुवाद की महत्ता और बढ़ गई है।

जैसा कि हम पहले ही बता चुके हैं कि भारत में प्रत्येक चार कोस पर भाषा बदल जाती है फलस्वरूप काश्मीर से कन्याकुमारी तक अलग-अलग भाषा को जानने वाले और बोलने वाले लोग हैं। मध्ययुग के भक्ति-आंदोलन से लेकर उन्नीसवीं-बीसवीं शताब्दी के स्वाधीनता संग्राम तक पारस्परिक संपर्क और संप्रेषण में अनुवाद ने अपनी विशिष्ट भूमिका का संवहन किया है। भारत की भावात्मक एवं राष्ट्रीय एकता के विभिन्न सूत्र इस देश के विशाल ज्ञानभंडार और चिंतन की सररणियों में बिखरे हुए हैं। देशभर में फैली भाषाओं, बोलियों और लिपियों का पार्थक्य अपिरचय के कई ऐसे विंध्याचलों को जन्म देता है, जिनसे राष्ट्रीय एकता कहीं-न-कहीं बाधित होती है, परन्तु भारतीय साहित्य का इतिहास गवाह है कि जिस तरह का स्वर हिन्दी पट्टी क्षेत्र के लोगों के मुखाग्र से

निकलता है वैसा ही स्वर सभी भारतीय भाषाओं में भी गुंजायमान होता रहा है। अनुवाद के विस्तार ने अब यह बतला दिया है कि हजार वर्षों के लंबे इतिहास में भारतीय की परंपरा एक ही दिशा में प्रवाहित होती रही है। अनुवाद के प्रयास न होते तो चिंतन और सर्जना के स्तर पर व्याप्त अभूतपूर्व राष्ट्रीय ऐक्ट्रस के तथ्य उजागर नहीं होते। अनुवाद के प्रयत्नों ने ही यह प्रमाणित किया है कि जब गोस्वामी तुलसीदास अपने 'रामचरितमानस' में मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम के व्यक्तित्त्व को साकार कर रहे थे, ठीक उसी समय बंगला में कृत्तिवास, उड़िया में बलरामदास, असमिया में शंकरदेव, मराठी में एकनाथ, तमिल में कम्बन, मलयालम में एबुतच्छन और नेपाली में भानुदत्त भी रामकाव्य रच रहे थे। सूरदास की कृष्णभक्ति के साथ ही साथ तेलुगु में पोतना, गुजराती में नरसी मेहता, बंगला में चंडीदास, मलयालम में नंपुतिरि, कन्नड़ में कनकदास और उड़िया में जगन्नाथ दास भी कृष्णकाव्य के प्रणयन में व्यस्त थे।

हिंदी में कबीर, पंजाबी में नानकदेव, तेलुगु में वेमना, मराठी में नामदेव और कश्मीरी में लल्लेश्वरी ने एक साथ निर्गुण ईश्वर की उपासना का संदेश दिया। अनुवाद के विस्तार ने ही यह संसूचित किया है कि भारत में ब्रिटिश शासन साम्राज्य स्थापित होने के बाद जब देश में पुर्नजागरण का दौर प्रारंभ हुआ तो भारतेंदु हरिश्चन्द्र के साथ-साथ तेलुगु में वीरेशलिंगम पंतुलु, मराठी में विष्णु शास्त्री चिपलूणकर, गुजराती में नर्मद, उड़िया में फकीर मोहन सेनापति, असमिया में लक्ष्मीनाथ बेजबरुआ, मलयालम में केरल वर्मा आदि ने भी आधुनिकता की दिशा में ऐसे ही प्रयास किए। आगे जिस प्रकार हिंदी में छायावादी कविताओं का युग आया, उसी तरह मलयालम और तेलुगु में भी भाव पूर्ण कविता लिखी गई। अनुवादों ने बताया है कि निराला की विद्रोही कविताओं के समानांतर ही बंगला में नजरुल इस्लाम और तमिल में सुब्रह्मण्य भारती की राष्ट्रवादी कविताएँ रणभेरी बजा रही थीं। जिस समय जयशंकर प्रसाद अपने ऐतिहासिक नाटक लिख रहे थे, ठीक उसी समय बंगला में द्विजेन्द्र लाल राय भी नाट्यरचना में प्रवृत्त थे। प्रेमचंद के हिंदी उपन्यासों और शरत्चंद्र के बंगला उपन्यासों में सामाजिक समस्याओं के प्रति स्वीकृत समानधर्मिता का परिज्ञान अनुवाद ही देते हैं। अगर अनुवाद की सुविधा नहीं होती तो लोगों को कैसे मालूम होता कि सुमित्रानंदन पंत के काव्य और जी. शंकर कुरुप की मलयालम कविता में कहीं कोई तालमेल है अथवा हिंदी के शरद जोशी और गुजराती के विनोद भट्ट ने विसंगतियों का समान व्यंग्य शैली में निदर्शन किया है। निश्चय ही भारत

की सभी भाषाओं में एक मूलभूत भावात्मक एकता विद्यमान रही है। जिसको समृद्ध करने में अनुवाद का अद्वितीय योगदान है।

अनुवाद के माध्यम से राष्ट्र की एकसूत्रता को सही दिशा मिलती है। अनुवाद की सुविधा के अभाव में हम अपने विशाल बहुभाषी राष्ट्र में ही अपरिचित जैसे रह जाते। अनुवाद ने इस विविधता भरे विशाल देश का एक सूत्र में पिरोकर राष्ट्रीयता की भावना से आबद्ध कर दिया है।

सामाजिक संस्कृति के विकास में अनुवाद

भारत की सभ्यता संस्कृति बहुत अधिक समृद्ध है। संस्कृति अपने बृहत्तर अर्थ में पूरी तरह मानव सभ्यता की उपलब्धियों का साझा कोष है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा था कि मनुष्य की श्रेष्ठ साधनाओं का ही दूसरा नाम संस्कृति है। जिस प्रकार विभिन्न नदियों की जलराशि को सागर अपने में समाहित कर विशालता ग्रहण करता है। उसी तरह भारतीय संस्कृति ने भी कई चिंतनधाराओं, कई विचारशैलियों और न जाने कितनी व्यवहारगत अवमानताओं को अपने भीतर पचाकर अनूठी समन्वयात्मकता का परिचय दिया है। भारत की इस बहुआयामी संस्कृति को ही सामासिक कहा गया है, जिसमें चिंतन, सृजन, भाषा, कल्पना और आचरण की तमाम विभिन्नताओं के बावजूद एक अद्‌भुत सामासिकता लक्षित होती है। भारतीय जनजीवन में व्याप्त अनेकता में विद्यमान सांस्कृतिक समीकरण ही इस सामासिक संस्कृति की मूलभूत विशिष्टता है। भारतीय संस्कृति में भारत की विविधताएँ अपनी संपूर्ण मौलिकता के साथ गुँथी हुई हैं। सामासिक संस्कृति की इस समन्वयात्मक चेतना का पल्लवन करने में अनुवाद का महत्त्व अप्रतिम है। अनुवाद के बिना हम कैसे जान पाते कि मौजूदा भारतीय साहित्य और चिंतन किन दिशाओं में अग्रसर है। अनुवाद के बिना राष्ट्रीय स्तर पर सोच और अभिव्यक्ति की समुचित जानकारी असंभव है।

भारत की संस्कृति की समासिकता मध्यकालीन पुनर्जागरण से लेकर बीसवीं शताब्दी के नवोजागरण तक बहुत अधिक तेज हुई है। आर्य-अनार्य, देशी-विदेशी संस्कृतियों का घोर समन्वयात्मक चरित्र ही मौजूदा भारतीय संस्कृति के रूप में सामने आया है। यह स्वाभाविक ही है कि भारतीय सामासिक संस्कृति को उसकी संपूर्णता में परखा जाए। आज हम भारत के किसी स्थान विशेष की आचार-व्यवहारगत आदतों तक सीमित नहीं रह सकते हैं। व्यवहार की विविधता, चिंतन की स्वतंत्रता, सामाजिक संघर्ष और उदारवादी दृष्टिकोण

के कारण सामसिक संस्कृति का लगातार विस्तार हुआ है। भारतीय संस्कृति की सामासिक अस्मिता को अनुवाद को अनगिनत प्रयासों ने सौष्ठव प्रदान किया है। अनुवाद कार्य भारत की बहुआयामी सांस्कृतिक परंपराओं और उपलब्धियों में समन्वय का पर्याय कहा जा सकता है। इस सागर में भारत भूमि पर विचरण करने वाले विभिन्न धार्मिक-वैचारिक संप्रदायों, आचार-दर्शनों और सांस्कृतिक सरणियों का संगम हुआ है। अनुवाद प्रक्रिया के सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में बांधकर एक सकारात्मक दिशा दी है।

भारतीय साहित्य के अध्ययन-अध्यापन में अनुवाद

भारत की सभ्यता जिस तरह अति प्राचीन है उसी तरह यहां की साहित्स का इतिहास भी पुराना है, जो दूनिया के किसी भी राष्ट्र के साहित्य से पुराना और अलंकृत है। प्राचीन भारतीय आर्यभाषा के वैदिककाल से लेकर अब तक भारत की अनगिनत भाषाओं और बोलियों में चिंतन और सृजन की सुदीर्घ परंपरा उपलब्ध है। लेकिन, भारतीय साहित्य का तात्पर्य केवल विविध भाषाओं का रचनात्मक समुच्चय नहीं है, अपतु भारतीय साहित्य इस बहुभाषी और वैविध्यपूर्ण देश की सामासिक संस्कृति का समेकित प्रयत्न भी है। इसलिए साहित्य के इतिहास को अब वृहत्तर भारतीय साहित्य के समेकित इतिहास के रूप में ही सही पहचान दी जा सकती है। अकेले सूरदास की चर्चा अब अपर्याप्त होगी। सूरदास के साथ गुजराती के नरसी मेहता, तेलुगु के पोतना, उड़िया को जगन्नाथ दास, असमिया के शंकरदेव, कन्नड़ के पुरंदरदास और बंगला के चंडीदास आदि कृष्णभक्त कवियों की प्रासंगिक चर्चा अपिरहार्य होगी। जब हिंदी में छायावादी कविताएँ लिखी जा रही थीं, ठीक उसी समय बंगला, मलयालम, पंजाबी, सिंधु, उर्दू, गुजराती, तेलुगु, मराठी आदि तमाम भारतीय भाषाओं में भाव और सौंदर्य पर आधारित स्वच्छंतावादी काव्य रचा जा रहा था, लेकिन मलयालम नहीं जानने वाला व्यक्ति कुमार आशन् की भाववादी कविताओं से नहीं जुड़ सकता तथा जिसे मराठी भाषा का ज्ञान नहीं है। वह विजय तेंदुलकर के नाटकों और कुसुमाग्रज की कविताओं का रसास्वादन नहीं कर सकता। जो हिंदी नहीं जानता, वह प्रेमचंद की कहानियों और परसाई के व्यंग्यों से अनभिज्ञ ही रह जाएगा। भाषा-ज्ञान के बिना भारत की विभिन्न भाषाओं में शताब्दयों में रचित साहित्य की उपलब्धियों से परिचित होना असंभव है। इसीलिए अनुवाद के माध्यम से इस असंभव को बदलकर संभव बनाया जा सकता है।

संपूर्ण भारतीय भाषाओं के साहित्य की विचार सामग्री और कलात्मक गरिमा का परिबोध अपनी ही भाषा में मिल जाए, यह अनुवाद का चमत्कार है। अनुवाद के ही कारण तुलसी और कंबन, प्रेमचंद और शरत्चंद्र, कबीर और वेमना, मीरा और अण्डाल, कालिदास और वाल्मीकि, भारतेंदु और नर्मद, दिनकर और इकबाल, वृंदावनलाल वर्मा और हरिनारायण आप्टे, उमाशंकर जोशी और अज्ञेय आदि भारतीय रचनाकारों को पूरा भारत जानता है। अनुवाद के ही कारण वल्लतोल पर मलयालमभाषियों को ही गर्व नहीं, रवींद्रनाथ ठाकुर केवल बंगला के रचनाकार ही नहीं, कबीर केवल हिंदी के विद्रोही कवि नहीं और गालिब पर केवल उर्दू शायरी के प्रेमी मुग्ध नहीं हैं। अनुवाद की भूमिका भारतीय साहित्य के अध्ययन तथा आस्वादन में अत्यधिक विशिष्ट है। सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य का अध्ययन और अनुसंधान अनुवाद के बिना संभव नहीं। अनुवाद ने एतद्विषयक अध्ययन और अध्यापन को व्यापकता दी है तथा सुगम बनाया है। भारतीय साहित्य के अध्येताओं को निकट लाने का प्रयास अनुवाद के कारण ही संभव हुआ है।

अंतर्राष्ट्रीय साहित्य के अध्ययन-अध्यापन में अनुवाद

भारत की पावन धरती पर 18 वीं सदी में ईस्ट इंडिया कंपनी का आगमन हुआ तत्पश्चात ही भारतीय मनीषा का वास्तविक संपर्क अंतर्राष्ट्रीय चिंतन और सृजन के साथ हुआ। इसके पूर्व सूफियों ने अरब देशों की दार्शनिक अभिव्यक्तियों से भारतीय साहित्य को जोड़ना चाहा था, लेकिन अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि और रुचि का सही समाहार भारत में यूरोपीय शक्तियों के आगमन के बाद ही हुआ। पहले ईसाई धर्म-प्रचार के बहाने और फिर शैक्षणिक तथा प्रशासनिक कार्यों के लिए यूरोपीय भाषाओं से भारतीय भाषाओं में अनुवाद का उपयोग शुरू हुआ। 19वीं सदी के मध्य तक लोग यह महसूस करने लगे कि यूरोपीय, विशेषत: अंग्रेजी साहित्य का अनुवाद भारतीय सोच और लेखन के लिए अपरिहार्य है। कहा जाने लगा कि जिस भारतीय भाषा में अच्छे अनुवादक न हों, उसमें नये और मौलिक ग्रंथों के लेखक कहाँ मिलेंगे? एक श्रेष्ठ और मानक अनुवाद पर पचास नि:सार मौलिक न्यौछावर करने की मानसिकता पनपने लगी। परिणामत: हिंदी और समस्त आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में अंग्रेजी साहित्य के संचित ज्ञान और कला का अनुवाद होने लगा। 'ग्रंथकारों से निवेदन' शीर्षक अपनी कविता में आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदी ने अनुवाद का आग्रह किया है–

'इंग्लिश का ग्रंथ-समूह बहुत भारी है,
अति विस्तृत जलधि समान देहधारी है।
संस्कृति भी इसके लिए सौख्यकारी है,
उसका भी ज्ञानागार हृदयहारी है।
इन दोनों में से अर्थरत्न ले लीजै,
हिंदी के अर्पण उन्हें प्रेमयुत कीजै।

इस निवेदन से पूर्व से ही अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद का कार्य प्रारंभ हो चुका था। भारतेंदु हरिश्चंद्र ने 1880 में विलियम शेक्सपीयर के नाटक 'मर्चेंट ऑफ वेनिस' का अनुवाद 'दुर्लभ बंधु' के रूप में किया और श्रीधर पाठक ने 1886 में ऑलिवर गोल्डस्मिथ की काव्यकृति 'हरमिट' का अनुवाद 'एकांतवासी योगी' के नाम से किया। अंग्रेजी और अन्य विदेशी भाषाओं से हिंदी एवं उसकी सहवर्ती भारतीय भाषाओं में अनुवाद के पिछले लगभग सवा सौ वर्षों के इतिहास में अंतर्राष्ट्रीय साहित्य के साथ भारतीय लेखकों, पाठकों एवं अध्येताओं का रिश्ता मजबूत हुआ है।

अंतर्राष्ट्रीय साहित्य का अध्ययन और अध्यापन भारतीय भाषाओं में अनुवाद के कारण ही संभव हो पाया है। अनुवाद के कारण ही हम टाल्सटाय के उपन्यासों और शेक्सपियर के नाटकों से परिचित हुए हैं। अनुवाद के कारण ही कामू, सार्त्र और बैकेट से लेकर यासुनारी कावाबाता, पाब्लो नेरूदा और नादीना गार्डिनर तक की रचनाकारी से भारतीय पाठक लाभान्वित हैं। अनुवाद ने न केवल पाठकीय रुचि को अंतर्राष्ट्रीय आस्वाद प्रदान किया है, बल्कि अध्ययन और अनुसंधान को नई दिशाएँ भी दी हैं। विश्व की भिन्न-भिन्न भाषाओं में भिन्न-भिन्न विधाओं में रचे जा रहे साहित्य के अध्ययन से संलग्न अध्येताओं के शिक्षण में भी अनुवाद की अप्रतिम भूमिका लक्षित होती है। वास्तविकता तो यह है कि अंतर्राष्ट्रीय साहित्य का अध्ययन और अध्यापन अनुवाद के बिना संभव नहीं है। अनुवाद के कारण ही अंतर्राष्ट्रीय साहित्य का समग्र स्वरूप किसी भी भाषा में साकार होता है। कालिदास द्वारा रचित 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' को पढ़कर जर्मन कवि गेटे अनुवाद के कारण ही चमत्कृत हो सके थे। अनुवाद के आधार पर ही शापेनहावर और टी.एस. इलियट के सामने भारतीय उपनिषदों का संसार उजागर हुआ। अंतर्राष्ट्रीय साहित्यके अध्ययन व अध्यापन के कारण ही संभव हुआ है। अन्यथा इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी।

तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन में अनुवाद

तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन व अध्यापन एकता और सामासिकता की कड़ियों को जोड़ने का एक महत्त्वपूर्ण प्रयत्न है। तुलना की प्रवृत्ति ने मनुष्य के ज्ञान और कौशल को सर्वदा ही हर क्षेत्र में विस्तार दिया है। साहित्य के अध्ययन की तुलनात्मक प्रविधि भी मनुष्य के चिंतन और सृजन की एक विशिष्ट प्रक्रिया है। तुलनात्मक अध्ययन एकाधिक भाषाओं और साहित्यों के परस्पर संपर्क को बढ़ाता है। विभिन्न सर्जनात्मक इकाइयों के परस्पर निकट आने की संभावनाओं को प्रोत्साहित करने के साथ ही साथ तुलनात्मक अध्ययन विविधता में एकसूत्रता के अंत:दर्शन को उजागर करता है। दो भाषाओं के साहित्यों का तुलनात्मक अध्ययन करते समय लगातार ऐसा प्रतीत होता है कि दो भाषाओं के माध्यम से वस्तुत: एक ही सोच, एक ही संस्कृति के दो अभिव्यक्ति-माध्यमों से प्रस्तुत किया गया है। विभिन्न भाषाओं के आवरण में एक ही वैचारिक धरातल या एक ही जीवन-मूल्य का साक्षात्कार इंगित करता है कि इनके बीच भिन्नता केवल आवरण की है, आत्मा की नहीं। सूरदास और नरसी मेहता का कृष्णकाव्य, रामचरितमानस और कृत्तिवास रामायण, भारतेंदु और वीरेशलिंगम पंतुलु हिंदी और मराठी उपन्यास, दिनकर और इकबाल, फणीश्वरनाथ रेणु और सतीनाथ भादुड़ी, हिंदी और पंजाबी, रामकाव्य, केशवदास और श्रीनाथ, हिंदी और कन्नड़ भक्ति आंदोलन, महादेवी वर्मा और बालमणि अम्मा आदि न जाने कितनी ही दिशाओं में तुलनात्मक अध्ययन और अनुसंधान का विस्तार हुआ है। इन अध्ययनों से यह साबित हुआ है कि अलग-अलग प्रदेशों की भाषा-भूमियों पर प्रवाहित होने वाली भावधारा और विचार-सरिता एक ही है। इस निष्कर्ष तक पहुँच पाना अनुवाद के बिना संभव नहीं। वास्तविकता तो यह है कि अनुवाद तुलनात्मक अध्ययन की आधारभूत धुरी है। अनुवाद के सहारे ही एक भाषा को जानने वाले अन्य भाषा की साहित्यिक उपलब्धियों से परिचित होते हैं। अनुवाद की सुविधा न होती तो हिंदीभाषी लोग शरत्चंद्र, तुकाराम, वेमना, अकबर इलाहाबाद, वसवेश्वर, के.पी. पुटप्पा, ज्योतींद्र दवे, खांडेकर आदि अनगिनत भारतीय रचनाओं की सर्जना से अपरिचित ही रह जाते। ठीक यही बात अन्य भारतीय भाषा-भाषियों की हिंदी साहित्य संबंधी जानकारी के संदर्भ में भी कही जा सकती है।

अनुवाद के प्रसार न तुलनात्मक अध्ययन को पूरी दुनिया के मानचित्र पर स्थापित किया है। परिणामत: भारत के कबीर और फ्रांस के रैबले, हिंदी

के प्रेमचंद और रूसी के मैक्सिम गोर्की, अज्ञेय और टी.एस. इलियट, निराला और एजरा पाउंड, जयशंकर प्रसाद और विलियम शेक्सपियर आदि के तुलनात्मक अध्ययन अनुवाद की सुविधा से व्युत्पन्न अंतर्राष्ट्रीय प्रयास ही है। तुलनात्मक अनुशीलनों से विभिन्न भाषाभाषियों का यह दंभ और भ्रम भी टूटता है कि उनकी भाषा का साहित्य ही अन्यतम है। समानताओं और विषमताओं का तुलनात्मक विवेचन यही स्थापित करता है कि किसी भी भाषा के साहित्य की खूबियाँ और खामियाँ वैचारिक एवं सर्जनात्मक स्तर पर कितनी भास्वर, कितनी सामसिक हैं। यह सब अनुवाद के कारण की संभव हुआ है। अनुवाद के कारण जो कुछ भी तुलनीय है, वह तुलनात्मक अध्ययन का विषय बन जाता है। अनुवाद की सुविधा से तुलनात्मक अध्ययन के कारण मानव के सीमित ज्ञान-क्षेत्र का विस्तार होता है। अनुवाद ने तुलनात्मक अध्ययन, अध्यापन और अनुसंधान को निश्चित तौर पर विस्तृत स्वरूप प्रदान किया गया है।

व्यवसाय के रूप में अनुवाद

व्यवसाय (Business) विधिक रूप से मान्य संस्था है, जो उपभोक्ताओं को कोई उत्पाद या सेवा प्रदान करने के लक्ष्य से निर्मित की जाती है। व्यवसाय को 'कम्पनी', 'इंटरप्राइज' या 'फर्म' भी कहते हैं। भारत में आधी से लगभग 50-60 वर्ष पूर्व अनुवाद मार्ग को हीन समझा जाता था और अनुवादक की कोई सामाजिक पहचान नहीं थी। यह एक अधोस्तरीय कार्य था, जिसमें मौलिक निर्माण और सम्मानजनक स्थिति की कोई संभावना नहीं थी। पढ़े-लिखे बेरोजगारी लोगों को थोड़ा-सा आर्थिक सहारा देने अथवा किसी विशिष्ट साहित्य की किसी विशिष्ट कृति को अन्य भाषा में प्रचारित करने के अतिरिक्त अनुवाद की कोई भूमिका नहीं थी।

19वीं सदी के अंतिम वर्षों में ही अनुवाद के महत्त्व को पहचाना गया लेकिन एक सशक्त माध्यम और सार्थक कार्य के रूप में अनुवाद को न तो व्यावसायिक प्रोत्साहन मिला और न जनसमर्थन ही। स्थिति यह थी कि न तो अनूदित पुस्तकों को प्रकाशक मिलते थे और न अनुवादक की कोई अस्मिता स्थिर हो रही थी, लेकिन जैसे-जैसे भारतीय परिदृश्य में ज्ञान-विज्ञान के नये-नये क्षेत्रों का विस्तार होता गया, अनुवाद का महत्त्व भी दिन-प्रतिदिन बढ़ता चला गया। कृषि, उद्योग, चिकित्सा, अभियांत्रिकी और व्यापार के विभिन्न आयामों से

लेकर शिक्षा, प्रशासन, साहित्य और संस्कृति के विविध क्षेत्रों तक कार्यशैली में उपस्थित बदलाव ने अनुवाद के महत्त्व को नये रंगों से रेखांकित किया। परिणामत: अनुवाद की आवश्यकता जीवन के हर कदम पर, व्यवहार के हर पग पर अनुभव की जाने लगी। अनुवाद की इस अपरिहार्यता को नये संचार माध्यमों ने बहुत अधिक प्रेरित व प्रोत्साहित किया। पत्रकारिता, चलचित्र, दूरदर्शन, आकाशवाणी, दूरभाष एवं संचार के अधुनातन माध्यमों ने अनुवाद के महत्त्व को अधिकाधिक विस्तार दिया। स्थिति यह है अनुवाद के बिना हम वर्तमान व्यस्त, तकनीकी, आधुनिक जीवन की कल्पना नहीं कर सकते। अनुवाद-कर्म के इस विस्तार ने विभिन्न राष्ट्रों की संस्कृतियों, समस्याओं और अनुभूतियों को भौगोलिक सीमाएँ तोड़कर एक दूसरे के निकट लाने का ऐतिहासिक कार्य किया है। विभिन्न देशों के बीच संवाद स्थापित करने में अनुवाद की भूमिका महत्त्वपूर्ण रहती है। इन सभी विशषताओं के कारण वर्तमान समय में अनुवाद लाखों लोगों की आजिविका का आधार है।

आधुनिक समय में सभी क्षेत्रों में प्रगति होने के साथ-साथ अनुवाद के क्षेत्र में भी प्रगति हुई है। नियोजनों के सर्वेक्षण से यह जानकारी मिलती है कि हमारे देश में हर सप्ताह कम-से-कम दस अनुवादकों की विज्ञप्तियाँ निकलती हैं। देशभर में फैले निजी एवं सार्वजनिक उपक्रमों, संस्थानों और प्रतिष्ठानों में अब एक स्वतंत्र राजभाषा प्रभाग कार्यरत है, जिसका मुख्य कार्य अनुवाद ही है। राजभाषा अधिकारी और हिंदी अनुवादक के पद पर कार्यरत असंख्य लोगों का व्यवसाय अनुवाद है। उनकी आजीविका का आधार अनुवाद है। प्रशासन, वाणिज्य, विधि, शिक्षा और ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न शाखाओं की निजी पारिभाषिक शब्दावली के उन्नयन के अनुवाद कार्य को अधिकाधिक तर्कसम्मत, उपयोगी एवं संप्रेषणीय बनाया है। संचार माध्यमों के प्रसार और तकनीकी संसाधनों के विस्तार ने संसारभर के चिंतन, अनुभव और अभिव्यक्ति को संसारभर के लिए सुलभ कराने की प्रस्तावना अनुवाद के भरोसे ही की है। इसी वजह से पूरी दुनिया में अनुवादकों की माँग बढ़ी है। आज अनुवाद कार्य एक कला, एक विज्ञान, एक व्यवसाय के रूप में सम्मानित है। अब किसी भी भाषा में अनुवाद करना दोयम दर्जे का काम नहीं रह गया है। अनुवाद के सौंदर्य और मौलिक प्रवाह से परिचित होने के बाद अब अनुवादक की प्रतिष्ठा और पहचान गौरवमंडित हुई है। अनुवाद अब तक व्यवसाय का रूप ले चुका है। जिससे लाखों लोगों की आजिविका चलती है।

ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में अनुवाद

वर्तमान समय में विज्ञान के क्षेत्र में बहुत अधिक प्रगति हुई है। कला, संस्कृति, अध्यात्म, साहित्य, भौतिक विज्ञान, दर्शन, अभियांत्रिकी, चिकित्सा, सामाजिक विज्ञान, मनोविज्ञान, राजनीतिशास्त्र, शिक्षा आदि न जाने कितने क्षेत्रों में व्याप्त मानवीय प्रतिभा अनवरत नये-नये तथ्यों और नये-नये निष्कर्षों से जूझती रहती है। अनुवाद के कारण ही अब कोई भी सामग्री विश्वव्यापी हो जाता है। रूस में हुए अधुनातन आविष्कारों से लेकर जापान में संपन्न नई तकनीकी क्रांति की जानकारी के लिए रूसी और जापानी भाषाओं को सीखना अब आवश्यक नहीं रह गया है। अनुवाद ने संसारभर की वैज्ञानिक और तकनीकी उपलब्धियों से समूचे संसार को परिचित रखने में ऐतिहासिक योगदान दिया है। तभी हम अंतरिक्ष विज्ञान, चिकित्सा, आनुवंशिक अभियांत्रिकी, कंप्यूटर और नव्यतम संचार साधनों के क्षेत्र में हो रहे नये से नये अनुसंधान से शीघ्र ही जुड़ जाते हैं। यह सब विज्ञान का ही अवदान है कि ज्ञान-विज्ञान की समस्त शाखाएँ मनुष्य को उसके तकनीकी विकास का स्मरण कराती रहती हैं। वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवाद का कार्य साहित्य और पत्रकारिता के अनुवाद जैसा कलात्मक एवं शैलीबहुल नहीं होता। यह अपेक्षाकृत शुष्क, मूर्त, तथ्यात्मक और सपाट होता है। अनुवाद की इस दिशा में सांकेतिक और सूक्ष्मता के लिए अवकाश नहीं होता। स्रोतभाषा में कही गई तकनीकी बात को अविकल रूप में लक्ष्यभाषा में संप्रेषित करना ही तकनीकी एवं वैज्ञानिक अनुवाद का संकल्प होता है। जैसा कि हमें मालूम है कि एक ही पद शास्त्र एवं भाषा-विशेष में जिस अर्थ का द्योतक है, वही पद अन्य शास्त्र और भाषा-विशेष में किसी भिन्न अर्थ का द्योतन करता है। इसीलिए वैज्ञानिक एवं तकनीकी पारिभाषिक पदों के संदर्भ में यह ध्यान रखना पड़ता है कि पारिभाषिक शब्दों में सुनिश्चित, सर्वस्वीकृत, सुलभ एवं सहज अनुवाद द्वारा ज्ञान-विज्ञान का स्वाभाविक उन्मेष हो। अनुवाद के ऐसे प्रयासों से भाषा का मानवीकरण, पारिभाषिक शब्दावली का विकास और ज्ञान-विज्ञान की नई-पुरानी शाखाओं का उन्नयन संभव हुआ है। इसलिए, ज्ञान-विज्ञान की प्रत्येक शाखा में अनुवाद वर्तमान समय में आत्मनिर्भरता है।

कंप्यूटर के आने से जिस प्रकार अन्य क्षेत्रों में बहुत अधिक परिवर्तन हुआ है। उसी प्रकार वैज्ञानिक एवं तकनीकी अनुवाद की प्रक्रिया को अधिकाधिक तार्किक, सूक्ष्म और सुगम बना दिया है। शब्द और अर्थ के निश्चयीकरण एवं

विश्लेषण के आधार पर कंप्यूटर में अनुवाद की विलक्षण क्षमता आ जाती है। भाषा की व्यारणिक संरचना की तमाम प्रक्रियाओं की मदद से अगर कंप्यूटर का उपयोग स्रोतभाषा और लक्ष्यभाषा के बीच स्थानांतरण व्याकरण के लिए हो, तो अनुवाद कार्य अधिकाधिक प्रामाणिक और सही होगा। ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न नई-पुरानी दिशाओं को उजागर करने वाले विशिष्ट माध्यम अनुवाद की महनीयता स्थापित है। अराष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय ज्ञान-विज्ञान को विश्वव्यापक छवि प्रदान करने में अद्वितीय अद्वितीय योगदान दिया है। वैज्ञानिक और तकनीकी अध्ययन और उन्नयन अनुवाद के बिना संभव ही नहीं।

औद्योगिक विकास में अनुवाद

औद्योगिक पुनर्जागरण से ही आधुनिक युग की शुरूआत हुई थी। तब से दुनिया की प्रगति एवं आर्थिक गतिविधियों की पृष्ठभूमि में औद्योगिक विकास ही रहा है। किसी देश की समृद्धि का आधार वहाँ का औद्योगिक विस्तार हो गया है। औद्योगिक अनुसंधान, उत्पादन, वितरण, वाणिज्य और आर्थिक नियंत्रण की विभिन्न व्यावसायिक धाराओं ने मनुष्य को निरंतर सभ्यता के नये-नये सोपानों से परिचित कराया है। तकनीकी विकास ने औद्योगीकरण की दिशा में लगातार मनुष्य को अग्रसर किया है। नये यांत्रिक संसाधनों ने उद्योग और व्यवसाय को नई दिशाएँ दी हैं। यही कारण है कि किसी भी देश की आर्थिक स्थिरता और प्रगति का सीधा संबंध वहाँ की औद्योगिक एवं व्यावसायिक दशा-दिशा से होता है। उद्योगों की प्राक्कल्पना से लेकर प्रबंधन तक, तकनीकी संयोजन से लेकर उत्पादन तक, वितरण से लेकर वाणिज्य तक भाषा का इस्तेमाल हर चरण पर होता है, लेकिन संसारभर में फैले हुए, औद्योगिक उपक्रमों और उनसे संबंद्ध व्यवसायों से जुड़ने हेतु अनुवाद की मदद लेना वर्तमान समय की सहारा लेना आज की व्यस्त, यांत्रिक, औद्योगिक जिंदगी की अपरिहार्यता है। अनुवाद ने संसार के अर्थतंत्र को सीमित ओर सर्वसुलभ बनाया है। भारत विविधताओं से भरा देश है इसलिए यहां विभिन्न प्रकार के मध्य औद्योगिक एवं व्यावसायिक सामंजस्य बनाए रखने के लिए अनुवाद ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

औद्योगिक विकास का प्रमुख लक्ष्य है। सुदृढ़ अर्थव्यवस्था और विकासशील सामाजिक वातावरण का निर्माण करना होता है। एक सुखद भविष्य के प्रति समर्पित औद्योगिक विकास की दिशाएँ जिन असीम संभावनाओं की ओर संकेत करती हैं, उनकी पीठिका में किसी-न-किसी प्रकार अनुवाद का महत्त्वपूर्ण

अवदान है। प्रौद्योगिकी की निर्माण-परिकल्पना के प्राथमिक चरण से लेकर औद्योगिक उत्पादनों की व्यावसायिक परिणति तक भाषा की विविधताओं के बीच अनुवाद ही सेतु का कार्य करती है। तभी इस्पात संयंत्र में बंगला, मलयालम, पंजाबी, सिंधी, तमिल, मणिपुरी, भोजपुरी, अवधी और मेवाती से लेकर रूसी और जर्मन बोलने वाले तक साथ मिलकर काम करते हैं। अनुवाद ने अलग-अलग भाषा-भाषियों को एक सूत्र में बाँध रखा है। हम जिन कपड़ों को पहनते हैं, वे गुजराती और मराठी भाषी लोगों ने तैयार किया है। हम जिस जूट का उपयोग करते हैं, वह बंगलाभाषी चटकलों में तैयार हुआ है। हम नारियल के रेशों से तैयार जिन सजावटी चीजों का उपयोग करते हैं, उन्हें केरल के समुद्रतट पर मलयालमभाषी लोगों ने तैयार किया है। यही नहीं, हर औद्योगिक प्रतिष्ठान अपने आप में बहुभाषी जनसमूह का समुच्चय होता है। विज्ञप्तियों, अनुदेशों, पत्रों, देयकों, विपणन के माध्यमों, यातायात के संसाधनों, व्यापार की गतिविधियों आदि में अनुवाद की उपादेयता बहुत अधिक है। निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों से लेकर दैनिक बाजार तक एवं शेयर बाजार से लेकर तमाम वित्तीय संस्थाओं तक जिस व्यावसायिक भाषा का विस्तार है, उसकी सम्यक् प्रयुक्ति में अनुवाद की अप्रितम भूमिका रहती है। औद्योगिक विकास जिन सोपानों पर चढ़कर राष्ट्रनिर्माण एवं सभ्यता के अभ्युत्थान में मददगार होता है। उनमें अनुवाद का महत्त्व बहुत अधिक है।

बहुभाषी शिक्षा प्रणाली में अनुवाद

हिन्दी का इतिहास शिक्षा के माध्यम के रूप में हिंदी के मार्ग में कई बाधाएं मौजूद हैं। पूरी दुनिया में कलकत्ता में 1800 में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के एक दशक पहले ही शिक्षण संस्थानों में हिंदी के प्रवेश की भूमिका तैयार हो गई थी। आज देश के सौ से अधिक विश्वविद्यालयों में हिंदी भाषा और साहित्य का शिक्षण होता है। विदेशों में भी दर्जनाधिक विश्वविद्यालय में हिंदी का अध्ययन-अध्यापन प्रचलित है। लेकिन, आज भी उच्चतर शिक्षा के माध्यम के रूप में हिंदी के अखिल भारतीय स्वीकार के मार्ग में कई अवरोधक विद्यमान हैं। इसका मुख्य कारण भारत का बहुभाषी परिवेश ही है। इतने बड़े देश में इतनी सारी भाषाएँ प्रचलित हैं कि उन सबको उच्च शिक्षा का माध्यम बना लेना संभव नहीं है। संसारभर में राष्ट्र की किसी एक केंद्रीय भाषा में अध्ययन-अध्यापन का तकनीकी और उच्चतर विन्यास है। भारत में यह गौरव

हिंदी को ही मिलना चाहिए, क्योंकि उच्च तकनीकी ज्ञान और अंतर अनुशासानात्मक के लिए हिंदी ही सर्वाधिक समर्थ भाषा है। होना तो यह चाहिए कि प्रारंभिक शिक्षा प्रादेशिक भाषाओं में दी जाए और उच्चतर शिक्षा के माध्यम के रूप में समूचे देश की संपर्क भाषा के रूप में प्रचलित भाषा हिंदी को स्वीकार किया जाए। उच्च शिक्षा का माध्यम वहीं केंद्रीय संपर्क भाषा बन सकती है, जिसमें भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र को एक सूत्र में बाँधने की शक्ति हो। हिंदी में यह सामर्थ्य है, परंतु व्यावहारिक तौर पर हिन्दी भाषा की उपेक्षा की जाती है।

वर्तमान समय में भारत की 15 राजकीय अधिकृत भाषाएँ हैं और जनगणनाओं के अनुसार 1652 अन्य भाषाएँ व बोलियाँ भी संसूचित हैं। देश के शिक्षाविदों के सामने यह एक विकट समस्या है कि इतनी सारी भाषाओं और बोलियों का प्रयोग करने वाले शिक्षार्थियों को किस माध्यम से शिक्षा दी जाए? इस समस्या का कोई सर्वस्वीकृत हल न होने के कारण देश के विभिन्न क्षेत्रों में बहुभाषी शिक्षा-प्रणाली प्रचलित है। स्थिति है कि यहां पर शिक्षा का स्वरूप अलग-अलग है। बहुभाषिकता से ओतप्रोत इस शिक्षा-प्रणाली में अनुवाद ने सुगमता और संप्रेषणीयता का संचार किया है। विभिन्न भाषा माध्यमों के बीच अनुवाद ने एक ऐसा पुल बनाया है कि शिक्षा के मार्ग में आने वाली अवरोध स्वत: समाप्त हो जाते हैं। अध्ययन और अध्यापन के माध्यम की सीमाओं को अनुवाद ने तोड़ने का लगातार यत्न किया है। भारत जैसे बहुभाषी देश में चल रही बहुभाषी शिक्षा-प्रणाली में अनुवाद एक अपरिहार्य प्रक्रिया और उपयोगी संसाधन है।

आज से लगभग पांच दशक पूर्व अनुवाद और अनुवादक को अधिक महत्त्व नहीं दिया जाता था, लेकिन आज अनुवाद का कार्यक्षेत्र व्यापक और विशिष्ट हो गया है। सावधानी और उपादेयता को दृष्टिपथ में रखकर किये गये अनुवाद का महत्त्व दिनानुदिन जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में बढ़ता ही जा रही है। शायद ही कोई ऐसा क्षण हो, जब हम अनुवाद के चमत्कार का साक्षात्कार या उपयोग नहीं करते हैं। प्रौद्योगिक संस्थानों ने वर्तमान में पूरी दुनिया को नजदीक ला दिया है। लेकिन सभ्यता की विकास यात्रा के इन्हीं अवदानों ने अनुवाद की महत्ता और कार्यदिशा को विराटता दी है।

वर्तमान युग में अनुवाद की पहचान जीवन के हर क्षेत्र में सक्रिय साधन के रूप में उभरी है। प्रशासन, चिकित्सा, कला, संस्कृति, विज्ञान, प्रतिरक्षा, विधि, प्रौद्योगिकी, तकनीकी, अनुसंधान, व्यवसाय, पत्रकारिता, जनसंचार आदि

विभिन्न क्षेत्रों में अब अनुवाद के बिना कुछ नहीं हो सकता। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय साहित्य के अध्ययन अध्यापन में अनुवाद की उपादेयता बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन और अनुसंधान की विभिन्न दिशाएँ अनुवाद से ही नियंत्रित होती हैं। क्रमशः अनुवाद एक स्वतंत्र व्यवसाय एवं आजीविका का साधन बन गया है। ज्ञान-विज्ञान, औद्योगिक विकास और वाणिज्य-व्यवसाय के विभिन्न क्षेत्रों में अनुवाद के व्यापक उपयोग ने इसे अधिकाधिक लोकप्रिय बनाया है। अंतरिक्ष में घूमते कृत्रिम उपग्रहों से लेकर समूची धरती पर फैले अनेकानेक संचार-माध्यमों तक अनुवाद का कमाल फैला हुआ है। बहुभाषी देश भारत में बहुभाषी शिक्षा-प्रणाली की संभावनाओं के साथ भी अनुवाद का गहरा रिश्ता है। इन सबने मिलकर अनुवाद की विश्वव्यापी उपादेयता, प्रासंगिकता और भविष्य को रेखांकित किया है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अनुवाद की प्रासंगिकता साबित हो चुकी है। आने वाले दिनों में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय फलक पर अनुवाद का महत्त्व उत्तरोत्तर बढ़ेगा फलस्वरूप इसका विस्तार और अधिक विस्तार होगा।

जनसंचार-माध्यमों में अनुवाद

मानव हमेशा सूचना या जानकारी प्राप्त करने हेतु सदैव किसी-न-किसी माध्यम का सहारा लेता है। दो या उससे अधिक लोगों में जब सूचनाओं का आदान प्रदान होता है, तब उस सूचना को मुद्रित करके बडे जनसमूह तक पहुचाया जाता है तंब उसे जनसंचार कहा जाता है। समाज के हर तरह के प्रश्न को जनसंचार द्वारा उजागर किया जाता है। जन-जन को शिक्षत करने में जनसंचार माध्यमों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है।

प्रौद्योगिकी विकास की वर्तमान समय में जनसंचार माध्यमों के मायावी दुनिया में खड़ा कर दिया है। पत्रकारिता, विज्ञापन, आकाशवाणी, दूरदर्शन, चलचित्र, कंप्यूटर, दूरभाष, कृत्रिम उपग्रहों और नव्यतम संचार तकनीकों ने मनुष्य को सूचनाओं से अधिकाधिक लैस करने के साथ ही संसार की बहुमुखी पंगति में अपनी नई भूमिका तय की है। जीवन की गति को प्रभावित करने वाले सबसे जीवंत और कारगर साधन ये संचार माध्यम ही हैं। कला, विज्ञान, वाणिज्य, उद्योग, शिक्षा, प्रशासन और आर्थिक गतिविधियों में सर्वत्र ही संचार माध्यम सक्रिय हैं। इन संचार माध्यमों ने पूरी दुनिया को नजदीक ला दिया है। आज तथ्यों, सूचनाओं, चित्रों और जानकारियों का विश्व के एक कोने से दूसरे कोने

तक सुगमता से हस्तांतरण संभव है। ग्राहम बेल द्वारा 1876 में आविष्कृत दूरभाष ने अब टेलेक्स और फैक्स बनकर अपनी नई छवि स्थापित की है। नये संचार-माध्यमों में विभिन्न संदर्भों तथा प्रयोक्ताओं के अनुसार भाषाई अंतराल मिलता है। भाषा-प्रयुक्ति संचार-माध्यमों का आधारभूत तत्त्व है, जिसमें रचना, शब्दावली, संप्रेषण और अनुवाद के सहारे विविध संचार-माध्यम अपने उद्देश्य की प्राप्ति में सक्षम होते हैं।

पत्रकारिता, विज्ञापन और विविध श्रव्य-दृश्य माध्यमों से संचार की जितनी सुविधाएँ आज उपलब्ध हैं, उन सबका संरचनात्मकएवं संप्रेषणात्मक पक्ष भाषिक प्रयुक्ति से संबद्ध है। जनसंपर्क, शिक्षा, सूचना, मनोरंजन और विज्ञापन के लिए भाषा ही सारे जनसंचार-माध्यमों के लिए अन्यतम साधन है, लेकिन, ये भाषाएँ भी कितनी अधिक हैं संसार में और उन्हें बोलने वालों की संख्या तो नितांत अपरिमित है। अनुवाद ने जनसंचार के सभी माध्यमों को भाषिक प्रयुक्ति और जनसंचार के विभिन्न धरातलों पर भाषा की आकर्षण शक्ति के संदर्भ में अनुवाद की उपादेयता का सर्वथा नया आयाम उद्घाटित होता है। पत्राचार और दूरसंचार के सामान्य स्तर से लेकर इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के अतुल विस्तार तक अनुवाद की आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा है। संसार में हर रोज हर पल घटित होने वाली हर घटना का ब्योरा विश्व के हर देश की हर भाषा में पहुँचाने का दायित्व अनुवाद पर है। हर नये उत्पादन को हर भाषाभाषी तक संप्रेषित करने की विज्ञापनी दायित्व भी अनुवाद पर ही है। अनुवाद से प्रत्येक संचार माध्यम का कार्य सरल हुआ है और संचार साधनों को व्यापकता ही है। अनुवाद ने संचार-माध्यमों के तकनीकी युग में नयेपन का सूत्रपात किया है और आने वाला कल भी संचार के इन विभिन्न माध्यमों के लिए अनुवाद पर ही निर्भर करेगा।

5

हिन्दी प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका

आधुनिक विज्ञान के विविध आयामों में हिन्दी की प्रयोजनीयता को लेकर अनेक चुनौतियां मौजूद हैं। बाजार की हवा का रुख देखकर हम यह न समझ लें कि अब हिन्दी पूर्ण रूपसे प्रतिष्ठित हो चुकी है। विज्ञान में होने वाली नवीनतम खोजों को आम जनता की भाषा में उस तक पहुँचाने का विस्तृत कार्य क्षेत्र खुला पड़ा है। जिस दिन हमारे विद्यालयों और महाविद्यालयों में विज्ञान विषय की पुस्तकें हिन्दी भाषा में अध्यापन भी हिन्दी भाषा में और अनुसंधान का लेखन भी हिन्दी भाषा में होने लगेगा तब उसकी प्रयोजनीयता विश्वव्यापी सिद्ध होने में जरा भी देर नहीं लगेगी।

हिन्दी प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है। किसी बात से हमें क्या प्रयोजन है, लेकिन इस 'हेतु' तत्त्व की व्याख्या करना असंभव तो नहीं है, परंतु जटिल अवश्य है, क्योंकि प्रत्यक्ष रूप में हम नित्य प्रति ऐसी बातों की जानकारी या कई काम ऐसे भी करना चाहते हैं, जिनसे अपना कोई हेतु सिद्ध नहीं होता या हमसे तथा अपेक्षित बात की जानकारी या उसके प्रति किये जाने वाले कार्य से हमारा कोई प्रत्यक्ष या हमारे स्वयं के संज्ञान में कोई जुड़ाव प्रतीत नहीं होता, फिर भी वह हमारे लिए प्रयोजनीय है। वैसे प्रत्यक्ष रूप से प्रयोजन, प्रयोजनीय या प्रयोजनीयता, नाक शब्दों का अभिप्राय स्वार्थातात्मक

'हेतु', 'हेतुनीय' या 'हेतुनीयता' तत्त्व से गर्भित दिखाई देता है, जबकि उसमें 'उपयोग', 'उपयोगी' या 'उपयोगिता' तत्त्व का भी समावेश है, परन्तु 'उपयोग' या 'उपयोगिता' भी स्वार्थतात्मकता से आविष्ट हैं। इससे अलग जब हम इस शब्द को अहेतुकता या केवल जिज्ञासा से संदर्भित करते हैं तो यह मान स्वभाव के किसी अनजाने तत्त्व से जुड़ जाता है, अनुवाद की भूमिका में हिन्दी की क्या प्रयोजनीयता हो सकती है, इसकी व्याख्या भी बहुत गूढ़ ही है। स्वभाव से ही मनुष्य संचरण क्रिया के प्रति सचेष्ट रहता है, जिसे वह अपनी वाणी, बोली और भाषा के द्वारा भी करता है, जो हेतुक भी होती है और अहेतुक भी, इसलिए हिन्दी भाषी या अन्य कोई भाषा-भाषी दूसरे भाषा-भाषी से स्वाभाविक रूप से संबंध स्थापित करना चाहते हैं, तो ऐसे संबंध स्थापित करने की क्रिया को 'प्रयोजनीयता' कहा जायेगा। अतः इस आधार पर कहा जा सकता है कि हिन्दी भाषा की प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका का स्थान संचरण की उपलब्धि, पारस्परिक मेल-जोल, स्नेह की ही नहीं, बल्कि हिन्दी भाषियों के संबंध विश्व मानवता से कराकर अनेक हेतुओं की सिद्धि कराती है।

हिन्दी भाषा का प्रत्यक्ष संबंध संस्कृत से है और भारत की प्रायः सभी भाषाओं का मातृत्व संबंध है, संस्कृत से है। अतः सभी भारतीय भाषायें हिन्दी की बहनें हैं, जो अपनी अन्तरात्मा को एक-दूसरे के निकट लाने का काम करती रही हैं, क्योंकि भारत के सभी भाषा-भाषियों का इतिहास एक है, सभी के आदर्श पुरूष और देवी-देव या भगवान समान हैं, अतः हिन्दी की या अन्य भारतीय भाषाओं में परस्पर अनुवाद की भूमिका अहेतुक और स्वाभाविक रही है, परन्तु स्वाभाविक अहेतुकता में भी हेतुकता के प्रच्छन्न तत्त्व होते हैं, जो प्रयोजनीयता के अस्तित्त्व की अनुभूति कराते ही हैं। हिन्दी की प्रयोजनता में भी अनुवाद की भूमिकाओं में हिंदी को राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर गौरवान्वित किया है।

भारत में हिन्दी वर्तमान समय में राष्ट्रीय भाषा है, परंतु इसके महत्त्व को सर्वप्रथम ब्रह्म समाज के संस्थापक राजा राममोहन राय ने पहचाना था, जब ईसाई मिशनरियों ने भारत के प्राचीन साहित्य, परम्पराओं तथा रीति-रिवाजों की कटु आलोचना शुरू कर दी थी। उन्होंने भी हिन्दी-पत्रकारिता में अपने कदम रखे और उसके बाद कलकत्ता से ही हिन्दी के समाचार-पत्रों के प्रकाशन का क्रम आरम्भ हुआ। इसका अर्थ यही है कि, उस समय जब भारत में यातायात के सुचारू और सुलभ साधनों का अभाव था, हिन्दी को बंगाल में आदर प्राप्त था। हिन्दी की

प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका का अवतरण हुआ। यूरोप के साथ हुए भारतीय संपर्कों ने यूरोपियन विद्वानों को हिन्दी भाषा से परिचित कराया तथा हिन्दी का भी यूरोपियन भाषाओं से परिचय हुआ, जिनमें भारत के ब्रिटेन से राजनीतिक संबंध होने के कारण संबंध भी प्रयोजनीय थे, परन्तु उस समय यूरोप में वैज्ञानिक उन्नति अपने चरम की ओर अग्रसर हो रही थी। हिन्दी के लिए अनुवाद की भूमिका स्वाभाविक रूप से प्रयोजनीय थी, जो भारत के नव जागरण के लिए अत्यधिक विशिष्ट था।

भारत कई वर्षों तक मुगलशासन के अधीन रहा। उस समय संस्कृत ही वह सांस्कृतिक धरोहर थी, जिसके बल पर उसने इस्लाम के उस प्रयत्न को असफल कर दिया था, जिसमें वह मध्य एशिया में सफल हुआ था। अनुवाद की भूमिका ने भारत की इस सांस्कृतिक धरोहर से पाश्चात्य जगत को परिचित कराया तो उसकी चकाचौंध से वह स्तब्ध-सा हो उठा। दूसरी तरफ भारत के लोग यूरोपिय संस्कृति के भौतिक दर्शन पर मंत्रमुग्ध हुए तथा उससे मुक्ति पाने का कार्य भी भारत को स्वाभाविक रूप से यूराप के भौतिक पक्ष में ही दिखाई दिया था, अत: भारतीय यूरोपीय संस्कृति से प्रभावित हो उठे। ऐसे प्रभाव का दूसरा कारण भारतीय जन-जीवन का अंग्रेजों से भी प्रजा और राजा के संबंध थे। भारतवासियों को अंग्रेजी शासन-व्यवस्था में जीविका की खातिर सामंजस्य प्राप्त करने की होड़ लगी हुई थी। जिस शिक्षा को भारतीय ग्रहण कर रहे थे। वह भी उन्हें नये सांस्कृतिक मूल्यों को अंगीकार करने के लिए प्रेरित करने वाली थी, अत: हिन्दी की प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका बड़ी स्पष्ट रूप से प्रकट हो चुकी थी। भारत का नव-शिक्षित वर्ग अधिक से अधिक यूरोपीय ज्ञान से परिचित होने को उत्सुक था। अत: हिन्दी की प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका ने दोनों ही तरह–हेतुक भी और अहेतुक रूप से प्रवेश पा लिया था। शिक्षित वर्ग कार्ल मार्क्स के दर्शन का निर्द्धन लोगों को ज्ञान कराने हेतु अत्यधिक व्यग्र था। राजनीतिक कारण से भी हिन्दी भाषा में विदेशी साहित्य का अनुवाद हुआ। ज्ञान की व्यापकता को इस कार्य ने बहुत विस्तार प्रदान किया। इसी कारण हिन्दी के विकास में इसका बहुत योगदान रहा। प्रेस के प्रसार ने इसको और असंगठित किया। वैसे हिन्दी या अन्य भारतीय भाषाओं के लिए अनुवाद कार्य कोई नवीन कार्य नहीं था। संस्कृत के ग्रन्थों का अनुवाद समय भारतीय भाषाओं में पहले से ही किये जाने की परम्परा विद्यमान थी। प्रेस के चलन ने उसे और विकसित किया। हिन्दी भारत के एक बहुत बड़े भू-भाग की भाषा थी, भले ही

उसकी बोलियाँ विविध थीं, परन्तु हिन्दी में नये साहित्य सृजन ने, जिसमें अनुवाद कार्य भी शामिल था, एक समान रूप दिया। अरबी और फारसी पर हिन्दी के प्रभाव से भारत में उर्दू का जन्म हुआ था, जो पहले 'हिन्दी' पुकारी जाती थी, बाद में फारसी लिपि में लिखी जाने के कारण इसे 'उर्दू' नाम दिया गया। 'हिन्दी' के इस फारसी रूप में भी अनुवाद कार्य चलता रहा। संस्कृत साहित्य का उर्दू और फारसी तथा अरबी में अनुवाद हुआ और फारसी साहित्य का 'हिन्दी' नामधारी काल में ही हिन्दी में अनुवाद हुआ था। अतः हिन्दी के समृद्ध होने का मर्ग अनुवाद ने बहुत पहले ही प्रशस्त कर दिया था।

भारत की विभिन्न क्षेत्रीय भाषा जैसें–तमिल, तेलुगू, बंगला, पंजाबी, मराठी इत्यादि के साहित्य के अनुवाद ने हिन्दी को समृद्ध करने के साथ–साथ उसकी प्रयोजन शीलता को भी स्थापित किया है। बंग्लाके श्रेष्ठ साहित्यकारों–रवीन्द्रनाथ टैगोर, शरतचन्द्र, बंकिमचन्द्र, विमल मित्र इत्यादि अनेक लेखकों के साहित्य ने हिन्दी साहित्य को अनुवाद के मार्ग से ही प्रभावित किया है। उर्दू साहित्य के प्रमुख रचनाकार प्रेमचन्द्र को कौन नहीं जानता, वह मूलरूप में उर्दू के ही साहित्यकार कहे जाते हैं। अंग्रेजों के शासनकाल में भी उर्दू ही राजभाषा रही थी, अतः फारसी लिपिधारणी हिन्दी (उर्दू) में बहुत साहित्य सृजन हुआ और अनुवाद भी हुए, परन्तु इसके बावजूद भी हिन्दी ने अपना प्रौढ़ स्वरूप इसी समय धारण किया जिसमें अनुवाद की भूमिका बहुत अधिक थी।

अनुवाद के कारण ही प्रशासन में हिन्दी की प्रयोजनियता महत्त्वपूर्ण रही है। प्रायः हिन्दी पढ़े–लिखे लोग उर्दू के दस्तावेजों का हिन्दी में अनुवाद कराया करते थे। इस प्रक्रिया में और भी विकास उर्दू से अंग्रेजी के अनुवाद कार्य ने किया, क्योंकि अंग्रेज शासनाधिकारियों को हर दस्तावेजों को समझने के लिए उर्दू से अंग्रेजी में अनुवाद कराना पड़ता था। इसके फलस्वरूप भारतीय अनुवाद कार्य में प्रबुद्ध हुए। अतः अंग्रेजों के शासनकाल में भी यह कार्य निरन्तर बढ़ता रहा। मुगलकाल में फारसी शासन की भाषा थी। अंग्रेजों के शासनकाल में उर्दू के साथ अंग्रेजी भी स्वीकृत हुई थी। लोग अंग्रेजी न जानने के कारण परेशान होते थे। उन्हें अपनी अर्जी कचहरी में पेश करने के लिए भी अंग्रेजी अनुवाद का सहारा लेना पड़ता था।

भारत की आजादी के बाद संविधान निर्माताओं ने प्रशासन की भाषा के संबंध में भी प्रावधान किया। तद्नुसार राज्यों का भीतरी प्रशासन राज्य की भाषा

में करने की व्यवस्था हुई। पूरे देश के प्रशासन के लिए हिन्दी को राजभाषा स्वीकार किया गया। हिन्दीत्तर-भाषी लोगों के लिए हिन्दी में प्रशासकीय पत्र-व्यवहार की कठिनाई महसूस करते हुए कुछ वर्षों तक अंग्रेजी को सह-राजभाषा के रूप में स्वीकार करने के प्रावधान के कारण प्रशासन के क्षेत्र में अनुवाद कार्य में वृद्धि हुई।

ब्रिटिश प्रशासक के समय भाषा संबंधी जिस नीति का निर्धारण हुआ था, उसने अनुवाद की भूमिका को बहुत सशक्त किया था, क्योंकि उर्दू और हिन्दी के सर्वव्यापी रूप में समानता थी, परन्तु लिपि-अन्तरण के कार्य ने अनुवाद कार्य को ही शक्ति प्रदान की थी।

सरकारी प्रशासन का भाषा अनुसंधान विभाग यदि अनुशीलन करके किसी प्रकार के पत्राचार, नियमावली आदि के सांचे में परिवर्तन करे तो उसका प्रयोग अनुवाद में भी किया जा सकता है और वह प्रचलन में आ जाता है। प्रशासन कार्य कुछ विशिष्ट क्रिया तथा ढर्रे में चलता हैं प्रशासनिक भाषा का प्रयोग कैसा हो, काम में आने वाले उसके परिपत्र कैसे हो, उसकी अंग्रेजी विज्ञप्तियों का अनुवाद किस नीति तथा भाषा में किया जाय तथा पत्राचार का कैसा रूप हो? प्रायः इन सभी बातों में अंग्रेजी का ही अनुकरण किया गया तथा उर्दू का भी। इसने हिन्दी अनुवाद के क्षेत्र को बहुत अधिक विस्तृत स्वरूप प्रदान किया। अतः अनुवाद कार्य को नई दिशा भी प्राप्त हुई। हिन्दी के क्षेत्र में अनुवाद कार्य की इस भूमिका ने भी हिनदी को जनता के निकट पहुँचाया और साधारण बोलचाल की भाषा में बात करने वाले लोगों को विशिष्ट हिन्दी का ज्ञान हुआ। बहुत से ऐसे अंग्रेजी शब्द थे जो बहुप्रचलित थे, उनका रूपान्तर हिन्दी में किया भी गया लेकिन जब जनता ने उन्हें अस्वीकार कर दिया तो वह हिन्दी में भी प्रचलन में आ गये।

सरकारी कार्यालय से प्रशासनिक पत्र-व्यवहार में अंग्रेजी में जो पत्राचार होता है उसमें संकेतित शब्द, संकेतित वाक्यांश, नियत अभिव्यक्तियाँ और नियम संरचनाएँ होती हैं। ये कभी-कभी सामान्य व्याकरणिक प्रक्रिया क नियमों का पालन नहीं करतीं। इनको बदलने का अधिकार प्रशासन व्यक्तियों को नहीं है। अतः इनके प्रमाणिक अनुवाद में दक्षता पाना प्रशासनिक हिन्दी में पत्र-व्यवहार हेतु बहुत जरूरी होता है।

अंग्रेजी के संकेतित शब्दों के निन्यानवे प्रतिशत सामान्य शब्द ही हैं। उन्हें प्रशासन में विशिष्ट रूढ़ अर्थ दिया जाता है। ऐसे रूढ़ शब्दों को बदलकर उनके पर्यावाची सामान्य शब्दों का व्यवहार करने की अनुमति नहीं है। इनके हिन्दी

पर्यायों को गढ़ने का काम सरकार का होता है। हिन्दी-भाषी राज्य कई हैं और प्रत्येक हिन्दी-भाषी राज्य की सरकार प्रशासनिक अंग्रेजी के संकेतित शब्दों का पृथक्-पृथक् अनुवाद करने का प्रयत्न करती रही है। अब यह कोशिश लगातार हो रही है कि पूरे भारतवर्ष में एक ही समेकित हिन्दी शब्दावली का प्रयोग प्रशासन में किया जाए।

अंग्रेजी संकेतित शब्दों के लिए हिन्दी अनुवाद के कुछ उदाहरण-

Affidavit शपथ-पत्र।
Appropriation विनियोजन
Copyist प्रतिलिपिकार
Days of grace रियायती दिन
Linked file संलग्न फाइन।

सरकारी कार्यालय में कामकाज के संकेतित शब्द और सामन्य शब्द दोनों प्रयुक्त होते हैं विभागों के अनुसार शब्दों का अर्थ भी बदलता है। अंग्रेजी के हजारों शब्द नानार्थवाची हैं और वे प्रसंगानुसार अलग-अलग अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। अनुसंधान विभाग का यह कार्य है कि उनके प्रयोगों को प्रसंग रूप में निश्चित करें। इन सब कारणों से हिन्दी की प्रयोजनीयता में अनुवाद की भूमिका सरकारी स्तर पर भी महत्त्वपूर्ण होती है।

उदाहरण-

Balance तराज, संतुलन, शेष, बकाया।
Bar सिल्ली, रोक, शराबघर, कठारा, वकील-समुदाय।
Bill बीजक, विधेयक, विज्ञापन, विवरण।
Capital शिर-संबंधी, राजधानी, मूर्द्धन्य, पूँजी, बड़े अक्षर।
Drive आन्दोलन, संचालन, कर्मशक्ति, सैर, प्रचार।
Section धारा, अनुभाग, खण्ड, विभाग।

अनुवाद करने में बहुत ही सावधानी बरतने की जरूरत होती है, क्योंकि अनुवाद कार्य में विभिन्न शब्दों के पर्यायों का समानरूपित भाव प्रसंग में किये जाने वाले विभिन्न प्रकार के शब्द प्रयोग, साहित्यिक दृष्टि से भाषा समृद्धि को योग तो प्रस्तुत कर सकते हैं, परन्तु पाठक को भ्रमित भी कर सकते हैं और ऐसे शब्द प्रवाह युक्त न हों तो श्रेष्ठ अनुवाद का स्वरूप गढ़ने वाले नहीं माने जाते। यह सब बातें अनुवाद क्रिया से संबंधित है। प्रशासनिक अनुसंधान क्रिया की प्राय: यह कमी होती है कि वह अनुवाद प्रक्रिया को ध्यान में नहीं रखता, क्योंकि

वहाँ बहुत से लोगों में मत-वैभिन्य भी होता है तथा वह विद्वान् भी नहीं होते तथा उनमें सृजनशीलता भी नहीं होती। ऐसी स्थिति में जो शब्द आम रूप से प्रयोग में आते रहे होते हैं, वहीं उसके प्रवाही प्रयोग के कारण गुणवत्ता धारण करके जन-साधारण की बोलचा में आ जाते हैं। इस तरह से सरकारी कामकाज में जिस प्रकार अनुवाद संबंधी मानक शब्दों का निर्धारण होता रहा है, उनमें से अधिकांश को प्राय: अंग्रेजी शब्दों के रूढ़ प्रयोग ने चयन से बाहर कर दिया है। स्वाभाविक है कि ऐसे शब्द हिन्दी में मिश्रित होकर हिन्दी के हो गये हैं। ऐसे शब्दों का प्रयोग साहित्यकार भी कर रहे हैं। यह अनुवाद कार्य की ही देन है, जो लाभप्रद भी है। **श्री काशीराम शर्मा** ने लिखा है, यदि प्रत्येक अनुवादक अपने-अपने हिन्दी पर्याय गढ़े तो भाषा-विषयक भ्रांति बड़ी अहितकर हो सकती है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के dismissal (from service), removal (from service), termination (of service) और discharge (from service) जैसे शब्दों के अर्थों में सूक्ष्म अर्थभेद होने के कारण उन सबके लिए भिन्न-भिन्न पर्याय का निर्धारण करके हमेशा ही उन्हीं पर्यायों का प्रयोग करना उपयुक्त समझा जायेगा।

तकनीकी के विकास ने पूरी दुनिया को नजदीक ला दिया है। दुनिया के किसी एक देश में हुई ज्ञान-विज्ञान की प्रगति की जानकारी आज अनुवाद के माध्यम से ही दूसरे देशों तक पहुँचाई जा सकती है। यह सत्य है कि आधुनिक विज्ञान का सूर्योदय यूरोप में ही हुआ था, परन्तु उसी विज्ञान के सूर्य ने जब संसार के आकाश में चढ़ना शुरू किया तो संसार के सभी देशों में उसके आलोक ने आप्लावित कर दिया और वह मात्र यूरोप का न रहकर सभी देशों का हो गया। उसने सभी देशों को वैज्ञानिक समन्वय की राह दिखाई, परन्तु यह ध्यान देने की बात है कि विज्ञान के इस सूर्य की किरणों का प्रवाहक अनुवाद ही था। जिस तरह अनुवाद की भूमिका अन्य भाषाओं की प्रयोजनीयता में रही उसी तरह हिन्दी की प्रयोजनीयता भी परिलक्षित हुई है। हिन्दी ने भी अपने भक्ति, रीति और आधुनिक साहित्य की समृद्धि के बल पर अनुवाद के माध्यम से ही जो सम्मान विश्व में अर्जित किया, उसने विश्व साहित्य सृजनकला में जो प्रयोग हुए, जितनी नवीन विधाओं में साहित्य रचना हुई, उन सबको अनुवाद की भूमिका ने अपना बनाने में गम्भीर कार्य किया। संसार की सभी भाषाओं की आँखें आज इसी कारण हिन्दी पर लग चुकी हैं। यही नहीं हिन्दी ने पूरे विश्व को पूरी तरह से जोड़ दिया हैं इस संबंध में यह उक्ति प्रचलित हो गई है—जिस भाषा में अनुवाद

साहित्य जितना अधिक प्रचुर परिणाम में है, उस भाषा के बोलने वाले उतने अधिक सभ्य एवं विकसित हैं। अंग्रेजी भाषा इस क्षेत्र में अग्रणी है। आज विश्व के किसी भी कोने में हुई नई उपलब्धि का सर्वप्रथम अनुवाद अंग्रेजी में होता है। तभी तो आज यह भाषा विश्व की सर्वाधिक समृद्ध भाषा समझी जाती है।

दुनिया की कई भाषाओं में समृद्ध साहित्यिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक सामग्री उपलब्ध है। किसी भी व्यक्ति के द्वारा सभी भाषाओं का सीखना न तो सम्भव है और न ही वांछनीय। अनुवाद द्वारा ही इस समस्या का निदान हो सकता है।दुनिया की सभी भाषाओं में हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है, जो पूर्णरूपेण वैज्ञानिक है। उसके प्रति संसार के आकर्षित होने का एक कारण यह भी है। अत: हिन्दी को भी अपने इस गुण प्रभाव को और भी अधिक प्रज्ज्वलित करने की जरूरत है।

भारतीय प्राचीन साहित्य का ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में वही स्थान है, जो आधुनिक साहित्यों में यूरोपियन या अंग्रेजी भाषा का है। अत: हिन्दी का यह दायित्व है कि वह भारत के प्राचीन ज्ञान-विज्ञान को पूरी शक्ति से फैलाये। इस दायित्व का निर्वाह अनुवाद कार्य द्वारा किया जाना सम्भव है। किसी भी साहित्यकार की यह इच्छा रहती है कि उसका अधिक से अधिक आत्मविस्तार हो, उसका व्यष्टिरूप अधिक से अधिक व्यापक स्तर पर समष्टि का रूप ले। यह तभी हो सकता है जब उसकी रचना अपने देश की सीमा से बाहर तथा देश में प्रचलित दूसरी भाषाओं के भाषियों तक पहुँचे। यह कार्य अनुवाद द्वारा ही सम्भव है। हिन्दी भाषा के अनेक कवि और लेखक अनुवाद के द्वारा हो सकता है।

पाठक के ज्ञान की भूख को बुझाने में जहाँ अनुवाद सहायक सिद्ध होता है, वहाँ किन्हीं दो भाषाओं के साहित्य की तुलना और मूल्यांकन में भी अनुवाद के योगदान को नकारा नहीं जा सकता। शेक्सपियर और कालिदास की तुलना इस दिशा में एक उदाहरण है।

उदारीकरण के इस दौर में दुनिया के सभी देश एक दूसरे पर निर्भर हैं। एक राष्ट्रा को दूसरे राष्ट्र के निकट लाने और एक-दूसरे को समझने-समझाने के लगातार प्रयत्न हो रहे हैं। यहाँ भी सबसे बड़ी बाधा भाषा है। अनुवाद कार्य ही इस बाधा को दूर करने में एकमात्र साधन है। भारत अपनी प्राचीन संस्कृति, धर्म तथा परम्पराओं के रस से सिंचित होने के कारण इस देश अवश्य है, उसकी सांस्कृतिक राष्ट्रीयता में भी कोई दरार नहीं है, परन्तु आधुनिक विश्व में जिस

राजनीतिक आधार पर राष्ट्रीयता की परिभाषा की जाती है, उसको सुदृढ़ रूप से प्राप्त करना भाषागत भेदभाव से ऊपर उठ जाने पर ही सम्भव हो सकेगा। यह दायित्व भी अनुवाद के कन्धों पर ही है।

वर्तमान समय में पूरी दुनिया बौद्धिक रूप में एक दूसरे से जुड़ा हुआ मालूम होता है। सभी बुद्धिवादी, नैतिकता और मानवीय पक्षों पर एक-दूसरे से कम हल्की बात नहीं करते, भाव स्तर पर भी वह सांस्कृतिक जीवन की जटिलता को सरल करना चाहते हैं, उसकी चेष्टा भी करते हैं, लेकिन मातृदेशीय मिट्टी और अपनी मान्य उपासना पद्धतियों में रचा-बसा भाव पक्ष, उन्हें इस स्तर पर नहीं आने देता जिसे भाव स्तरीय संश्लिष्टता कहते हैं, परन्तु ऐसा नहीं है कि यह कार्य न हो सके। इस युग को परिष्कृत करने के गुण यदि संसार के किसी उपासना पक्ष में हैं तो वह भारत में ही हैं, क्योंकि हिन्दी और संस्कृत को मानने वाली संस्कृति किसी भी व्यक्ति द्वारा आरोपित की हुई संस्कृति नहीं है। यह एक स्वयं प्राकृतिक मानवीय स्वरूप से प्रसूत संस्कृति है, अतः इस उपलब्धि को प्राप्त करना भी हिन्दी का एक गम्भीर प्रयोजन होना चाहिए, जिसकी भूमिका सिर्फ ओर सिर्फ अनुवाद ही निभा सकता है।

हिन्दी प्रयोजनीयता का प्रगतिशील स्वरूप

भारत के सांविधानिक नक्शे में हिंदी भाषा राजभाषा के रूप में मान्य है। यह राष्ट्रभाषा है और सम्पर्क भाषा भी। ज्ञान-विज्ञान, अन्तरानुशासनिक एवं अन्तर्सांस्कृतिक प्रचार-प्रसार इत्यादि में सांविधानिक रूप से मान्यता प्राप्त यह एक वैध भाषा है। इस बारे में भारतीय संविधान में अनुच्छेद 343 से अनुच्छेद 351 के अन्तर्गत काफी कुछ लिखित एवं वर्णित है। यही नहीं अनुच्छेद 120 में संसद में भाषा-प्रयोग के बारे में हिंदी की स्थिति स्पष्ट है, तो अनुच्छेद 210 में विधान-सभा एवं विधान-परिषद में हिंदी के प्रयोग को लेकर ठोस दिशा-निर्देश उल्लिखित है। वहीं सम्पर्क-भाषा कहने का अर्थ-आशय रोजमर्रा के प्रयोग-प्रचलन की भाषा, कुशलक्षेम, हालचाल की भाषा, आमआदमी के बोली-बर्ताव की भाषा। यह हमारी आय और आमदनी की भाषा भी है, जिसे पारिभाषिक शब्दावली में इन दिनों प्रयोजनमूलक हिंदी कहा जा रहा है। दरअसल, प्रयुक्ति की दृष्टि से यह नवाधुनिक क्षेत्र है, जिनका महत्त्व एवं प्रासंगिकता हाल के दिनों में तेजी से बढ़े हैं। जैसे मीडिया, विज्ञापन, सिनेमा, अनुवादक, राजभाषाधिकारी, पुस्तक प्रकाशन, अकादमिक क्षेत्र, व्यावसायिक

अनुप्रयोग, बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ आदि। यह सचाई है कि देश के अंदर और बाहर हिंदी की स्थिति में सुखद परिवर्तन आया है। हिंदी बाजार की भाषा बन रही है। हिंदी के व्यावसायिक क्षेत्र का निरंतर विस्तार हो रहा है। यह स्थिति भारत में ही नहीं, बाहर भी है। आज दुनिया के सभी प्रमुख राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में हिंदी का अध्ययन-अध्यापन हो रहा है।

सूचना-प्रौद्योगिकी के इस बदलते परिवेश में अनगिन चुनौतियों के बावजूद हिंदी तथा अन्य भारतीय भाषाओं ने धीरे-धीरे अपना स्थान बना लिया है और प्रगति के पथ पर अग्रसर है। हमें इस तथ्य को भी नहीं बिसारना होगा कि सूचना प्रौद्योगिकी के सन्दर्भ में हिंदी तथा भारतीय भाषाओं का भविष्य उज्ज्वल तो है, परन्तु बहुत कुछ प्रयोक्ता की माँग पर निर्भर करता है। यद्यपि एक सर्वेक्षण के अनुसार 44 प्रतिशत भारतीय हिंदी वेबसाइटों और सर्च इंजनों की माँग करते हैं। अर्थात् हिंदी भाषा के प्रयोग-व्यवहार से संबंधित प्रयुक्ति-क्षेत्र में इजाफा एक ऐसी सचाई है, जिसे झुठला सकना अब मुमकिन नहीं है। डॉ. श्याम शंकर सिंह अरुणाचल प्रदेश स्थित राजीव गाँधी विश्वविद्यालय में हिंदी भाषा के अध्यापक हैं। वे हिंदी भाषा की बुनियादी खूबी बताते हुए कहते हैं-''हिन्दी अपनी सरलता के कारण देश के बहुसंख्यक वर्ग में महत्त्वपूर्ण बनी हुई है। जनभाषा बनी हुई है। लोकभाषा बनी हुई है। संभवत: यही एकमात्र भाषा है, जिसे बोलने के लिए व्याकरण की कक्षा में बैठने की अनिवार्यता नहीं है। हमारे भाई जो कुली हैं, रिक्सा खींचने का काम करते हैं, खोमचे वाले हैं, श्रमजीवी हैं-सभी व्याकरण की शिक्षा लिए बिना ही सहर्ष इस भाषा के साथ जुड़ चले। ऐसा इसलिए हुआ कि हिन्दी में सम्प्रेषण वाला पक्ष सफलतापूर्वक साध लिया। कमा चलाने की दृष्टि से हिन्दी बेजोड़ सिद्ध हुई है। उदारीकरण-भूमंडलीकरण, उपभोक्तावाद -बाजारवाद एवं सूचना क्रांति जनसंचार की प्रमुखता के इस युग में हिन्दी ने अपने महत्त्व को प्रमाणित किया है।'' इसी प्रकार विपणन-बाजार की मोटी आय का साधन हिंदी विज्ञापन किस कदर प्रमुख भूमिका में हैं, यह अलग से कहने की आवश्यकता नहीं है। बॉलीवुड फिल्मों का भारत से बाहर जलवा कितनी जबर्दस्त है। इस सचाई से हम-सब अवगत हैं। इसी तरह हॉलीहुड फिल्मों का हिंदी में रूपांतरण और उसकी लगातार माँग हिंदी माध्यम में दिख रहे अवसर का बेमिसाल नमूना है।

हिंदी के वैश्विक परिदृश्य आज तेजी से बदल रहे हैं। भारत से बाहर रचे-बसे प्रवासी भारतीयों का हिंदी के प्रति राग-अनुराग-वैराग अलग धरातल पर

है, जिस ओर हमारा ध्यान जाना लाजिमी है। प्रवासी भारतीयों ने हिंदी-अंग्रेजी का विवाद खड़ा किए बिना हिंदी को जो ऊँचाई, मान और तवज्जों प्रदान की है। इसका अनुमान फेसबुक, ट्विटर, सोशल मीडिया के जानकारों को सर्वाधिक होना चाहिए। आज हिंदी भाषा यूनीकोड संस्करण के अन्तर्गत अमेरिकी आलाकमानों तक से बतिया ले रही है तो मॉरीशस के सचिवालय तक में अपनी मजबूत पैठ रखने में सफल है। भाषाविद् महावीर सरन जैन भी इस बात की पुष्टि करते हैं। उनके मुताबिक हिंदी का वैश्विक परिप्रेक्ष्य समुन्नत, नवाचारी और विचारान्वेषी है। केन्द्रीय हिंदी निदेशालय से प्रकाशित 'भाषा'पत्रिका में प्रो- जैन ने भाषा के व्यवहार एवं व्यक्तित्त्व के लोकमनोविज्ञान को गंभीरतापूर्वक देखने-समझने की चेष्टा की है। इसके लिए उनके द्वारा चुना गया प्रविधिगत उपकरण बेजोड़ हैं। वस्तुतः वे भाषा की निरन्तरता(रेगुलरिटी), ढाँचा(स्ट्रक्चर), कार्य(फंक्शन), परिवर्तन(चेंज), अर्थ का सम्बोध(कन्सेप्ट ऑफ मीनिंग) आदि पर विशेष बल देते हैं, जिसका अनुसरण करते हुए क्षेत्रियता के बाहर और वैश्विकता के अन्दर हिंदी भाषा का आधुनिक संदर्भ निःसंदेह महत्त्वपूर्ण है और अप्रतिम सृजनात्मकता का परिचायक भी।

इस घड़ी हिंदी के बारे में महात्मा गाँधी की सोच हमें बेजोड़ मालूम देती है- "प्रांतीय भाषा या भाषाओं के बदले में नहीं बल्कि उनके अलावा एक प्रांत से दूसरे प्रांत का संबंध जोड़ने के लिए सर्वमान्य भाषा की आवश्यकता है और ऐसी भाषा तो एकमात्र हिंदी या हिंदुस्तानी ही हो सकती है।" इस कथन के आलोक में लिपि का सन्दर्भ लेना भी उचित होगा कि भाषा मानव-व्यवहार की विलक्षणता और बुद्धिमता की सूचक है। भाषा के माध्यम से ही मानव अपने भावों, विचारों को दूसरे तक पहुँचाने में समर्थ होता है। भाषा की इसी निरन्तरता से प्राचीन साहित्य, विज्ञान, पारम्परिक धरोहर, लोकसंस्कृति आदि हमें इतने वर्षों बाद भी उपलब्ध है और यह संभव हुआ है लिपि के कारण। लिपि ही किसी भाषा की समृद्धि और उसके व्यवहार-क्षेत्र को दर्शाती है। भाषा के व्यवहार-क्षेत्र की व्यापकता के कारण ही स्वतन्त्रा के पश्चात 14 सितम्बर, 1949 को देवनागरी में लिखित हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में स्वीकार किया गया। इस तरह अट्ठाइस स्वतंत्र राज्यों एवं सात केन्द्रशासित प्रदेशों से मिलकर बना भारत(इंडिया) एक बहुभाषाभाषी राष्ट्र है। सर्वेगत आँकड़ों के अनुसार(भारतीय जनगणना सर्वेक्षण, 1961, भारत में बोली जाने वाली भाषाओं की संख्या 1652 मानी गई हैं। इनमें से सिर्फ

22 भाषाएँ संविधान की अष्ट्म अनुसूची में शामिल हैं। इन सबमें हिंदी भाषा की प्रकृति समन्वयकारी और समुच्चयबोधक है।

दरअसल, आधुनिक भारतीय भाषाओं में हिंदी का प्रयोग क्षेत्र विशाल और बहुपरतीय है। हिंदी की लिपि देवनागरी है, जिसके सतत् विकास संबंधी बृहद् विवेचना अनुच्छेद 343 से अनुच्छेद 351 के अन्तर्गत भारतीय संविधान में प्रदत है। डॉ विमलेश कांति वर्मा का मत द्रष्टव्य है,-' '-हिंदी वस्तुतः एक भाषा ही नहीं वरन् एक भाषा समष्टि का नाम है। खड़ी बोली, ब्रज, बुंदेली, कन्नौजी, हरियाणवी, अवधी, बघेली, छतीसगढ़ी, मैथिली, मगही, भोजपुरी, मारवाड़ी, मेवाती, जयपुरी, मालवी, गढ़वाली तथा कुमाउँनी हिंदी की प्रधान शैलियाँ हैं, जो क्षेत्र-विशेष में वहाँ के रहवासियों की भावाभिव्यक्ति एवं अभिव्यंजना का माध्यम है। इस भाषा का अपना लोक-साहित्य समृद्ध है। इनमें परिनिष्ठित खड़ीबोली को भारतीय संघ की राजभाषा होने का गौरव प्राप्त है। आज हिंदी का अर्थ सामान्यतः खड़ीबोली लिया जाता है, जो साहित्य शिक्षा तथा साधन के माध्यम के रूप में प्रयुक्त होती है। हिंदी इस प्रकार एक जनभाषा है, सम्पर्क भाषा है, राजभाषा है और देश की राष्ट्रभाषा है। हिंदी एक समृद्ध भाषिक, साहित्यिक तथा सांस्कृतिक परम्परा की वाहिनी है। वह संस्कृत जैसी सम्पन्न भाषा की उत्तराधिकारिणी है, तो पालि-प्राकृत की सहमेली सखा-मित्र। डॉ शिवनन्दन प्रसाद की दृष्टि में-"-हिन्दी से तात्पर्य उस भाषा या भाषा परिवार से है, जो भारत की राष्ट्रभाषा है, जो प्राचीन ग्रंथों के मध्य प्रदेश कहे जाने वाले विशाल भूभाग की जिसके अंदर बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश और दिल्ली समाविष्ट हैं, प्रधान साहित्यिक भाषा रही है और जिसके अंतर्गत अनेकानेक बोलियाँ-बोलियाँ सम्मिलित हैं।"

संक्षेप में कहें, तो स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद भारतीय समाज को एकजुट और एकाग्र करने में हिंदी भाषा की भूमिका अनिर्वचनीय रही है। अर्थात् यह हिंदी ही है, जिसने हमारे राष्ट्राध्यक्षों के सीने को फुलाया है। विदेशी सरजमीं पर भारतीय हमजबान लोगों के बीच 'मेक इन इंडिया'का गर्जन-तर्जन करने का सुअवसर प्रदान किया है। आज भी हिंदी ही वह सबसे माकुल भाषा है, जिसमें चुनाव लड़ा जाता है। फिल्मी गाने गाए जाते है। कविता, कहानी और उपन्यास लिखे जाते हैं। हिंदी का दायरा भारतीय परिक्षेत्र तक सीमित-परिसीमित नहीं है। अंग्रेजी के दावतखाने में तथाकथित बौद्धिकों के लामबंद होने के बावजूद हमारी हिंदी बन-सँवर रही है, क्योंकि उससे जुड़ी देश की एक बड़ी आबादी अपनी

भाषा निधड़क बोलती समझती है। उसे यूजीसी पता है और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग भी। उसे रेल पता है, तो सवारी गाड़ी भी। वह मिरर जानती है और आइना-दर्पण भी। वह दिस-दैट जानती है, तो आप-तुम-तू भी। यह क्षेत्रिय है और वैश्विक भी। इंटरनेटी है, तो कविताकोशी भी। अतएव, हिंदी दिवस पर ऊपरी आर्तनाद और चीत्कार करने वाले विकलांग बौद्धिकों से यह इल्तजा है कि यदि वे वर्तमान समस्याओं अथवा भविष्य की संभावनाओं को लेकर कुछ विशेष और मौलिक नहीं रच सकते, तो अपनी अयोग्यता भी किसी पर नहीं थोपे। नई पौध, नौजवान पीढ़ी, यशस्वी है। ऊर्जावान है, वह अपना असली मुकाम पा लेगीय सही ठीकाना खोज लेगी।

6

कार्यालयीन हिन्दी-अनुवाद

कार्यालयी हिंदी पुस्तक कार्यालयों में प्रयुक्त होने वाले हिंदी भाषा के विभिन्न रूपों, विषयों और तत्त्वों का परिचय कराने का माध्यम है। यह प्राथमिक रूप से स्नातकों के लिए तैयार की गई है। यह मुख्य रूप से दिल्ली विश्वविद्यालय में पढ़ाए जाने वाले बी.ए. प्रोग्राम (स्नातक (कार्यक्रम) के तीसरे अर्द्धवर्ष के पाठ्यक्रम पर आधारित है। अन्य विद्यार्थी, शोधार्थी एवं शिक्षक भी कार्यालयी हिंदी से संबंधित ज्ञानवर्द्धन के लिए इसका प्रयोग कर सकते हैं।

कार्यालयीन हिन्दी का आशय

भारत जब स्वतंत्र हुआ तो यहां पर संविधान अपनाया गया जिसमें हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाया गया। अतः प्रशासनिक कार्यों को, जो अब तक अंग्रेजी में होते चले आ रहे थे, हिन्दी में किये जाने का चलन भी वैधानिक रूप में ही शुरू हुआ। अंग्रेजी में जो कार्य हो रहे थे, उन्हें हिन्दी भाषा में कर पाने में, अंग्रेजी में कार्य करने वाले लोगों के समक्ष समस्या तो थी। कार्यालयी हिन्दी में अधिकांश ऐसे शब्द आ गये थे जिनके सन्दर्भ, आख्या, प्रयोजन और अर्थान्तर ज्ञान का पूरी कार्यालय व्यवस्था व प्रशासन को ज्ञान ही नहीं था, दूसरे बहुत से लोग तो ऐसे थे जो हिन्दी में काम करने को हेय दृष्टि से देखते थे। इसके अनन्तर भारतीय गणतंत्र के बहुत से राज्य भी ऐसे थे जिनको हिन्दी का ज्ञान ही नहीं था। वह या तो अपनी मातृभाषा जानते थे या अंग्रेजी। इस

समस्या का समाधान इस तरह किया गया कि वह पूर्ववत् अंग्रेजी का ही चलन बनाये रख सकते हैं। हालांकि इसके लिए प्रशासनिक हिन्दी या भाषा में पुरानी प्रक्रिया, शब्दावली इत्यादि अनुवाद हुए एवं उनका व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ, फिर भी एक लम्बे समय तक कठिनाइयाँ तथा हिन्दी में कार्य करने के प्रति उपेक्षा धारण की जाती रही। हिन्दी भाषा का व्यवहार आरम्भ हुआ और जहाँ-जहाँ भाषा का व्यवहार किया गया, वहाँ-वहाँ अनुवाद की आवश्यकता हुई। आधुनिक युग में विज्ञान, प्रौद्योगिकी, विधि आदि क्षेत्रों के प्रमाण ग्रन्थ मुख्यतया अंग्रेजी में रहे हैं। भारत के स्वाधीन होने के बाद इन ग्रन्थों की जगह भारतीय भाषा में ग्रन्थ का प्रयत्न हुआ है। इस प्रयत्न में अनुवाद और मौलिक ग्रंथों का निर्माण शामिल है।

प्रशासन भाषा-व्यवहार का एक मुख्य क्षेत्र है। अतः प्रशासन में भी अनुवाद का प्रसंग आता है। इसे स्पष्ट करने के लिए हमें अपने देश की प्रशासनिक प्रणाली पर प्रकाश डालना आवश्यक है। भारत में प्रशासनिक भाषा भी जनता की भाषा हो यकी सही था, किन्तु प्रशासन विशिष्ट क्षेत्र है अतः प्रशासन की तकनीक की जानकारी पाए बिना कोई व्यक्ति प्रशासनिक कार्य कर नहीं सकता। प्राचीन युग में मनुस्मृति, कौटिल्य का अर्थशास्त्र आदि प्रमाण ग्रन्थ थे। प्रशासन में मौलिक रूप से उन्हीं का आश्रय लिया गया और उनमें उपयुक्त प्रशासनिक शब्दों का चुनाव किया गया तथा उन्हीं की विस्तृत व्याख्या की गई।

कार्यालयीन हिन्दी या आलेखन की विशेषताएँ

आलेखन की कुछ मूलभूत विशेषताएँ है–

(1) शुद्धता (Accuracy)- प्रशासकीय आलेखन वह चाहे पत्र रूप में हो या कार्यालय ज्ञापन के रूप में, उसमें साम्रगी एवं प्रस्तुतीकरण का प्रयोग स्पष्टता एवं शुद्धता से किया जाना चाहिए। शुद्धता से तात्पर्य है- आलेखन संबंधी सभी निर्देश, संख्या, तारीख और कथन शुद्धि और इनमें से किसी को लिखने में जरा सी भी गलती हो जाए तो उसके परिणाम बहुत घातक हो सकते है।

(2) परिपूर्णता:- प्रशासकीय कर्मचारी का तबादला होता रहता है अतः आवश्यक है कि जो भी पत्र लिखा जाए वह अपने आप में परिपूर्ण हो तथा स्वयं स्पष्ट हो। उसे किसी प्रश्न की सूचना अथवा जानकारी की अतिरिक्त

आवश्यकता न हो, क्योंकि अगर पत्र में अपेक्षित पूर्णता एवं स्पष्टता नहीं होगी तो स्थानांतरित कर्मचारी उसे ठीक से समझ नहीं पाएगा। अतएव उस पर कार्यावाही में विलंब होना स्वाभाविक है। अत: पत्र पर संदर्भ, संख्या, दिनांक इत्यादि का स्पष्ट रूप उल्लेख हो, पत्र का विषय भी साफ-साफ शब्दों में लिखा जाना चाहिए ताकि उसकी पृष्ठभूमि से आलेखन को परिपूर्ण बनाया जा सके।

(3) विषय- सरकारी कार्यालयों में तैयार मसौदे के विषय भी आवश्यकतानुसार भिन्न-भिन्न होते हैं। फलत: मामलों की स्थिति, लिए गए निर्णय तथा विषय-वस्तु के अनुसार मसौदे का आकार-प्रकार भी अलग-अलग रूप का होगा। अत: आलेखन के विषय और उसके उद्देश्य का आलेखक को पूरा-पूरा ज्ञान होना चाहिए ताकि उसके बारे में लिखते समय आलेखन में कही किसी प्रश्न की कोई अस्पष्टता न रह जाए।

(4) संक्षिप्तता- प्रारूप जहाँ तक सम्भव हो छोटा होना चाहिए ताकि अधिकारी को उस पर अधिक समय व्यय न करना पड़े। परन्तु संक्षिप्ति का यह अर्थ नहीं है कि पत्रोत्तर के सभी मुद्दों का उसमें समावेश ही न हो। संक्षिप्त पर पूर्ण आलेखन आलेखकार की प्रतिभा, अनुभव एवं आलेखन कला की निपुणता का प्रतीक होता है।

(5) उद्धरण- अगर पत्रोत्तर में किसी नियम अथवा किसी उच्चतर अधिकारी के आदेश को उद्धृत करना आवश्यक हो तो यथासम्भव मूल शब्दों में ही उसका उल्लेख किया जाना चाहिए।

(6) विभाजन:- आलेखन को स्थूल रूप से जिन भागों में विभक्त किया जाता है उन्हें क्रमश: निर्देश, प्रकरण, वक्तव्य एवं निष्कर्ष कहते है। पहले भाग में आलेखन के विषय का वर्णन रहता है और अगर इस संदर्भ में कोई पिछला पत्र-व्यवहार हो तो उसका भी निर्देश किया जाता है। इसके बाद आलेखन के दूसरे भाग अर्थात प्रकरण वक्तव्य विषय के पक्ष में विभिन्न तर्क प्रस्तुत कर अपने कथन की पुष्टि की जाती है। तीसरे एवं अंतिम भाग में उन तर्कों के आधार पर निष्कर्ष निकाल कर अपनी सिफारिशें उपस्थित कर दी जाती है।

(7) अनुच्छेदों पर क्रमांक- सामान्यत: प्रारूप-लेखन में भी विषय की आवश्यकता के अनुसार अनुच्छेद किये जाते हैं। छोटे या संक्षिप्त प्रारूपों में एक या दो ही अनुच्छेद होते हैं, किन्तु प्रेस विज्ञप्ति, निविदा सूचना, राष्ट्रपति की ओर

से जारी किये जाने वाले पत्र या परिपत्र में कभी-कभी दो-चार पृष्ठों में प्रारूप तैयार किये जाते है। तथा ऐसे प्रारूप में अनुच्छेदों को क्रमांक भी दिये जाने चाहिए जिससे विषय-वस्तु के आकलन में सुविधा होती है।

(8) प्रतिलिपियाँ- शासकीय पत्र-व्यवहार में अगर मूल पत्र की प्रतिलिपियाँ अन्य अधिकारियों को भिजवानी हों तो पत्र के अन्त में उन सभी महानुभावों का उल्लेख कर देना चाहिए, जिन्हें प्रतिलिपि भिजवाई जा रही हैं।

(9) संलग्न पत्र- अगर मूल पत्र के साथ कुछ संलग्न पत्र भेजना आवश्यक हो तो पत्र के नीचे बाई ओर उसकी सूची दे देनी चाहिए।

(10) भाषा- भाषा में अर्द्ध-विराम एवं पूर्णविराम अत्यन्त महत्त्व का होता है। अत: आलेखन में भद्रजनोनित भाषा का प्रयोग होना चाहिए। संक्षिप्तता, शिष्टता, स्पष्टता एवं विनम्रता प्रशासनिक भाषा की अनिवार्यताएँ है। अतिशयोक्ति वाक्य,वक्रोक्ति, पुन:क्ति तथा मुहावरों-कहावतों के लिए प्रशासनिक भाषा में कोई स्थान नहीं होता है। अत: संक्षेप में आलेखन की भाषा व्याकरण सम्मत सरल, स्पष्ट तथा परिमार्जित हो तथा उसमें संयम, गरिमा, गांभीर्य निवैयक्तिकता होनी चाहिए।

(11) शैली- प्रारूप अथवा मसौदा लिखने की एक विशिष्ट शैली होती है।जिसका अनुपालन आवश्यक है। कार्यालयीन मसौदा पर कागज के दोनों ओर आधा हाशिया छोड़कर लिखा या टाइप किया जाता है। दो पंक्तियों के बीच में काफी जगह छोड़नी चाहिए ताकि आवश्यकता होने पर उनमें कुछ शब्द या वाक्यांश जोड़े जा सके। तथा उसके साथ 'अनुमोदनार्थ आलेख' स्वीकृति के लिए चिट लगाकर सम्बद्ध अधिकारी को भेजी जानी चाहिए।

मुसलमानों और अंग्रेजों के राज्य में प्रशासन की भाषा

मुगल शासनकाल में भारत में प्रशासनिक भाषा फारसी थी। अनुवाद के बिना यह कार्य संभव नहीं था। सब लोग तो फारसी नहीं जानते थे, लेकिन शासन में भाग लेने वालों के लिए फारसी का ज्ञान जरूरी था, किन्तु केरल जैसे सुदूर राज्यों की रियासतों में मलयालम जैसी प्रांतीय भाषाएँ प्रशासन का भी माध्यम रही थीं। उन्हें प्रशासन करने में दिक्कत भी नहीं होती थी, किन्तु दिल्ली दरबार को अपने यहाँ की बातों की सूचना देने के लिए दिल्ली की भाषा फारसी में अपनी भाषा मलयालम की बातें अनुदित करनी पड़ती थीं। अनुवाद के बिना यह कार्य संभव नहीं था।

भारत में प्रशासनिक स्तर पर जब अंग्रेजी भाषा स्वीकृत हो गई थी तब प्रशासन से सामान्य जनता का संबंध कटने लगा था। स्थानीय भाषा में पारंगत लोग भी अंग्रेजी न जानने पर प्रशासनिक क्षेत्र की काई बात नहीं समझ पाते थे। स्वतंत्रता के पश्चात् प्रशासन के नियम, कार्यालयीन आदेश, ज्ञापन, परिपत्र, अधिसूचना, इत्यादि समस्त प्रारूपों का अनुवाद हिन्दी में हुआ एवं अधिकतर पत्र-व्यवहार अनूदित रूप में होने लगा था, परन्तु यह अनुवाद कई बार क्लिष्ट एवं विकट होता था। इसमें ऐसे वाक्यांश जोड़े जाते हैं कि विधि की दृष्टि से पत्राचार बिल्कुल नियमित हो और अदालत में उसे चुनौती न दी जाए। अंग्रेजी की वाक्य संरचना और हिन्दी की वाक्य रचना में एक स्वाभाविक अन्तर होता है। जिसके लिए कोश निर्मित हुए। अत: कार्यालयीन हिन्दी के व्यवहार में ऐसे कोशों की सहायता से ही अनुवाद संबंधी समस्याओं का निदान हुआ। सामान्य व्यवहार में प्राय: कार्यालय कर्मी यह शिकायत करते रहे हैं कि हिन्दी के शब्द क्लिष्ट हैं, परन्तु यह बात, जब अंग्रेजी या फारसी का प्रचलन हुआ होगा, तब भी सामने आई होगी। हिन्दी वाक्य संरचना का निर्वाह करते हुए मूल की सारे बातें अनुवाद में लाना अवश्य ही प्रारम्भ में कुछ कठिन रहा होगा, परन्तु निरंतर अभ्यास से इन कठिनाईयों का निदान हो चुका है।

प्रशासनिक अंग्रेजी का जैसा अनुवाद अब हिन्दी में किया जाता है उसकी जटिलता के बारे में हालांकि अभी तक भी शिकायत की जाती है, परन्तु शिकायत करने वालों में अधिकांश लोग प्रशासनिक भाषा की विधि संबंधी समस्याओं पर कम सोचते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि अब जो भी प्रशासनिक हिन्दी लिखते हैं। वे पहले प्रशासनिक अंग्रेजी का रूप मन में कल्पित कर लेते हैं, जबकि उन्हें अब इस विधि को त्याग देना चाहिए और उन्हें प्रशासनिक हिन्दी का प्रयोग अनुवाद की बात सोचे बिना मूल रूप में ही करनी चाहिए। इसमें योग्यता, अनुभव की मानसिकता तीनों निर्णायक घटक होते हैं, जो मनुष्य को अध्ययन तथा मौलिक चिन्तन की प्रेरणा देते हैं।

अनुवाद की समस्याएँ दो भागों बाँट सकते हैं– शैली प्रधान अनुवाद कार्य सर्जनात्मक साहित्य में किया जाता है,

(1) जबकि सूचना प्रधान अभिलेखों में व्यवहारिक औपचारिकता निहित होती है।

(2) आवश्यकता इस बात की है कि उसे उसके पूर्णरूप में अनूदित कर दिया जाये। उसमें रचनात्मक साहित्य की शैली से प्रस्फुटित भाव तथा क्षेत्रीय

सन्दर्भों की मूल अवधारणा के साथ अनुवाद कार्य में विशेष रूप से सावधान रहना होता है। सूचना प्रधान अनुवाद में मुख्य समस्या पारिभाषिक शब्दों की आती है। इनका प्रयोग करते समय उनकी वास्तविक अवधारणा के प्रति बहुत अधिक सतर्कता बरतनी होती है। कार्यालयी साहित्य सूचना प्रधान साहित्य में ही आता है। इसमें लिखने वाले की वैयक्तिक शैली का प्रश्न ही नहीं उठता। एक अधिकारी किसी एक समस्या को जिस शैली में लिखता है, उस पद पर रहने वाले प्रायः सभी, अधिकारी उसी शैली में लिखेंगे, क्योंकि कार्यालयी भाषा प्रायः सुनिश्चित ही होती है। चाहे वह शब्द प्रयोगी हो या वाक्य रचनात्मक। भाषा की अन्य प्रयुक्तियों में कर्तृवाच्य की प्रधानता होती है। कार्यालयी रूप में कर्मवाच्य की प्रधानता होती है। उसमें कथन व्यक्ति-सापेक्ष नहीं होता, वह निरपेक्ष होता है, जैसे–सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है (न कि–मैं सर्व साधारत को सूचित करता हूँ।), या कार्यवाही की जाय (न कि–कार्यवाही करें), स्वीकृति दी जा सकती है (न कि–स्वीकृति दे दीजिए या स्वीकृत करिये।)

कार्यालयी हिंदी का प्रयोग क्षेत्र

कार्यालयी में विभिन्न प्रकार के पत्रदि आते है तथा उसका कार्यालय में सम्बंधित अधिकारीयों से होकर लिपिक तक, लिपिक से लेकर अन्य कर्मचारी तक, कार्यालयी हिंदी में उसपर टिप्पणी, प्रदिवेदन आदि होते हैं। प्रयोग के आधार पर कार्यालयी हिंदी के प्रयोग क्षेत्र निम्न प्रकार विभक्त किया जा सकता हैं।

टिप्पण

कार्यालय में होने वाले लेखन रूप में सुझाव, संकेट, निर्देश दर्ज किए गए तथ्य, सूचनाएँ आदि को टिपण्णी कहा जाता हैं। टिप्पणी लेखन को टिप्पण कहा जाता हैं।

प्रारूपण

पत्र का कच्चा अथवा अंतिम रूप किसी पत्रदि का प्रारूपण तैयार करना ही "प्रारूपण" कहलाता हैं। कार्यालयी हिंदी के क्षेत्र में प्रारूपण को मसौदा लेखन भी कहा जाता हैं।

संक्षेपण

किसी विशृत विवरण, विशृत आख्या, वक्तव्य, प्रतिवेदन, पत्र व्यवहार तथा लेखन आदि के तथ्यों एवं निर्देशों का सुनियोजित, सुरुचिपूर्ण संयोजन और समस्त अनिवार्य, उपयोगी तथा मूल तत्थ्यों का प्रभावपूर्ण संक्षिप्त संकलन को संक्षेपण कहलाता हैं।

प्रतिवेदन

सरकारी कामकाज के संबंध में जाँच तत्थन्वेशन सुझओं आदि का विस्तृत विवरण प्रदान करना प्रतिवड़ा कहा जाता हैं। प्रदिवेदन में वह सुचना या जानकारी प्रस्तुत की जाती है, जो सार्वजनिक रूप में यथातत्थ्य ज्ञात नहीं होती, किन्तु प्रतिवेदन प्रस्तोता एक या एकाधिक व्यक्ति/आयोग/समिति या माडल, उससे सम्बंधित व्यक्तियों या सरकार ता तथ्यों को प्रमाणिक रूप से यथा तथ्य प्रस्तुत करने का भरसक प्रयाक करते हैं।

अनुवाद

कार्यालयी से सम्बंधित विविध प्रकार के साहित्य का अनुवाद सामान्यत: इस साहित्य के अंतर्गत प्रशासन कार्यालय, डाक-घर कार्यालय, रेल कार्यालय, आकाशवाणी एवं दूरदर्शन कार्यालय जैसे कार्यालयों के कागजात को सम्मिलित किया जाता हैं।

कार्यालयी भाषा में जितना अधिक औपचारिकता का निर्वाह किया जाता है उतना व्यवहारिक जीवन के किसी क्षेत्र में नहीं देखा जाता द्य जैसे परिवार तथा समाज में संभाषण के समय वक्ता तथा श्रोता के स्तर-भेद के आधार पर कुछ औपचारिकता का निर्वाह आवश्यक है उसी प्रकार प्रशासनिक स्तर पर हर समय औपचारिकता का पालन स्तर भेद दृष्टि से परमावश्यक हैं।

कार्यालयी हिन्दी अनुवाद की समस्या

कार्यालयी हिन्दी की प्रवृत्ति सहज होना चाहिए या परंतु अनुवाद के फेर में पड़कर यह विकृत हो गई है। यही कारण है कि कार्यालयी हिन्दी में की गई बहुत-सी विज्ञप्तियाँ सामान्य लोगों द्वारा समझना टेढ़ी खीर होती है। प्राय: सुशिक्षित लोग भी उन्हें नहीं समझ पाते। इसका कारण अंग्रेजी के प्रति विशेष मोह है तथा कार्यालयी कार्य करने की अंग्रेजी प्रवृत्ति है। इस बात का प्रत्यक्ष

अनुभव किसी भी सरकारी सूचना या सरकारी, अर्द्धसरकारी पत्रों को देखकर किया जा सकता है। जिसकी भाषा समझ से परे होती है।

कार्यालय में कई विभाग होते हैं अतएव कार्यालय साहित्य की कोई सीमा नहीं हो सकती। सभी कार्यालयों में कार्य को हिन्दी में करने पर बल दिया जाता है, अत: अनुवाद होता है। यह अनुवाद पुराने साहित्य का भी हो सकता है तथा नये साहित्य का भी। यदि अनुवादक के पास पारिभाषिक शब्दों का पर्याप्त भण्डार हो तो अनुवाद की समस्या एक सीमा तक कम हो सकती है, यदि कार्यालयों में काम करने वाले कर्मी, इस कार्य को करने में कुछ श्रम करें, केवल लकीर न पीटें तथा पारिभाषिक शब्दों का ज्ञानवर्द्धन करें। वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत प्रगति का ऐसा चक्र चल रहा है कि एक ही विषय पर किये जाने वाले कार्य करने वाले कार्यालय का विभाजन विषय की जटिलता तथा प्रशासनिक कठिनाइयों को दूर करने के लिए कर दिया जाता है और उसके अंग-विच्छेदन के फलस्वरूप कार्यालय बढ़ा दिये जाते हैं, विभागों में भी फेरबदल हो जाता है। प्रत्येक कार्यालयों की कार्य प्रकृति अलग-अलग होती है अत: हिन्दी में काम करने की दिक्कत होती है। इनका कार्य करने के लिए, स्वाभाविक रूप से अंग्रेजी का सहारा लिया जाता है, अत: उनका अनुवाद कार्य सहज नहीं हो पाता। यह भी देखा गया है कि एक ही अंग्रेजी प्रारूप के अनुवाद विभिन्न कार्यालयों में समान रूप से नहीं हो पाते। इसके कई कारण हैं।

पहला कारण तो यह है कि अभी तक सभी अंग्रेजी शब्दों का हिन्दी-सम-शब्दों में निर्धारण नहीं हुआ है। बहुतायत में इस संबंध में समस्या तब उठती है, जब किसी भी नित्य की सामान्य कार्य व्यवहार में प्रयुक्त होने वाले शब्द की तरह ही हिन्दी में उसी 'वजन' का शब्द नहीं मिलता। जैसे रेल से संबंधित एक प्रचलित शब्द है 'दि ट्रेन'। यह रेल यातायात में सामान्य रूप से प्रयोग में आने वाला शब्द है, लेकिन इसी के वजन तथा प्रवाह को बोध कराने वाला शब्द हिन्दी में अपनी पहचान नहीं बना सका है, अत: इसी शब्द का सुविधा से प्रयोग होता है। आम जनता की ऐसे अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करने लगी है, जिन्हें वह आम बोलचाल में बोलना स्तरहीन समझती है या असुविधाजनक प्रवाह से रहित अनुभव करती है, जैसे शौचग्रह या 'शौचालय' बोलचाल में इसका प्रयोग नगण्य है और 'लैट्रीन' शब्द आम प्रयोग में आ गया है, अशिक्षित लोग भी इसी शब्द का प्रयोग अपनी बोलचाल की भाषा में करते हैं।

भारत सरकार के शिक्षा और समाज कल्याण मंत्रालय के केन्द्रीय हिन्दी संस्थान द्वारा प्रकाशित बृहत् पारिभाषिक शब्दकोश के परवर्ती संस्करण में aggression तथा attack (जो अंग्रेज के देशज हैं) शब्दों का (हिन्दी में) प्रतिशब्द आक्रमण दिया गया है। 'आक्रमण' को attack के प्रतिशब्द रूप में ग्रहण किया जाना तो उचित है, लेकिन aggression के लिए नहीं। यदि किसी मूल कत्य में इन दोनों शब्दों का ही प्रयोग होता है, तो हिन्दी में उसके मूल भाव को एक शब्द द्वारा प्रकट करना असम्भव है।

जैसे कार्यालयी अंग्रेजी में प्रायः–Yours faithfully, Yours sincerely, Yours very truly, Yours truly शब्दों का प्रयोग होता है। हम नित्य-प्रति के व्यवहार में भी इनका प्रयोग अंग्रेजी लेखन में करते हैं, लेकिन इनमें से प्रत्येक का पर्याय हिन्दी में नहीं है।

कार्यालयी अनुवाद की समस्या केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रकाशित किये जाने वाले 'परिभाषिक' शब्द-संग्रहों को लेकर भी सामने आती है, जिनमें अपने नये संस्करणों में शब्द पर्यायों को बदल दिया जाता रहा है। यह बात सन् 1964 तथा 1974 के संस्करणों में लक्ष्य की जा सकती है। वस्तुतः बात यह है कि इन संग्रहों के 'सुयोग्य चिन्तन' के आधार पर तैयार नहीं किया गया है।

देश की अनेक सरकारे भी अंग्रेजी शब्द का समान प्रयोग उपयोग में नहीं कर पायी है। प्रायः सभी सरकारों के अंग्रेजी पाठ के अनुवाद पक्ष समान नहीं होते। इसके अतिरिक्त एक ही शब्द का प्रयोग केन्द्र तथा विभिन्न प्रदेशों में समानार्थ रूप में नहीं किया जा रहा है। जैसे हिन्दी में नये-पुराने ज्ञात शब्द काफी मिलते-जुलते हैं–भाग, विभाग, अनुभाग, उपविभाग, अनुविभाग, संभाग, प्रभाग, केन्द्रीय सरकार के लिए भाग–Portion, विभाग–Department, अनुभाग–Section हैं तथा प्रभाग–Division हैं, लेकिन उत्तर प्रदेश के लिए Section-- खण्ड है, तो मध्य प्रदेश के लिए 'अनुविभाग' और 'उपविभाग' हैं।

अंग्रेजी व्यवहार में अंग्रेजी के कई ऐसे शब्दप्रयुक्त होते हैं, जो एकार्थक नहीं हैं, जैसे DismissA हिन्दी में इसे बर्खास्त करना भी कहेंगे तथा खारिज करना भी। अब कहाँ इसको किस अर्थ में प्रयोग किया जायेगा, यह अनुवादक के सोचने की बात है। अनुवादकों तथा शब्द संयोजन या सृजन करने वाले विद्वानों से कार्यालयी हिन्दी में सुधार करने की अत्यधिक जरूरत है।

7

जनसंचार माध्यमों का अनुवाद

आधुनिक समाज में सूचना का विशेष महत्त्व है। सूचना के अभाव में व्यक्तिशेष विश्व से कट जाता है। अलग-थलग पड़ जाता है। व्यक्ति के साथ-साथदेश के आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास में सूचना और सूचना सम्प्रेषण के माध्यम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस प्रकार जनसंचार का अर्थ है सूचना और विचारों का प्रसार व संचार के आधुनिक साधनों के जरिए मनोरंजन प्रदान करना। जनसंचार के इन माध्यमों में इलैक्ट्रॉनिक और प्रिंट मीडिया दोनों ही आते हैं। संचार के परम्परागत साधन आधुनिक समाज की परिवर्तित परिस्थितियों की आवश्यकताओं को पूर्ण करने में असमर्थ रहे हैं। इसीलिए तीव्रगति से सूचना सम्प्रेषण का कार्य सम्पन्न करने हेतु संचार के नये-नये माध्यमों की खोज होती रही है। आधुनिक मीडिया में रेडियो, टेलीविजन, फिल्म, अखबार और विज्ञापन अन्य नये-नये माध्यम भी आज सामने आ रहे हैं।

जनसंचार माध्यम का आशय

वर्तमान युग सूचना क्रांति का युग है, जिसमें संचार की उपयोगिता बहुत अधिक बढ़ गई है। जन संचार शब्द को सामान्य आशय जनता में सूचना सम्प्रेषण है। सम्प्रेषण की प्रक्रिया 'मानव जीवन' की शाश्वत आवश्यकताओं में से एक रही है। 'प्रत्यक्ष वार्तालाप' मूल रूप में प्रारम्भिक सम्प्रेषण क्रिया थी। इसके बाद

ही सूचना सम्प्रेषण के माध्यमों की क्रिया में विकास हुआ, क्योंकि सूचनाओं का आदान-प्रदान मानव जीवन की एक व्यावहारिक जरूरत थी। आधुनिक युग के आवागमन से पहले मानव उनके सभी साधनों का उपयोग किया जो उपलब्ध थे। वैज्ञानिक आविष्कारों ने संचार प्रक्रिया में उसी तरह की नई क्रान्ति की, जैसी उसने वर्तमान सांसारिक जीवन के हर क्षेत्र में कर दी है। रेलगाड़ियों तथा प्रेस के प्रादुर्भाव ने सूचना-वाहकता तथा समाचार सम्प्रेषणता में क्रान्तिकारी कार्य किया। समाचार-पत्रों ने समाचार और वैचारिक संप्रेक्षण को जल्दी से जल्दी हर सुबह आम जनता के द्वार पर पहुँचा देने वाला बना दिया। इसी कड़ी में बिना तार का तार, दूरभाष, चलचित्र, आकाशवाणी तथा दूरदर्शन का विकास हुआ। सम्प्रेषण के क्षेत्र में मोबाइल, फैक्स ने तो मनुष्य को विराट् बना दिया दुनिया को बहुत ही छोटा कर दिया।

मानव के कार्यक्षेत्र ने इन वैज्ञानिक अन्वेषणों ने विराट आयाम दे दिये हैं, अतः वह विराट हो गया है तथा संचार-माध्यमों ने मनुष्य के कार्य-व्यापार को इतना गतिशील कर दिया है कि उसकी दृष्टि, उसकी श्रवणेन्द्रियाँ वाणी और उसकी भौतिक क्रियाएँ संसार के हर कोने में ही नहीं दूर अन्तरिक्ष तक क्षणमात्र में पहुँचने में सक्षम हो गई हैं, अतः दुनिया छोटी हो गयी है। तकनीक के विकास ने यह संभव कर दिया है वह बिना कहीं जाये किसी से भी साक्षात्कार कर सकता है, उससे बात कर सकता है, उसे आदेश औए निर्देश दे सकता है।

वर्तमान समय में मनुष्य को एक एक आधुनिक काल में जीने का मौका प्राप्त हुआ। जैसा उसे ज्ञात इतिहास ने कभी पहले नहीं दिया, इसलिए वह एक-दूसरे से किसी न किसी रूप में जुड़ गया है। वह एक-दूसरे के दुख-सुख में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में एक-दूसरे का भागीदार हो गया है, इसीलिए तो वह संसार के समाचार जानने को लालायित रहता है, समाचार-पत्र भी उसे सुबह होते ही चाहिए, रेडियो सुनना और दूरदर्शन देखना और सुनना उसकी जरूरत बन गई है। आज दुनिया के किसी भी कौने में घटित घटना मिनटों में पूरी दूनिया में फैल जाती है। यही संचार व्यवस्था के कारण ही संभव हुआ है।

वर्तमान समय में एक अनपढ़ और अशिक्षित व्यक्ति भी सूचना क्रांति के कारण देश विदेश की राजनीतिक विषयों पर चर्चा करता दिख जाता है। इसका मूल कारण है कि आज के युग का मनुष्य राजनीति का खिलाड़ी नहीं है तो क्या हुआ, वह राजनीति का समालोचक तो है। यदि गहराई से देखा जाय तो यह समझने, कहने और जान लेने में हमें संकोच नहीं करना चाहिए कि वर्तमान युग

केवल संचार चक्र के नियंत्रण में आ चुका है। संचार माध्यम राई को पर्वत और पर्वत को राई बनाने में सक्षम हो चुके हैं और ऐसे कलात्मकता कई बार उसकी लोगों की पकड़ में आ जाती है। यह आमतौर से अनुभव करने की बात है कि कोई समाचार, या कोई अन्य प्रसारण चाहे वह कोई अचम्भीय समाचार या प्रसारण ही क्यों न हो, जन–जनार्दन के लिए वेदवाक्य की तरह स्वीकार्य होता है। कारण–संचार माध्यमों की विश्वसनीयता और यह भी लक्ष्य करने की बात है कि सूचना प्रदायकों के रूप में संचार माध्यम एक से एक बढ़कर इस क्षेत्र में प्रतिष्ठित होने की स्पर्द्धा में लगे हुए हैं। अर्थार्जन का भी वह भीमकाय उद्योग बन चुका है। जनता के ज्ञान की भूख मिटाने को उसे नित्य ही राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की सामग्री चाहिए। इस कार्य में अनुवाद कार्य उसका सबसे बड़ा साधन है। जनता को राजनेताओं के और अभिनेताओं के वचनों, घोषणाओं, जीवन–चर्याओं, भेदों और रहस्यों की जानकारी उनकी अपनी भाषा में चाहिए। जो अनुवाद के बिना संभव नहीं है। आज हर चिन्तन और समाचार का अनुवाद हर भाषा की व्यावसायिक आवश्यकता है। समाचार, विज्ञान, प्रवचन, नाटक, वार्ता, साक्षात्कार आदि, कौन–सी ऐसी विधा कही जा सकती है, जिसके अनुवाद की संचार माध्यमों को आवश्यकता नहीं हैं। महत्त्वूपर्ण बात यह है कि यह अनुवाद अन्य अनुवादों की अपेक्षा यांत्रिक वेग की अपेक्षा रखता है। चाहे दैनिक पत्रों का अनुवाद हो या रेडियों, दूरदर्शन आदि का, अनुवादक के पास कम समय रहता है और उसे उतने ही समय में सारी सामग्री का अनुवाद करना पड़ता है। तीसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह अनुवाद एक साथ करोड़ों पाठकों एवं श्रोताओं के पास पहुँचता है, इसलिए उसमें संप्रेषणीयता, रोचकता, प्रभावोत्पादकता आदि गुण सहज में ही होने जरूरी होते हैं।

जनसंचार माध्यमों के विविध प्रकार

अलग–अलग जनसंचार माध्यम इस तरह है–

(1) विद्युतीय या इलैक्ट्रॉनिक माध्यम–जो इस तरह हैं–

(i) आकाशवाणी,

(ii) दूरदर्शन,

(iii) दूरभाष या टेलीफोन,

(iv) फैक्स,

(v) तार या टेलीग्राफ।

(2) अन्य माध्यम–ये इस तरह है–

(i) समाचार-पत्र,

(ii) पत्र सूचना कार्यालय,

(iii) प्रकाशन विभाग,

(iv) सिनेमा या चलचित्र,

(v) डाक प्रणाली।

(3) अन्तरिक्ष विज्ञान-

(i) कम्प्यूटर,

(ii) ई-मेल,

(iii) अंतरिक्ष में छोड़े गए यान का उपग्रह।

उपरोक्त सभी माध्यमों में अनुवाद की प्रक्रिया लगातार चल रही है, जो इस तरह है–

(1) आकाशवाणी–आकाशवाणी के कार्यक्रम सिर्फ हिन्दी, अंग्रेजी ही नहीं भारत की अनेक भाषाओं एवं विदेशी भाषाओं जैसे–फ्रेंच, पोर्तुगीज, जर्मनी इत्यादि में प्रसारित होते हैं। इन कार्यक्रमों के अनुवाद लगातार हो रहे हैं एवं इनका प्रसारण हो रहा है। इनकी पट्कथा, कहानियाँ, गीत, समाचार, इत्यादि समस्त विधाओं का अनुवाद हो रहा है।

(2) दूरदर्शन–इस दृश्य-श्रव्य माध्यम द्वारा समाचार, चलचित्र, गीत, नाटक इत्यादि लाखों प्रकार के कार्यक्रमों का प्रसारण होता है। विश्व के अनेकों चैनल जैसे–स्टार प्लस, बी. बी. सी., जी टी. वी., सी. टी. बी., ओ. टी. जी. , दिल्ली दूरदर्शन इत्यादि अपना प्रसारण कर रही हैं। इण्टरनेट एवं केबिल के द्वारा सब एक साथ मिल गए हैं। दूरदर्शन के कार्यक्रम विश्व के अनेक भाषाओं में प्रसारित होते हैं, जिनका अनुवाद एवं रूपान्तर हिन्दी में लगातार हो रहा है।

(3) दूरभाष–दूरभाष संचार उपक्रम द्वारा भी अनुवाद कार्य होता है।

(4) फैक्स–फैक्स मशीन द्वारा अनुवाद भी दिया जाता है एवं इसके साहित्य का अनुवाद हिन्दी में हो गया है।

(5) तार–समाचार-पत्रों के लिए संवाददाता प्रायः इस संचार उपक्रम की मदद लेते हैं। दूरभाष आदि साधनों से भी वह समाचारों को संपादक की टेबिल पर पहुँचाने का कार्य करते हैं।

(6) समाचार-पत्र–अनुवाद के बिना समाचार-पत्रों का कार्य संभव ही नहीं है।

(7) पत्र सूचना कार्यालय– केन्द्रीय एजेन्सी द्वारा अनूदित पत्र भेजे जाते हैं। इनका प्रयोग बहुलता से हो रहा है। ये सूचनाएँ देशी-विदेशी, दैनिक समाचार-पत्रों, समाचार पत्रिकाओं, समाचार एजेंसियों, रेडियों और दूरदर्शन संगठनों को भेजी जाती है। भारत में चार समाचार एजेंसियाँ हैं–प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया, यूनाइटेड न्यूज ऑफ इण्डिया, समाचार भारती, तथा हिन्दुस्तान समाचार। ये एजेन्सियाँ भी अपने कार्यालयों में हिन्दी का अनुवाद करती रहती है।

(8) प्रकाशन विभाग–यह विभाग राष्ट्रीय महत्त्व के विषयों पर हिन्दी-अंग्रेजी और अन्य भाषाओं में पुस्तकें एवं पत्रिकाएँ प्रकाशित करता है। उनका विक्रय देश-विदशों में होता है। इस विभाग द्वारा अनेक भाषाओं का अनुवाद हिन्दी में किया जाता है।

(9) सिनेमा या चलचित्र–वर्तमान समय में देश-विदेश के अनेक चलचित्रों का अनुवाद हिन्दी में हो रहा है। हजारों चलचित्रों का अनुवाद विभिन्न भाषाओं में हिन्दी में किया जा रहा है एवं कभी-कभी वे अत्यन्त लोकप्रिय हो रहे हैं। यह सर्वविदित बात है।

(10) डाक प्रणाली–इस प्रणाली में भी डाक से संबंधित अधिकांश कार्य अब हिन्दी भाषा में हो रहे हैं एवं अनुवाद द्वारा ही यह सम्पन्न हो रहा है।

(11) अंतरिक्ष विज्ञान–अंतरिक्ष विज्ञान में कम्प्यूटर अब हिन्दी में कार्य करने लगे हैं। कम्प्यूटर के माध्यम से हिन्दी में अनुवाद किया जाने लगा है। इतना ही नहीं कम्प्यूटर के माध्यम से ई-मेल कनेक्शन द्वारा विश्व के अनेक कार्यक्रम हिन्दी में हो रहे हैं। अब उसके लिए हिन्दी में फ्लापी बन रही है। कम्प्यूटर संबंधी जानकारी के लिए हिन्दी में अनेक पुस्तकें अनूदित की गई है।

(12) केबल और ई-मेल द्वारा कई भाषाओं के कार्यक्रम-सिनेमा, नाटक, कविता, कहानी, उपयोगी जानकारियाँ, व्यापार, खेलकूद की गतिविधियों की सूचना अनुदित होकर हिन्दी में प्रयुक्त हो रही है। ई-मेल ने पूरी दुनिया को हिन्दी से जोड़ दिया है। अब ई-मेल की कुछ वेब एवं वेबसाइटें हिन्दी में उपलब्ध हैं।

(13) अंतरिक्ष में छोड़े गए यान या उपग्रह–इसका विवरण एवं उनके द्वारा प्राप्त सामग्री या जानकारी अनुदित होकर अब हिन्दी में मिलने लगी है। देश द्वारा अनेक प्रशिक्षिण केन्द्र जो अंतरिक्ष विज्ञान से संबंधित है, अनुवाद का कार्य कर रहे हैं एवं उनके द्वारा अनुदित सूचनाएँ हिन्दी में भी मिल रही हैं।

जनसंचार माध्यमों में अनुवाद की प्रयोजनीयता

संचार माध्यम द्वारा प्रयोग होने वाली सामग्री में मौलिक तथा अनुवादित सामग्री, दोनों ही होती है। समाचार-पत्रों में अनुवाद कार्य की विशेष व्यवस्था होती है। दूरदर्शन तथा आकाशवाणी के समाचार बुलेटिनों में भी ऐसी व्यवस्था होती है। समाचार-पत्रों में यह कार्य इस तरह होता है। समाचार प्रमुख रूप से समाचार एजेंसियों एवं संवाददाताओं से प्राप्त होते हैं, जो देश-विदेश की अनेक भाषाओं से अनुदित होकर विभिन्न भाषाओं के समाचार-पत्रों के सम्पादकों के पास पहुँचते हैं। प्राय: समाचार पत्रोत्तर भाषा में मिले समाचारों का सम्पादकों को अनुवाद करना पड़ता है। संवाददाताओं द्वारा भेजे गये समाचार-प्राय: इस समाचार पत्र की भाषा में ही होते हैं, परन्तु इन समाचारों का संपादक कभी-कभी इस सीमा तक पहुँच जाता है कि वह एक तरह का अनुवाद ही होता है। अनुवाद करते समय आवश्यक सम्पादन भी किया जाता है। इस तरह समाचारों के अनुवाद में सम्पादनकला एवं अनुवादकला का संगम होता है। विषयों का व्यापक ज्ञान, समकालीन घटनाओं के प्रति सजगता, व्यापक अध्ययन, शब्दों का अजस्र भण्डार, शीघ्र अनुवाद करने की क्षमता एवं अनुभव समाचारों के अनुवादकों के लिए अपेक्षित गुण हैं। सभी विषयों की सामान्य जानकारी रखते हुए भी कुछ विषयों में उसकी गहरी पैठ भी होना चाहिए, क्योंकि आजकल दूर-संचार के क्षेत्र में भी विशेषज्ञता का प्रवेश हो रहा है, जैसे-राजनीतिक समाचार, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक गतिविधियाँ, खेलकूद, व्यापार मण्डी, सांस्कृतिक समाचार, फिल्म समाचार आदि। चूकिँ उसको अपने अनुवाद के संशोधन के लिए अधिक समय नहीं मिलता इसलिए उसे सतर्क रहना पड़ता है। कि शीघ्रता के कारण कहीं कोई गलती न हो जाए जिससे समाचार पत्र की विश्वसनीयता प्रभावित हो।

समाचार के अनुवाद में सर्वाधिक समस्या उसकी भाषा से संबंधित होती है। समाचार सम्पादक प्राप्त सूचनाओं में उलट-फेर तो नहीं करते, लेकिन समाचार के शब्दानुवाद का प्रयास गड़बड़ी का कारण हो सकता है। अंग्रेजी में प्राप्त समाचारों के साथ अक्सर यही कठिनाई होती है। अक्सर इन समाचारों का भाव लेकर उसे सरल एवं स्पष्ट भाषा में लिख देना ही सर्वोत्तम तरीका होता है। प्रामाणिकता लाने के लिए उद्धरण, कानूनी व्यवस्था आदि का शब्दानुवाद अपेक्षित होता है। समाचारों के अनुवाद में प्राय: भाव एवं विचारों पर ही अधिक ध्यान दिया जाता है। शब्दानुवाद तभी किया जाता है, जब ऐसा करना अपरिहार्य हो।

दूरसंचार के अनुवाद आकाशवाणी और दूरदर्शन, श्रव्य और दृश्य स्थितियों से सामंजस्य रखने के कारण एक विशेष तकनीक की अपेक्षा करते हैं। एक प्रकार से इनकी रूपान्तरण क्रिया में सृजनात्मक तत्त्व भी मिले होते हैं और संपादकीय तत्त्व भी। अत: वर्तमान में दूरसंचार माध्यमों की तकनीक ने अनुवाद क्रिया को एक नई कला का स्वरूप ही प्रदान कर दिया है। कई विदेशी भाषाओं जैसे जापानी आदि की ध्वनियों को अंग्रेजी के बजाय यदि उन भाषाओं से सीधे भारतीय भाषाओं में लिखा जाय तो ज्यादा सहज लग सकती है। रोमन के कारण बहुत अधिक गड़बड़ी पैदा होती है, उदाहरण के लिए मलयालम के पट्टम ताणु पिल्लै को अंग्रेजी के माध्यम से प्राप्त समाचारों के कारण 'पोथम थाणु पिल्ललाई', लिखा जाता है और हिन्दी का लाठी शब्द मलयालम में 'लाती' बन जाता है।

शीर्षकों के अनुवाद के समय यह ध्यान रखना बहुत ही जरूरी है कि वह उत्सुकता और कौतूहलवर्द्धक हो, उनके साथ दी गई समाचार सारीय पंक्तियाँ भी वैसी ही भाषा में होनी उपयुक्त होती है। शीर्षकों को अंग्रेजी आदि से नकल न करे स्वतंत्र रूप से रचित होना शीर्षकानुवाद में उत्तम होता है। यह लक्ष्य-भाषा के अनुरूप होना चाहिए। वाक्य-रचना में भी लक्ष्य-भाषा की स्वाभाविक वाक्य-रचना को अपनाना चाहिए। जटिल वाक्य-रचना की अपेक्षा सरल एवं लघु वाक्य समाचारों को उत्तम स्वरूप प्रदान करता है तथा लोगों को समझ में आ जाती है।

प्रत्येक रचनाकार की यह धारणा होती है कि उसका लेखन श्रव्यसिद्ध तथा दृश्यसिद्ध भी हो, परन्तु ऐसा नहीं होता, उसको भव्य और दृश्य सिद्ध करने के लिए उसका रूपान्तरण करना ही पड़ता है, जिसे न तो शब्दश: अनुवाद ही कहा जा सकता है और न दृश्यत: ही। उसमें स्वयमेव सृजन के तत्त्व आ जाते हैं, क्योंकि प्राय: बहुत से वर्णनात्मक कथ्य को श्रवणात्मक और दृश्यात्मक भी बनाना पड़ता है। इस स्थिति में अनुवादक की सक्षम कल्पनाशीलता ही दृश्य को मजबूत बना पाती है। जिससे वह रूचिकर हो जाता है।

विभिन्न जनसंचार माध्यमों में अनुवाद कार्य

समाचारपत्र –

सन् 1450 में जॉन गुटेनबर्ग के द्वारा मुद्रण के आविष्कार के बाद संचार साक्षरोंके लिए एक वरदान बन गया। विकसित देशों में समाचार पत्रों का

महत्त्वपूर्ण योगदान है। अमेरिका में 95 प्रतिशत लोग समाचार पत्र पढ़ते हैं। उसके बाद रूसी लोगों का नम्बर आता है। भारत में अठारहवीं शताब्दी के अन्त में यानि सन् 1780 में अखबार की शुरूआत हुई। जेम्स अगस्टस हिकि ने बंगाल गजट 1780 में निकालकर अखबार प्रचलन शुरू किया। यह गुजरात भाषा में प्रकाशित भारत का सबसे पुराना अखबार है। इसके पश्चात् 1826 में उदन्त मार्तण्ड निकला। वर्तमान समय में 41 ऐसे समाचार पत्र हैं, जो सौ वर्ष पूरे कर चुके हैं। टाईम्स ऑफ इण्डिया समाचार पत्र 150 साल पुराना है व हिन्दुस्तान टाईम्स ने अभी हाल में अपनी 75साल गिराह को मनाया है।

आज देश के हर प्रांत, क्षेत्र और भाषा में दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन तेजी से हो रहा है। हर वर्ष इनकी संख्या में भी वृद्धि होती जा रही है। बहुसंस्करणीय, सांध्य संस्करणीय प्रकाशन, इलैक्ट्रानिक तकनीकी के विकास के साथ निरन्तर बढ़ते ही गए। रोचक ले-आऊट, सुरूचिपूर्ण साज-सज्जा और श्रेष्ठ मुद्रण के कारण इनके प्रति लोगों का आकर्षण भी बढ़ता जा रहा है। अधिक से अधिक जानकारी हासिल करने के उद्देश्य से समाचार पत्र भी हर वर्गके लिए उनकी रूचियों के अनुरूप सामग्री प्रस्तुत कर रहे हैं। खेल, फिल्म, कला,बाजार भाव, राजनैतिक, उठा-पटक, जीवन के हर क्षेत्र से संबंधित समाचार समाचार पत्रों के द्वारा प्रदान किए जाते हैं।

समाचार पत्रों में प्रकाशित विज्ञापन भी संचार का अंग है, जो विभिन्न उत्पादों से सम्बधिंत जानकारियाँ देते हैं। सामाजिक विज्ञापन घातक रोगों से बचाव, सामाजिकप्रदुषणों के परिहार और स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता का भी सन्देश देते हैं। जैसे एड्स से बचाव, टीकाकरण और स्वच्छ पेयजल को अपनाने की प्रेरणा। धूम्रपान,नशीली दवाइयों के सेवन को त्यागने की मंत्रणा सामाजिक विज्ञापनों के उदाहरण हैं। जनमत की सशक्तता, सांस्कृतिक चेतना, मूल्यों को स्थापित करने में समाचार पत्र सहायक हुए हैं। देश के स्वतंत्रता संग्राम में समाचार पत्रों का विशेष योगदान स्मरणीय है। समाज सुधार का हर आन्दोलन समाचार पत्रों को अपना प्रवक्ता बनाता है।

मैगजीन

मैगजीन एक निश्चित समय के बाद फिर से नई जानकारियों को अपने साथले कर आती है। इसकी हर नई प्रति में नई जानकारियाँ, नए विषय व मनोरंजन होता है। मैगजीन को कर्तव्य 'Store House' का नाम दिया गया है,

क्योंकि इसमें विभिन्नज्ञानों का भण्डार होता है। आजकल ये मैगजीन विशेषता लिए होती है अर्थात्वि भिन्न विषयों जैसे राजनैतिक, फेशन, खेलकूद, आदमियों के लिए, व औरतों के लिए आदि की प्रधानता लिए होती है। प्रत्येक मैगजीन अपने निश्चित पाठकों को आकर्षित करती है तथा पाठक भी अपनी पसंद अनुसार मैगजीनों का चयन करते हैं। यह प्रबंध विज्ञापन की दृष्टि से बहुत उत्तम है। क्योंकि इसके द्वारा विज्ञापक अपने लक्षित लक्ष्य तक प्रभावी ढंग से पहुँच सकता है। मुख्यत: मैगजीन को चार भागों में बॉटा गया है।

शैक्षिक और शोधकर्ता जरनल

उपभोक्ता मैगजीन मुख्यत: विज्ञापनों पर आधारित होती है। वे एक निश्चितवर्ग तक पहुँचना चाहते हैं जैसे नर, नारी, बच्चे, बड़े बुजुर्ग व्यक्ति, खेल प्रिय,फिल्मों को पसंद करने वाले, आटोमोबाइल व युवा लोगों तक।व्यापार और तकनीकी मैगजीन व्यवसायिक जरनल होते हैं, जो कि विशेषपाठकों व्यापारियों, व्यवसायों, कारखानों के स्वामियों के लिए होती है। ये इनसे संबंधित विषयों पर जानकारी लिए होती है।

जनसंपर्क मैगजीन संगठनों, सरकारी एजेंसियों, शैक्षणिक संस्थानों और दूसरे संगठनों के लिए होती है, जो कि कर्मचारियों, उपभोक्ताओं, ओपिनियन लीडर के लिए जानकारी लिए होती है।

शैक्षिक और शोधकर्ता जरनल जानकारी और ज्ञान को फैलाने के लिए होतीहै। इन मैगजीनों में विज्ञापन नहीं होते हैं।

मैगजीन, मीडिया ग्रुप, प्रकाशन संस्था, समाचारपत्रों, छोटी संस्थाओं, संगठनों, व्यापारिक संगठनों, शैक्षणिक संस्थानों और धार्मिक संगठनों द्वारा छापी जाती है। मैगजीन सरकारी विभागों व राजनैतिक पार्टियों द्वारा भी छापी जाती है। मैगजीन मुख्यत: साप्ताहिक, पाक्षिक व मासिक छपती है। यह चार महीने बाद व छ: महीने बाद भी छपती है। कुछ मैगजीन साल में एक बार छपती हैं। मैगजीन सामान्यत: 'Readers Digest' की भांति भी हो सकती है और टेजीविजन कार्यक्रमों को प्रदर्शित करने वाली गाइड के रूप में भी हो सकती है। बहुत सी मैगजीन ऐसी भी होती हैं, जो कि दो विशिष्टता को लिए होती हैं। ये सामान्यत: लगातार छपती हैं और प्रत्येक मैगजीन समाज के कुछ विशेष वर्गों के लिए होती है।

कुछ मैगजीन ज्ञान लिए व कुछ मनोरंजन लिए होती हैं। शुरूआती दौर में मैगजीन का अस्तित्त्व धुंधला था, समाचारपत्र व मैगजीन की सीमा में कोई विशेष अन्तर न था।

आज मैगजीन विभिन्न विषयों में प्रधानता लिए हुए है। TheAmericanAudit Bureau of Circulationus 30 भिन्न-भिन्न प्रकार की विशेषता लिए मैगजीनों को बाँटा है, जिसमें मुख्य सौन्दर्य, व्यवसायिक, सिलाई, फैशन, खेल-कूद, फिल्म, साईस, इतिहास, स्वास्थ्य, घर, फोटोग्राफी, यात्रा, संगीत, समाचार, पुरूष, नारी, कम्प्यूटर आदि है।

मैगजीन को तीन भागों में बॉटा जा सकता है। समाचार प्रधान, मनोरंजन प्रधान, स्वयं विचारधारा प्रधान। आज प्रत्येक मैगजीन अपने लक्षित पाठकों के इच्छित अनुसार होती है।

शुरूआत में, जब वैज्ञानिक अस्तित्त्व में आई उसे अपना स्थान बनाने के लिए जन माध्यमों से संघर्ष करना पड़ा। जैसे रेडियो, टेलीविजन, फिल्म। परन्तु समाचारपत्र व मैगजीन अपना स्थान बनाने में सफल रहे।

मैगजीन जनसंचार के विभिन्न माध्यमों में से एक है। मैगजीन की संख्या, सामग्री की प्रकृति, उपयोगिता आदि इसे एक राज्य से दूसरे राज्य तक फैलाया गया। इन मैगजीनों को ऐतिहासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनैतिक आधारपर भी बांटा गया।

साधारणत: मैगजीन जानकारी, विचारधारा और व्यवहार को फैलाने में महत्त्वपूर्ण रोल अदा करती है। यह जहां हमें जानकारी प्रदान करती है वहीं दूसरी तरफ शिक्षा व मनोरंजन को भी पेश करते हुए पाठकों की रूचि का भी ध्यान रखती है।

पुस्तकें

जनसंचार के माध्यमों से अगर हम देखें तो यह पुस्तकें जनसंचार का पूर्ण माध्यम नहीं है। यह समाचार पत्रों, रेडियो, टेलीविजन की तरह सभी दर्शक व पाठकों तक एक समान नहीं पहुँच पाती। जन माध्यमों की दूसरे माध्यमों की तुलना में पुस्तकों के पाठकों की संख्या बहुत कम है। विश्वसनीय तौर पर पुस्तकें जनसंचार का महत्त्वपूर्ण माध्यम हैं। पुस्तकें अपने अन्दर बहुत-सी जानकारी को संजाये हुए होती हैं और यह लम्बे समय तक चलने वाली तथा लम्बे समय तक

सम्भाल कर रखने वाली होती हैं और यह Magzineऔर समाचार पत्रों से ज्यादा विश्वसनीय होती है।

कुछ किताबें हजारों साल पहले छापी गई थी तथा अभी तक अस्तित्त्व मेंहैं। तथा पुस्तकों में उपस्थित विचार काफी लम्बे समय तक चलते हैं। बहुत सीपुस्तकें एक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाती है। पुस्तकें लम्बेसमय तक बनी रहती हैं, परन्तु मनुष्य जीवन समाप्त हो जाता है। मार्शल मैकुलहान के अनुसार:- पुस्तकें मनुष्य के व्यक्तिगत, सुढ़ौल वतर्कपूर्ण विचारों का बढ़ाती है।

रेडियो

भारत में रेडियो का समय 1923 में ब्रिटिश उपनिवेशवाद से शुरू हुआ। स्वतंत्रता के समय बड़े महानगरों में छः रेडियो स्टेशन थे। सन् 2002 तक यह परिदृश्य इतना बदला की भारत के 2/3 घरों तक अर्थात् 110 मिलियम पारों तक इसकी पहुँच हो गई। भारतीय स्थितियों में रेडियो एक प्रभावशाली माध्यम सिद्ध हुआ। यह असाक्षर लोगों तक भी पहुँचा। टी.वी. एवं फिल्म से सस्ता होने के कारण भी यह लोकप्रिय हुआ। स्थानीय रेडियो स्टेशन भी महत्त्वूपर्ण साबित हुआ। 20वीं सदी के अन्त तक रेडियो सर्वाधिक प्रभावशाली माध्यम था। जिसकी ग्रामीणों एवं शहरी गरीबों तक पहुँच हो गई थी। टी.वी. के प्रसार में भारत में रेडियो को पीछे की ओर धकेला है, लेकिन इसकी अहमियत आज भी बनी हुई है। जनसंचार माध्यमों की अपेक्षा रेडियो अनुपम योग्यता रखता है अपनी कार्य कुशलता में यदि हम टी.वी. देखते हैं या समाचार पत्र पढ़ते हैं तो हमें एक जगह बैठकर उस पर ध्यान केन्द्रित करना पड़ता है, परन्तु रेडियो में ऐसा नहीं है। हम अपनी दैनिक दिनचर्या के साथ रेडियो के कार्यक्रम का आनन्द ले सकते हैं, सूचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं।

रेडियो में स्थान का सदैव अभाव रहता है जहां एक समाचारपत्र में 40 या 50 कॉलम (Column) होते हैं वही रेडियो उसके मुख्य पृष्ठ तक का समय रखता है यही कारण है कि रेडियो के लिए संक्षिप्ता अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। रेडियो ही जनसंचार का एक ऐसा माध्यम है, जिसे जब जैसे चाहे वहॉ सुनाजा सकता है। इसे अपने शयनकक्ष में सुन सकते हैं या फिर आप अपनी कार,खेत खलिया, आप इसे पढ़ते हुए भी सुन सकते हैं या व्यंजन बनाते हुए भी सुनसकते हैं। इसके दो कारण हैं –

1. दृश्यहीनता
2. ट्रांजिस्टर क्रांति

दृश्यहीनता होने के कारण रेडियो एकाचित होने के लिए एक जगह बैठने केलिए बाधित नहीं करता। टी.वी. देखते हुए आप दूसरे काम नहीं कर सकते परन्तु रेडियो के साथ यह सुविधा है कि आप कोई भी कार्य करते हुए कार्यक्रम का आनन्द ले सकते हैं। रेडियो के इस गुण का कारण ट्रांजिस्टर का आविष्कार है। पहले पहल रेडियो हैडफोन लगाकर सुना जाता था। प्रगति हुई तो बड़े आकार के रेडियो सैट बनाए गए, परन्तु ट्रांजिस्टर के आविष्कार के कारण रेडियो में क्रांति आ गई। एक और रेडियो सैट की लागत कम हुई और दूसरी तरफ इसे ले जाने में सुविधा। आज पॉकेट रेडियो बहुत लोकप्रिय हो गए हैं।

रेडियो पर समाचार तेज गति से चलते हैं। अभिप्राय: है कि श्रव्य माध्यमहोने के कारण रेडियो सूचना तुरन्त पहुँचा सकते हैं, कहीं पर आकस्मिक कोई घटना घटी संवाददाता ने फोन से स्थानीय केन्द्र को खबर भेजी जहां से तुरंत दिल्ली के न्यूज रूप में खबर पहुँच गई और सारे देश ने न्यूज को जान लिया। यह अकसर होता है कि देर रात में हुई घटना 24 घण्टे के अन्दर समाचार पत्रों के माध्यम से हमारे तक पहुँचती हैं। कई बार टी.वी. भी अपने समाचार रेडियो से ग्रहण करताहै। अत: तत्परता की दृष्टि से रेडियो का माध्यम अनुपम है।

रेडियो यदि शिक्षा देता है तो शुष्क नहीं, बल्कि मनोरंजन के रस में पूर्णता भिगोकर अनेक विधाएं रेडियो के पास हैं। जैसे- नाटक, संगीत आदि। जिनका प्रयोग करके श्रोताओं के मन तक पहुँचा जाता है तथा जो संदेश उनको देना चाहता है उसे उनका अनुभव कराये बिना दे दिया जाता है। इससे जहॉ एक और मनोरंजन होता है वहीं साथ ही मन का अंधकार दूर हो जाता है।

इतनी विशेषताएँ होते हुए भी रेडियो की कुछ सीमाएँ हैं इसका दृष्टिहीन होना। यही कारण है कि टी.वी. के आ जाने से रेडियो के श्रोताओं की संख्या में कमी आ गई है और दृश्य का प्रलोभन उन्हें अपनी ओर ले गया। दूसरी सीमा श्रोता और प्रसारण कर्त्ता के बीच दीवार जो सदा बनी रहती है और उसका फीड बैक बहुत ही कम मिल पाता है। इसमें सुधार करने की गुंजाइस कम ही रह जाती है। रेडियो कुछ दिखा नहीं सकता, बल्कि सुना सकता है। समाचार पत्र की भांति हम इसमें पीछे लौट नहीं सकते। एक बार कार्यक्रम निकल गया तो गया। यह ध्वनि एक ऐसा क्षणभंगुर साधन है, जो थोड़ा सा जटिल हुआ नहीं कि हवा में विलीन हो गया।

भारत में रेडियो प्रसारण 1927 में आरम्भ हुआ और 1947 तक इसका विस्तार मंद गति से हुआ परन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद नीति निर्माताओं का ध्यान संचार की ओर गया और जहां उस समय मात्र छः प्रसारण केन्द्र थे वहां अब प्रसारण केन्द्रों की संख्या 185 हो गई है, जिसमें से 72 स्थानीय प्रसारण केन्द्र भी स्थापित हो गए हैं। देश के 90 प्रतिशत भू-भाग पर तथा 97.3 प्रतिशत जनसंख्या तक अपना संदेश पहुँचाने वाला भारतीय रेडियो प्रसारण आकाशवाणी विश्व की अनूठी व्यवस्था है। आकाशवाणी प्रतिदिन 291 समाचार बुलेटिन की व्यवस्था करती हैं। यह 19 भारतीय तथा 24 विदेश भाषाओं में प्रसारित की जाती हैं। यही नहीं विभिन्न श्रोताओं के लिए विविध कार्यक्रमों का निर्माण अनेक विधाओं जैसे वार्तानाटक, रूपक, पत्र-पत्रिता आदि में किया जाता है और श्रोताओं के पक्ष के माध्यम से समय अनुसार उनमें परिवर्तन भी किए जाते हैं। सूचना शिक्षा तथा मनोरंजन के उद्देश्य से बहुजन हिताय और बहुजन सुखाय का लक्ष्य रखते हुए आकाशवाणी नेदशकों का लम्बा सफर तय कर लिया है।

टेलीविजन

टेलीविजन एक श्रव्य दृश्य माध्यम है, जिसे न केवल सुना जाता है, बल्कि दृश्यको देखकर यथार्थ का अधिक बोध होता है यद्यपि यह भी रेडियो की भांति इलैक्ट्रॉनिक मीडिया है, परन्तु टेलीविजन की अपनी कुछ विशेषताएँ हैं, जो रेडियो में नहीं पाई जाती। यही कारण है कि इसके कार्यक्रमों के निर्माण में इन विशेषताओं का ध्यान रखना जरूरी हो जाता है।

कहा जाता है कि एक चित्र हजार शब्दों के समतुल्य होता है रेडियो के माध्यम से जिस दृश्य का वर्णन चुन-चुनकर किया जाता है वही एक रमणीय दृश्य दिखाकर श्रोताओं का रसास्वादन करा देता है। अतः दृश्य और श्रृव्य और दोनों मिलकर टेलीविजन को अधिक सशक्त बनाने में सफल होते हैं।

टेलीविजन में बहुत से अन्य माध्यमों में सौपान सम्मिलित होते हैं जैसे रेडियोका माइक्रोफोन, थियटर से गति, फिल्मों से कैमरा एवं समाचार पत्रों से इस प्रकारइन सभी का एक साथ मिश्रण इस माध्यम को नवीन रूप दे जाता है।

आज टेलीविजन की परिधि का इतना विस्तार हो चुका है कि उसकी परिकल्पना भी नहीं की जा सकती। टेलीविजन हमें समुद्र की उन गहराईयों का दर्शन कराता है और अंतरिक्ष के उस भू-भाग की भी जहॉ मानव के पॉव भी

नहीं पड़े। मानव के ज्ञान चक्षुओं को खोलने की अद्‌भूत क्षमता इसमें है। टेलीविजन की एक विशेषता है मानव को विश्वास दिलवाने की।

यदि कोई खबर हमने सुनी तो शायद हम उस पर विश्वास न भी करें परन्तु उस दृश्य को देखकर विश्वसनीयता का पुट शामिल हो जाता है। साथ ही कला विज्ञान के अजूबों को दर्शाने से उसके सिद्धान्तों को अधिक बल मिलता है। टेलीविजन जनतंत्र का माध्यम है जहाँ पत्र-पत्रिकाओं से आनंद के लिए साक्षर होना आवश्यक है तथा क्रय शक्ति जरूरी है। वही टेलीविजन साक्षर व निरक्षर सभी के लिए एक सम्मान है। साथ ही एक बार टेलीविजन खरीदने के पश्चात् उसके कार्यक्रम का पूर्ण आनन्द लिया जा सकता है।

रेडियो की ही भांति तत्परता का गुण टेलीविजन में भी है। कोई घटना घटी तो शीघ्र ही टेलीविजन टीम वहां पहुँचकर उसका पूर्ण ब्यौरा केन्द्र तक पहुँचाते हैं अब तो मोबाइल टीम के माध्यम से ये और भी शीघ्र सम्भव हो गया है। इस प्रकार घटना स्थल का पूर्ण विवरण दृश्य के माध्यम से देखा जा सकता है। टेलीविजन पर आज विज्ञापनों की बहुतायत ने उसे एक उद्योग का अंग साबना दिया है। हर उत्पादक अपने उत्पादन या सेवा के संबंध में अधिकाधिक लोगों तक सूचना पहुँचाना चाहता है और इस माध्यम का वह पूर्ण प्रयोग करता है। इससे प्रतियोगिता में भी वृद्धि हुई है और लोगों का ज्ञान बढ़ा है।

भारत का टेलीविजन प्रसारण तंत्र दूरदर्शन विश्व में अपने स्टूडियो, ट्रांसमीटरों, कार्यक्रमों तथा दर्शकों के आधार पर आदित्य है। 1959 में कुछ घण्टों के प्रसारणके साथ आरम्भ हुए दूरदर्शन ने 1965 से नियमित प्रसारण आरम्भ किया और आजतीन राष्ट्रीय चैनलों 'दो विशेष अभिरूचि चैनलों, नौ क्षेत्रीय बाहरीय चैनले और एक अन्तर्राष्ट्रीय चैनल के एक विशाल नेटवर्क का सफर तय कर लिया है। आज 750भूस्थलीय ट्रांसमीटरों के द्वारा इसकी पहुँच 86 प्रतिशत देशवासियों तक बन गई है। दूरदर्शन के कार्यक्रमों को 45 करोड़ दर्शक अपने घरों में देखते हैं। इस प्रकार विश्व का अपनी तरह का सबसे बड़ा नेटवर्क सत्यम शिवम् सुन्दरम के लक्ष्य से देशवासियों को सूचना पहुँचाने के कार्य में संलग्न हैं।

भारत में टेलीविजन की शुरूवात 1959 में हुई। यह शुरूआत यूनेस्को के सहयोग से एक शैक्षणिक परियोजना के रूप में थी। 1960 में धीमी गति से टीवी.आगे बढ़ा। रेडियो प्रसारण की तरह ही भारत में टी.वी. ब्राडकास्टिंग के रूप में बी.बी.सी. के माडल पर आधारित था। भारत ने इसके संदर्भ में अमेरिका की

व्यवसायिक व निजी शैली को नहीं अपनाया। 1975 में सैटेलाइट टेलीविजन एक्सपेरिमेन्ट (SITE) का छह राज्यों के 2400 गांवों तक प्रसारण के साथ टी. वीदर्शकों की संख्या में विस्तार होने लगा। अमेरिकन सैटेलाइट ए.टी.एस-6 के द्वारा ग्रामीण कार्यक्रम प्रस्तुत होने लगे। ये शैक्षणिक कार्यक्रम ग्रामीण भारत के विकास को ध्यान में रखकर बनाए गए थे। एशियन-गेम्स 1982 के समय भारत में रंगीन टी.वी. आया। भारत के ग्रामीण विकास के लिए टी.वी. को एक महत्त्वपूर्ण हथियार मानकर इसके विस्तार के प्रयास किए गए। लेकिन 2002 के आते-आते दिशा ही बदल गई। टी.वी. के विकास के संदर्भ में क्षमता का उपयोग अधूरा रह गया और मनोरंजन की ओर झुक गया।

सिनेमा

मानवीय संवेदनाओं, भावनाओं एवं अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने वाजा सिनेमा एक ऐसा माध्यम है, जिसमें कल्पना दृश्य, लेखन, मंचनिर्देशन, रूप सज्जा के साथ प्रकाश, इलैक्ट्रोन, कार्बोनिक और भौतिक रसायन विज्ञान का अद्‌भूत मिश्रण है। एक ओर इसमें सृजनात्मकता है तो दूसरी ओर जातिक प्रतिभा। इन दोनों के संगम से एक ऐसा आकर्षण होता है, जो न केवल मनोरंजन प्रदान करता है, बल्कि ज्ञान और शिक्षा के क्षेत्र में विस्तार करता है सामाजिक कुरीतियों को दूर कर सामाजिक जागृति लाने में योगदान देता है।

सिनेमा जनसंचार का सशक्त माध्यम है। एक फिल्म एक साथ हजारों व्यक्तियों द्वारा देखी जाती है और अलग-अलग शहरों में जब प्रदर्शित की जाती है तो उसका संदेश लाखों व्यक्तियों तक पहुँचता है। एक शताब्दी पूर्व जिस Moving कैमरे के कारण सिनेमा का आविष्कार हुआ उसमें देखते ही देखते अपने मायावी संसार में सारी दुनियां को जकड़ लिया। पहले सिनेमा मूक था और लगभग तीन दशक बाद सवाक हो गया। पहले वह Black - White था, सदी के मध्य तक आते-आते वह रंगीन हो गया।

यद्यपि सिनेमा मनोरंजन का साधन रहा तथापि वृत्त चित्रों और न्यूज रिलों के द्वारा वह सूचना व ज्ञान के प्रचार का माध्यम भी बना। टेलीविजन के आगमन से पहले तक सिनेमा ही मध्यवर्ग और निम्नवर्ग का मनोरंजन का संस्ता और लोक प्रिय साधन था। भारत जैसे देश में तो आज भी लोकप्रिय है। टी.वी. कार्यक्रमों में भी इसने महत्त्वपूर्ण जगह बना ली है हालाँकि टी.वी., केबल, वीडियो से इसकी लोकप्रियता का आधात लगा है। दुनियाँ में प्रतिवर्ष लगभग

800 फिल्में अकेले भारत में बनती हैं, जो फिल्म निर्माण के क्षेत्र में सबसे आगे हैं, नाटक की भांति फिल्म एक पूर्णकला माध्यम है, जिसमें परम्परागत कला रूपों के साथ-साथ आधुनिक कलाओं का समावेश भी होता है तथा संवाद, अभिनय, फोटोग्राफी, संगीत आदि विधाओं और कलाओं की सर्वोतम अभिव्यक्ति इस माध्यम से सम्भव है।

आठवें दशक के मध्य तक आते-आते सिनेमा घरों में जाकर फिल्म देखने वाले दर्शकों की संख्या में काफी कमी आई है। विशेष रूप से यूरोप, अमेरिका आदि देशों में। इसका अभिप्राय: यह भी नहीं है कि फिल्मों की लोकप्रियता में कमी आई है सच्चाई उलट है।

टी.वी. ने फिल्मों की लोकप्रियता और अधिक बढ़ा दिया है। विद्युतीय संचार माध्यमों में चलचित्र एक महत्त्वपूर्ण विधा है। इसकी दृश्य, श्रव्य संचार की क्षमता इसकी अपार लोकप्रियता के कारण बनी है। सबसे पहले सन् 1824 में पीटर मार्क रोजेट ने छवि को पर्दे पर उतारने के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया पर इस सिद्धान्त का व्यवहारिक रूप सेल्यूलाइड पर लुईस डागर ने 1860-70के दशक में प्रस्तुत किया। आरम्भिक चलचित्र मात्र मनोरंजन के उद्देश्य से बने थे। बाद में उसमें और लक्ष्य भी सम्मिलित हुए। सन् 1926 में वार्नर ब्रदर्स ने प्रथम चलचित्र का निर्माण किया। उसके पहले मूक चलचित्रों का मूक था। चलचित्र के सर्वप्रथम जनप्रदर्शन का कार्य अमेरिका में 1896 में सम्पन्न हुआ। यही1903 में पूर्ण लम्बाई का चलचित्र प्रदर्शित हुआ। 1935 से चलचित्र में रंगों का उपयोग भी शुरू हो गया।

भारत चलचित्रों का बड़ा उत्पादन है। हर वर्ष एक हजार के लगभग चलचित्र बनाने वाले इस देश की पहली फिल्म 1913 में बनी जो मूक थी और उस फिल्म का नाम आल्मआरा था। नृत्य, नाट्य, गीत, संगीत की इस मिली-जुली विधा ने लोगों को अपने जादू में बांध दिया। ये निरक्षर जनसमुदाय को आसानी से प्रभावित कर रही थी। केबल मनोरंजन ही नहीं सामाजिक मुद्दे पर भी जागरूकता फैलाते रहे हैं। देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता, जाति प्रथा, छात्रों की समस्याएं, युवाओं की समस्याएँ, भ्रष्टाचार, महिला उत्पीड़न, चलचित्रों को विचारोतेजन कथानक रहे हैं।

रिकॉर्ड्स और कैसेट

80 के दशक में वीडियो के आगमन से कम लागत पर अधिक मनोरंजन करनेकी सुविधाएँ मिले। हर विषय के कैसेटों का निर्माण शुरू हुआ। शिक्षा के

क्षेत्रमें यह अनूठी उपलब्धि थी। सूचनाओं के प्रसार से वीडियो समाचार पत्रिकाओं को लोकप्रियता मिली। वे अधिक विश्वसनीय होने के कारण जनता के बीच स्थान बना पाए। चुनाव अभियानों में इन कैसटों का प्रयोग काफी तेजी से हुआ। सबसे पहले 1983 में आन्ध्र प्रदेश के चुनावों में वीडियो कैसेट प्रयुक्त हुए थे फिर तो सभी राजनैतिक दलों में अपने संदेश को जनता तक पहुँचाने के लिए कैसेटों की जंग चली।

विज्ञापन

जनसंचार के विभिन्न माध्यमों में विज्ञापन भी एक माध्यम है। जिस प्रकार संचार के दूसरे माध्यमों में सन्देश को प्रेषित किया जाता है। उसी प्रकार विज्ञापन में भी सन्देश को सम्प्रेषित किया जाता है। इसमें से भी सन्देश का निर्माण अन्य माध्यमों के अनुसार शब्दों, चिन्हों व संकेतों के द्वारा किया जाता है तथा सन्देश को बनाते समय प्राप्तकर्ता को व्यवहार व उसकी इच्छा, आवश्यकता, क्षेत्र, मनोवैज्ञानिक स्थिति आदि का ध्यान रखा जाता है।

विज्ञापन शब्द अंग्रेजी भाषा को sAdvertisement का हिन्दी रूपान्तर है तथावह लेटिन भाषा के Adverter से बना है। जिसका अर्थ है 'पलटना' अथवा जनताको सूचित करना। इस प्रकार विज्ञापन का शाब्दिक अर्थ जनता को सूचित करनाहै। किसी भी सूचना को जन-जन तक पहुँचाने की प्रमुख भूमिका विज्ञापन की है और यही उसका प्रमुख उद्देश्य है। 'पलटने' का अभिप्राय इस रूप में लिया जा सकता है कि विज्ञापन जन सामान्य के समक्ष नवीन सूचनाओं को प्रदान करता है। सामान्यत: विज्ञापन को विभिन्न माध्यमों द्वारा एक विचार, कार्य अथवा उत्पादित वस्तु के संबंध में सूचनाओं को प्रचारित करने तथा विज्ञापनदाता की इच्छाव इरादे के अनुरूप कार्य करने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। विज्ञापनकेवल संदेश का एक शब्द, चित्र, पत्रिका, दूरदर्शन आदि के द्वारा देना ही नहीं है, बल्कि यह एक ऐसा शक्तिशाली माध्यम है, जिसका प्रयोग अन्य व्यक्तियों से कार्य करने के उद्देश्य से किया जाता है। यदि आप समाज के एक बहुत बड़े हिस्से से कोई कार्य करवाना चाहते हैं तो विज्ञापन उन सभी को अपने अनुरूप कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

अत: विज्ञापन व्यवसायिक संस्था का महत्त्वपूर्ण साधन है। यह उपभोक्ता को ऐसी सूचनाएँ प्रदान करता है। जिससे उपभोक्ता खरीदने के संबंध में सही निर्णय ले सके। अत: विज्ञापन एक ऐसा प्रभावशाली माध्यम है, जिसके आधार

पर उत्पादित वस्तु के संबंध में जनता की स्वीकृति निर्मित की जा सकती है तथा इस प्रकार के वातावरण को निरन्तर आगे बढ़ाया जा सकता है।

भारत में विज्ञापन का इतिहास बहुत पुराना है। विज्ञापन के क्षेत्र में सबसे पहला विज्ञापन सन् 1780 में जेम्स अगस्टस हिकि के समाचार पत्र बंगाल गजट में छपा था। समाचार पत्र में विज्ञापनों की अधिकता के कारण इसका नाम 'कलकत्ता जनरल एडवरटाइजर' भी पड़ा।

इसके साथ अन्य समाचार पत्र भी प्रकाशित हुए, जो विज्ञापन की प्रधानता कोलिए हुए थे। इसमें बी. मिसिन्क और पीटर रीड का समाचारपत्र 'इण्डियन गजट' था। अन्य समाचारपत्र कलकता गजट (1784) व बंगाल जनरल (1785) थे।

इंटरनेट –

भारत में इंटरनेट की शुरूआत लगभग 15 वर्ष पहले हुई। सर्वप्रथम सैनिक अनुसंधान नैटवर्क (इआरनेट) ने शैक्षिक और अनुसंधान क्षेत्रों के लिए इसका उपयोग शुरू किया। ईआरनेट भारत सरकार के इलैक्ट्रानिक विभाग तथा यूनाइटेड नेशन्स डेवलपमेंट प्रोग्राम का एक संयुक्त उपक्रम था। भारत में इंटरनेट को काफी सफलता मिली और इसने अनेक नोडों का परिचालन शुरू किया। लगभग आठ हजार से अधिक वैज्ञानिकों और तकनीशियनों द्वारा ईआरनेट की सुविधाएं प्राप्त की जाने लगी। एनसीएसटी. मुंबई द्वारा अंतर्राष्ट्रीय संपर्क प्राप्त किया जाने लगा।

15 अगस्त 1995 को विदेश संचार निगम लिमिटेड ने गेटवे इंटरनेट एक्सससर्विस (जीआईएएस) की स्थापना वाणिज्यिक तौर पर की। इसने मुम्बई, दिल्ली,चेन्नई, कलकता, बंगलूर और पुणे में इंटरनेट नोड स्थापित किए। इसने अमेरिका,जापान, इटली आदि देशों की इंटरनेट कंपनियों में समझौता करके देश के प्रमुख शहरों में इंटरनेट की सुविधाएँ उपलब्ध करवानी शुरू की। उसके बाद दूरसंचार विभाग से मिलकर इसने देश के अन्य बड़े शहरों को भी इंटरनेट से जोड़ा। तत्पश्चात् दूरसंचार विभाग आइनेट नामक नेटवर्क के द्वारा देश के दूरदराज इलाकों को भी इंटरनेट से जोड़ने का भी काम शुरू किया।

इस समय भारत में तीन सरकारी एजेंसियाँ इंटरनेट सर्विस प्रोवाइडर(आईएसपी) अर्थात् इंटरनेट की सुविधाएँ उपलब्ध कराने का काम कर रही हैं –(1) दूरसंचार विभाग (2) महानगर टेलीकॉम निगम लिमिटेड तथा (3) विदेश संचार निगम लिमिटेड।

1904 की उदारीकरण नीति ने इस क्षेत्र में निजी कंपनियों के प्रवेश के लिएभी रास्ता खोल दिया। सरकार द्वारा बनाई गई इंटरनेट नीति के फलस्वरूप कईदेशी-विदेशी कंपनियाँ आज भारत के इंटरनेट प्रेमियों को इंटरनेट सुविधाएँ चैनलं प्रदान कर रही हैं। इंटरनेट के ग्राहकों की संख्या क्रमशः बढ़ रही है। इस समय देश में लगभग चार लाख लोग इंटरनेट का उपयोग कर रहे हैं।

इंटरनेट की कार्य-प्रणाली पर भी चर्चा करना यहां अप्रासंगिक न होगा। इंटरनेट पर कोई भी सूचना छोटे-छोटे भागों में विभाजित होकर गतिशील होती है। सर्वर सूचना को निश्चित आकार में विभाजित करके ग्राहक के पास ले जाता है। जब ग्राहक के कम्प्यूटर के पास सभी टुकड़े पहुँच जाते हैं तो वह उन्हें एकत्र करके एक स्थान पर प्रस्तुत कर देता है। ई-मेल के संदर्भ में सर्वर एक स्थनीय डाकघर की तरह काम करता है, जो विभिन्न स्थानों से आई डाक को उसके पते पर पहुँचाने की व्यवस्था करता है। टुकड़ों को जोड़ने का जो कार्य होता है उसकी प्रक्रिया में प्रयुक्त होने वाले नियमो को ट्रांसमिशन प्रोटोकॉल कहलाते हैं। संक्षेप में ई-मेलका अर्थ है किसी भी संदेश का एक कम्प्यूटर से दूसरे कम्प्यूटर पर हस्तांतरण। इंटरनेट का मुख्य कार्य है सूचनाओं का आदान-प्रदान करना। वास्तव में वह सूचनाओं का समुद्र है। यह ऐसा आकाश है, जो असीम है। इंटरनेट इस ब्रह्माण्ड में उपस्थित लगभग समस्त विषयों पर जानकारी समेटे हुए है।

8

विज्ञापन में अनुवाद

अनुवाद का अन्य माध्यमों की भांति जब विज्ञापन में भी बहुत अधिक महत्त्व है। आधुनिक समय में विज्ञापन की विशेषताओं पर व्यापार और उद्योग से संबंधित में हुआ महसूस किया जाता है। जब हमारे सामने 'विज्ञापन' शब्द प्रकट होता है, हमें यही अनुभूति होती है कि वह किसी विपणनीय वस्तु से संबंधित है, परन्तु यह एक भ्रम है, जिसे विपणन क्षेत्र में विज्ञापन के अत्यधिक प्रवेश ने उत्पन्न कर दिया है। वस्तुतः विज्ञापन तो मनुष्य की सहज प्रवृत्ति में ही सन्निहित होकर उसके आत्म प्रकाशन की भावना से सम्बद्ध है। मनुष्य सदैव और निरन्तर अपने विषय में दूसरों को ज्ञान कराना चाहता है, क्योंकि वह दूसरों के मध्य रहता है। उसकी आन्तरिक प्रेरणा उसे दूसरों को विशेष रूप से अपनें गुणों अर्थात् अच्छाइयों (जिन्हें सामाजिक रूप में स्तुत्य और आदर्श समझा जाता है) के बारे में जानकारी कराने के प्रचछन्न और अप्रछन्न कार्य कराती रहती है।

यह विज्ञापन का आदिम रूप है, जो विज्ञापन के साधनों के साथ शाश्वत रूप से संबंधित रहा है और जाने-अनजाने एक कला के रूप में विकसित भी हुआ है। विज्ञापन का मानव जीवन में ऐसी भूमिका रहती है। जिसे वह खुद से कभी पृथक् नहीं कर सकता। हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि मनुष्य को ब्रह्मचर्यो पासना, तपस्या, पूजा अर्थात् अध्यात्म चिन्तर एकान्त में करना चाहिए, कहीं निर्जन वन में जाकर करना चाहिए, जन-संकुल संसार से दूर रहकर मनुष्य को ब्रह्म के प्रति समर्पित होना चाहिए तभी उसे मोक्ष अर्थात् ब्रह्मलीन होने का

मार्ग प्राप्त हो सकता है, लेकिन प्रायः इस समाज-संकुल संसार में मनुष्य ऐसा नहीं कर पाता, कभी तो वह अपनी तपस्या के चमत्कारी परिणामों से ससांर का भछण करने समाज के रंगमंच पर उतर आता है, कभी अपने दार्शनिक चिन्तन ज्ञान से प्रेरित उपदेशक का रूप धारण कर भीड़ से भरे पंडालों की शोभा बनता है। यह सभी बातें उसकी आत्मप्रवृत्ति की परिचायक हैं, जिनकों हमे विज्ञापन के क्षेत्र में पृथक् नहीं कर सकते। शायद ही कोई इनसे मुक्त रह सकता है।

सामान्यतः मानव जब सामाजिक भलाई हेतु काम करता है। जैसे मंदिर, धर्मशाला, विद्यालय, अनाथालय आदि का संस्थापन। इससे यह दृष्टिगत होता है कि वह उसमें नामपट्ट आदि को लगाकर उस कार्य का श्रेय लेता है। इसी प्रकार मनुष्य जीवन को व्यवस्थित और अनुशासित करने के लिए राजाज्ञाओं से नियमों के प्रकाशन को भी मूलतः विज्ञापन शब्द में अभिहित नहीं किया गया, परन्तु वह भी विज्ञापन के ही क्षेत्र में आते हैं। वस्तुतः विज्ञापन शब्द तब प्रचलित हुआ जब समाचार-पत्रों का प्रकाशन आरम्भ हुआ और व्यवसायी अपने उत्पादों के विपणन कार्य की अभिवृद्धि करने के लिए उनकी गुणवत्ता आदि से संबंधित विज्ञप्तियाँ छपवाने लगे। इसके बाद समाचार-पत्र एक लम्बे समय तक ऐसी विज्ञप्तियों के साधन रहे, और जब ऐस विज्ञप्तियों को जनता की जानकारी तक पहुँचाने के लिए और साधन प्रकट हुए तो वह भी इनके माध्यम बनते चले गये।

प्राचीन समय में विज्ञापन का सर्वाधिक आसान उपाय था अलग-अलग स्थानों पर जाकर जाकर डुगडुगी, ढोल, घण्टे आदि की ध्वनि करके लोगों को इकट्ठा करना और अपनी बातें उनके सामने कहना। भाषण कला का प्रादुर्भाव भी इसी प्रकार हुआ। गायाल, खेल-तमाशे, आदि भी इसी विधा से किये गये विज्ञापनों द्वारा आहूत किये जाते थे, सरकारी आज्ञाएँ भी लोगों को बताई जाती थीं, समाचार-पत्रों के प्रकाशन के साथ यह कार्य उनमें विज्ञप्तियाँ देकर होने लगे। कहने का आशय यह है कि विज्ञापन जितने रूपों में प्रकट हुए, विज्ञापन की कला भी उतने ही रूपों में प्रकट हुई। विभिन्न भाषाओं के समाचार-पत्रों में एक ही बात की विज्ञप्ति प्रकाशित कराने के लिए, विज्ञप्ति के भाषा रूपान्तरण का कार्य जब आरम्भ हुआ तो विज्ञापन संसार में अनुवाद की आवश्यकता हुई। प्राचीनकाल में भी सरकारी नियमों का विज्ञापन सरकारी भाषा में न कराकर ऐसी भाषाओं में किया जाता था, जिसे आम जनता जानती हो, जैसे सम्राट अशोक ने अपनी विज्ञप्तियाँ संस्कृत में अंकित न कराकर 'पालि' भाषा में कराई। खेल-तमाशे वाले लोग भी जिस भाषा-भाषी प्रदेश में अपने खेल-तमाशे लेकर

जाते होंगे, अपने खेल-तमाशे का विज्ञापन वहीं की भाषा में करते रहे होंगे। यही बात विभिन्न समाचार-पत्रों के माध्यम से प्रकट हुई।

व्यावसायिक युग के विकास के साथ ऐसी विज्ञप्तियों के क्षेत्र को विभिन्न भाषाओं के सीमा क्षेत्र में पहुँचने के लिए अनुवाद के आश्रित होना स्वाभाविक था। अनुवाद कला में इससे प्रखरता उत्पन्न हुई, एक ही सामग्री का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद इस तरह किया जाने लगा कि वह जनता को अपनी ओर आकर्षित कर सके और उसकी विपणन क्षमता में विकास हो। आधुनिक युग में आकाशवाणी का जब प्रादुर्भाव हुआ तो विज्ञापन भी उसपर किया जाने लगा। फिर उसने दूरदर्शन का पल्ला भी पकड़ लिया। विभिन्न भाषाओं के कार्यक्रमों के साथ विज्ञापनों को भी उन्हीं भाषाओं में देने की आवश्यका हुई और अनुवाद का क्षेत्र और विकसित हो गया। विज्ञापन कला अब केवल लेखन तक सीमित नहीं रही, दृश्य रूप में आकर वह नाट्याभिमुखी हो गई। परिणाम यह है कि अनुवाद भी नाट्याभिमुखी हो गया। अब तो 'मोबाइल', दूरभाष' और 'इण्टरनेट' के चलन ने विज्ञापन की अनुवाद कला को और भी परिष्कृत कर दिया है, इसमें सृजन की काल्पनिकता तथा रूपान्तर में संक्षिप्तीकरण का कलापूर्ण प्रवेश हो गया है। वह चित्रकला के क्षेत्र में भी बहुत पहले से ही प्रवेश कर चुकी थी। अतः नई विज्ञापन प्रविधियाँ विकसित हुई, परन्तु अनुवाद का महत्त्व प्रत्येक प्रक्रिया का आधार है। यदि विज्ञापनकर्ता को अपने उत्पाद की विशेष्ताएँ प्रकट करनी हैं तो उसे निश्चित रूप से ही भाषा का सहारा लेना पड़ेगा। अनुवाद और विज्ञापन का संबंध उसी प्रकार शृंखलित है। जिस तरह भाषा और विज्ञापन एक दूसरे से शृंखलित है।

आधुनिक काल में विज्ञापन कला को अनुवाद कला ने प्रत्येक रूप में अनुरंजित कर दिया है। कोई भी बात जो चाहे जिस भाषा में विपणन उत्पादों की कहानी कहती हो, बिना किसी भाषा के भी अनुवाद कला मात्र से भी केवल दृश्य रूप में प्रकट की जा सकती है, अतः अनुवाद कला का यह ऐसा उत्कर्ष बिन्दु है, जो यह प्रकट करता है कि भाषाओं में लिखे गये आलेख भी दृश्यानुवादों में रूपान्तरित किये जा सकते हैं।

उद्योग और व्यापार, वर्तमान अर्थव्यवस्था के सबलतम स्तम्भों के रूप में स्थापित हो चुके हैं। मानव को मनुष्य को भोजन, वस्त्र तथा आवास की मूल आवश्यकताओं के साथ-साथ उसकी परम आवश्यकता का एक रूप और प्रकट हुआ-सा प्रतीत होता है-वह है दर्शनीयता का। मनुष्य की प्रवृत्ति दर्शनीय वस्तुओं

की उपयोगिता, उपयोग के बन्धन में आबद्ध हो गयी-सी प्रतीत होती है, परन्तु यह बात नयी-सी लगने पर भी नयी नहीं है। आदिकाल से ही मनुष्य सौन्दर्य के प्रति आसक्त रहा है, परन्तु इस काल में उसकी यह प्रवृत्ति विज्ञापन-प्रचुरता और उनकी कलात्मकता ने बहुरंजित कर दी है, क्योंकि इस प्रकार की बहुरंजना नये-नये उत्पादों के भौतिक उपयोग की ओर उसे लालायित करती है। इसका श्रेय अनुवाद कला को ही जाता है। दूरदर्शन और समाचार पत्र विज्ञापनों का मूल्य वसूल करने के साथ-साथ उनमें कितना कलात्मक आकर्षण है। यह भी देखने लगे हैं, जिस प्रकार किसी दूरदर्शन कार्यक्रम का समाचार-पत्रों के समाचारों को पढ़ने के लिए लोग इच्छुक होते हैं, वह विशेष विज्ञापनों को भी देखना पसन्द करते हैं। वस्तुतः ऐसे विज्ञापन कलात्मक अनुवाद होते हैं, जो किसी भी भाषा का परोक्ष सहारा नहीं लेते, लेकिन बात वही कहते हैं, जो कभी किसी भाषा में किसी विज्ञापन-विशेषज्ञ ने सृजित की होगी। इसे हम चित्रात्मक अनुवाद कह सकते हैं।

आधुनिक युग में विज्ञापन-मात्र उत्पादकों के सोच और उनके द्वारा ही निर्माण करने की वस्तु नहीं रह गयी है, बल्कि वह विज्ञापन विशेषज्ञों के पाले में पहुँच चुकी है। सैकड़ों विज्ञापन संस्थाएं इस क्षेत्र में उतर चुकी हैं और अब उत्पादकों को अपने उत्पादों के विज्ञापन खुद बनाने की जरूरत नहीं रह गयी है।

विज्ञापन बनाने वाली संस्थायें प्रतिदिन हजारों विज्ञापन तैयार कर रही है। ये विज्ञापन दुनिया की सभी भाषाओं में कराये जाते हैं। इन विज्ञापन कम्पनियों में बड़े-बड़े मनोवैज्ञानिक और साहित्य सृजन शक्ति से सम्पन्न लोग, कई-कई भाषाओं के ज्ञान से सम्बद्ध है। सामचार-पत्रों और उसके अतिरिक्त हजारों-लाखों पत्र-पत्रिकाओं में जो दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक, अर्द्धवार्षिक एवं वार्षिक पत्र-पत्रिकाओं में अनुदित विज्ञापन हिन्दी में भी पढ़े या देखे जो सकते हैं। विदेशी प्रसाधनों, वस्तुओं के विज्ञापन हिन्दी में अनुदित होकर ही प्रकाशित होते हैं। ये विज्ञापन अन्य पुस्तकों, चलचित्रों, समाचार के मध्य में, विभिन्न कार्यक्रमों में, दूरदर्शन और आकाशवाणी द्वारा किये जा रहे हैं। इनका विवरण सम्भव नहीं है। इनमें सदैव ही मनोरंजक तत्त्व डालने की चेष्टा की जाती है। इनकी कलात्मकता से आकर्षित होकर जहाँ समाचार-पत्र अपनी रूप-सज्जा में चार चाँद लगाते है, वहीं इनसे पाठक भी मनोरंजन का आनन्द लेते हैं। विज्ञापन एजेंसियां विाापन में ऐसे तत्त्व विचार विमर्श कर डालती है, जो पाठकों और दर्शकों को मनोरंजन प्रदान करते हैं। इन विज्ञापनों के लेखक बड़ी चतुराई से शब्द

चयन करते हैं एवं दूरदर्शन के लिए इनकी पटकथाएँ लिखते हैं। विज्ञापन के क्षेत्र में देश-विदेश तथा अन्य भाषाओं में विज्ञापन, दूसरी भाषाओं में रचनात्मकता में बढ़ोतरी करते हैं। वर्तमान समय में यह बहुत अधिक प्रचलित है।

अर्थ एवं परिभाषा

शविज्ञापनश शब्द 'वि' और 'ज्ञापन' से मिलकर बना है। 'वि' का आभिप्राय 'विशिष्ट' तथा 'ज्ञापन' का आभिप्राय सूचना से है। अत: विज्ञापन का अर्थ 'विशिष्ट सूचना' से है। आधुनिक समाज में 'विज्ञापन' व्यापार को बढ़ाने वाले माध्यम के रूप में जाना जाता है।

विलियम वेलबेकर

विज्ञापन सूचनाएँ प्रचारित करने का यह साधन है, जो कि किसी व्यापारिक केन्द्र अथवा संस्था द्वारा भुगतान प्राप्त तथा हस्ताक्षरित होता है और इस संभावना को विकसित करने की इच्छा रखता है कि जिनके पास यह सूचना पहुँचेगी वे विज्ञापनदाता की इच्छानुसार साचेंगे अथवा व्यवहार करेंगे।

द न्यू एनसाईक्लापीडिया ब्रिटानिका

विज्ञापन सम्प्रेषण का यह प्रकार है, जो कि उत्पादक अथवा कार्य को उन्नत करने, जनमत को प्रभावित करने, राजनैतिक सहयोग प्राप्त करने, एक विशिष्ट कारण को आगे बढ़ाने अथवा विज्ञापनदाता द्वारा कुछ इच्छित प्रतिक्रियाओं को प्रकाशित करने का उद्देश्य रखता है।'

बृहत हिन्दी कोश

विज्ञापन के पर्यायवाची के रूप में समझना सूचना देना, इश्तहार, निवेदन करना आदि शब्द दिए गए है।

विज्ञापन के कार्य

विज्ञापन के निम्नलिखित कार्य हैं–

1. नवीन वस्तुओ और सेवाओ की सूचना देना।
2. किसी वस्तु की उपयोगिता एवं श्रेष्ठता बताते हुए उसकी ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करना।

3. उपभोक्ताओ में वस्तु के प्रति रुचि तथा विश्वास उत्पन्न करना।
4. उपभोक्ताओ की स्मृति को प्रभावित करना।
5. विशेष छूट आदि की जानकारी देते हुए उपभोक्ता-माँग में वृद्धि करना।
6. वस्तु को स्वीकार करने अपनाने और उसे खरीदने की प्रेरणा देना।
7. विज्ञापन अन्य उत्पाद कम्पनियो के उत्पादनो की तुलनात्मक जानकारी देता है।
8. बाजार में उत्पाद कम्पनियो को स्थिरता प्रदान करता है।

विज्ञापन के प्रकार

तमाम आलोचनाओं के होते हुए भी विज्ञापन हमारे जीवन स्तर को सुधारनें तथा उत्पादन बढ़ाने का प्रभावी माध्यम है। आज हम विज्ञापन युग के सीमान्त पर आ खड़े हुए हैं। विज्ञापन को उत्पादित वस्तु बेचने अथवा प्रचारित करने की कला का सीमित उद्देश्य न मानकर जन चेतनायुक्त कलात्मक विज्ञापन को भी प्राथमिकता देनी चाहिए।

वर्तमान समय में विज्ञापन के कई रूप हमारे सामने आते है। इनको निम्नलिखित प्रकारो में रखा जा सकता है।

अनुनेय विज्ञापन

विज्ञापन माध्यम से जनता अथवा उपभोक्ता तक पहुँचने उन्हे अपनी ओर आकर्षित करने, रिझाने, उत्पाद की प्रतिष्ठा तथा उसके मूल्य को स्थापित किया जाता है। इस प्रकार के विज्ञापन निर्माता तब प्रसारित करता है, जब उसका उद्देश्य ग्राहकों के मन में अपनी वस्तु का नाम स्थापित करना होता है और यह आशा की जाती है कि ग्राहक उसे खरीदेगा। विज्ञापन विभिन्न माध्यमों के आधार पर विशिष्ट उपभोक्ताओं को अपने उद्देश्य के लिए मनाने की इच्छा रखते है।

सूचनाप्रद विज्ञापन

इस प्रकार का विज्ञापन सूचनाओं को प्रसारित करने की एवं व्यापारिक आभिव्यक्ति के रूप में सामने आता है। साथ ही इन विज्ञापनों का उद्देश्य जन-साधारण को शिक्षित करना, जीवनस्तर उंचा करना, सांस्कृतिक बौद्धि तथा आध्यात्मिक उन्नति करने का भाव निहित होता है। सामुदायिक विकास सुधार, अंतराट्रीय सद्भाव, वन्य प्राणी रक्षा, यातायात सुरक्षा आदि क्षेत्रों में जन-साधारण की भलाई के उद्देश्य से सूचना प्रदान कर जागरकता उत्पन्न करता है।

सांस्थानिक विज्ञापन

सांस्थानिक विज्ञापन व्यावसायिक संस्थानों द्वारा प्रकाशित व प्रचारित कराये जाते है। संस्थाओं के रूप में बड़े-बड़े उद्योग समूह अंतराष्ट्रीय अथवा राष्ट्रीय स्तर की कंपनियाँ आदि विज्ञापन प्रस्तुत कर राष्ट्रहित संबंधी जनमत निर्माण करती है। विज्ञापन की विषय-वस्तु नितान्त जन-कल्याण से संबंधित होती है, किन्तु इसमें स्व-विज्ञापन भी निहित होता है।

औद्योगिक विज्ञापन

औद्योगिक विज्ञापन कच्चा माल, उपकरण आदि की क्रय में वृद्धि के उद्देश्य से किया जाता है, इस प्रकार के विज्ञापन प्रमुख रूप से औद्योगिक प्रक्रियाओं में प्रमुखता से प्रकाशित किये जाते है, इस प्रकार के विज्ञापनों का प्रमुख उद्देश्य सामान्य व्यक्ति को आकर्षित करना नहीं होता है, वरना औद्योगिक क्षेत्र से संबंधित व्यक्तियों, प्रतिष्ठानों तथा निर्माताओं को अपनी ओर आकृष्ट करना होता है।

वित्तीय विज्ञापन

वित्तीय विज्ञापन प्रमुख रूप से अर्थ से संबंधित होता है, विभिन्न कंपनियों द्वारा अपने शेअर खरीदने का विज्ञापन उपभोक्ताओं को निवेश के लिए प्रोत्साहित करने संबंधित विज्ञापन इसी श्रेणी में आते है, कभी-कभी कंपनी अपनी आय व्यय संबंधित विवरण देने की अपनी आर्थिक स्थिति की सुदृढता को भी विज्ञापित करती है।

वर्गीकृत विज्ञापन

इस प्रकार के विज्ञापन अत्याधिक संक्षिप्त सज्जाहीन एवं कम व्ययकारी होते हैं। शोक संवेदना, ज्योतिष विवाह, बधाई, क्रय-विक्रय, आवश्यकता, नौकरी, वर-वधू आदि से संबंधित इस प्रकार के विज्ञापन समाचार पत्र में प्रकाशित होते हैं।

अन्य विज्ञापन

उक्त प्रकार के विज्ञापनों के आतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार के विज्ञापन भी दृष्टिगत होते है।

(अ) सम्मानक विज्ञापन (PrestigeAdvertisment)– लोकमत अथवा जनमत तैयार करने के उद्देश्य से चुनापूर्ण घोषणापत्र विज्ञापित किया जाता है, जिसे सम्मानक विज्ञापन की श्रेणी में रखा जाता है।

(आ) स्मारिका विज्ञापन (SovenierAdvertisment) –किसी सांस्कृतिक कार्यक्रम समाज सेवी संस्था आदि द्वारा आयोजित कार्यक्रम के अंतर्गत स्मारिका का प्रकाशन किया जाता है, जिसमें सामान्य रूप से आधिक सहायता के रूप में विज्ञापन प्रकाशित किये जाते हैं। संस्था का परिचय, संस्था के प्रमुख कार्यक्रम, संस्था के पदाधिकारियों का विवरण आदि के साथ इन विज्ञापनों को भी प्रकाशित किया जाता है।

माध्यम के अनुसार वर्गीकरण

विज्ञापन के माध्यम के अनुसार वाणिज्यिक विज्ञापन, मीडिया भितिचित्र, होर्डिंग, सडक फर्नीचर घटकी, मुर्दित और रैक कार्ड, रेडियो, सिनेमा और टेलीविजन स्क्रीन, शॅपिंग कार्ट, वेब, बस स्टाप, बेंच आदि का शामिल कर सकते है।

टेलीविजन विज्ञापन एक ताजा अध्ययन बताता है कि सभी विज्ञापनों में अभी भी टेलीविजन विज्ञापन सबसे प्रभावी विज्ञापन का तरीका है। इस वाक्य का साभित हम देख सकते है जब लोकप्रिय घटनाओं के दौरान टेलीविजन चैनलों वाणिज्यिक समय के लिए उच्च कीमतों चार्ज करते है। संयुक्त राज्य अमेरिका में वार्षक 'सूपर बाउल' फुटबाल खेल टेलीविजन पर सबसे प्रमुख विज्ञापन घटना के रूप में जाना जाता है।

रेडियो विज्ञापन

रेडियो विज्ञापनों का प्रसारित ट्रांसमीटर एवं एंटीना नामक यंत्रों द्वारा किया जाता है। एयरटाइम विज्ञापनों के प्रसारण के लिए विदेशी मुद्रा में एक स्टेशन या नेटवर्क से खरीदा जाता है। 'आर्बिट्रान' नामक संस्थान के अनुसार अमेरिका के 93 प्रतिशत जनसंख्या रेडियो का इस्तेमाल करती है।

ऑनलाइन विज्ञापन

ऑनलाइन विज्ञापन ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए इंटरनेट और वर्ल्ड वाइड वेब का उपयोग करते है। ऑनलाइन विज्ञापन एक विज्ञापन सर्वर द्वारा वितरित का उदाहरण, खोज इंजन परिणाम पृष्ठों पर दिखाई देते हैं।

छाप विज्ञापन

जो विज्ञापन समाचार पत्रों, पत्रिका, व्यापार पत्रिका में प्रकाशित किया जाता है, उसे हम छाप विज्ञापन कहते हैं। छाप विज्ञापन का पहला पत्र वर्गीक्रुत विज्ञापन है। छाप विज्ञापन का दूसरा पत्र प्रदर्शन विज्ञापन है। प्रदर्शन विज्ञापन में एक बड़ा विज्ञापन में एक बड़ा विज्ञापन को अखबार का एक लेख का रूप दिया जाता है।

बिलबोर्ड विज्ञापन

बिलबोर्ड बड़े बोर्ड हैं, जिनका उपयोग सार्वजनिक स्थानों किया जाता है। प्राय: बिलबोर्ड मुख्य सडकों के किनारे लगाये जाते हैं।

दुकान में विज्ञापन

जो विज्ञापन दुकानों के अंदर स्थापित किया जाता है उसे हम दुकान में विज्ञापन या 'इन स्टोर' विज्ञापन कहते है।

हवाई विज्ञापन

विमान, हवाई गुब्बारा द्वारा प्रकाशित किये विज्ञापनों को हम हवाई विज्ञापन कहते हैं।

विज्ञापन और अनुवाद के संबंध

सूचना क्रांति के इस युग में प्रत्येक मानव स्वयं को एक स्वयं किये गये कार्यों को दूसरों को बताना चाहता है। कार्य बाद में शुरू होता है, पर विज्ञापन पहले से आरम्भ हो जाता है। पहले धार्मिक कार्य, भजन-पूजन आदि शान्त वातावरण में किये जाते थे। आज उनका विज्ञापन करने के लिए जगह-जगह बोर्ड लगाये जाते हैं और पर्चे बाँटे जाते हैं। कार्यक्रम दूर के लोगों को भी सुनाई पड़े, इसके लिए लाउडस्पीकर लगाये जाते हैं।

विज्ञापन का संबंध भाषा से है, इसलिए इसमें अनुवाद की जरूरत होती है।

9

वैचारिक साहित्य का अनुवाद

भविष्य में वैश्विक स्तर पर भाषिक तौर से कई बदलाव होने की संभावनाएं बन रही है। उसका मूल कारण वैश्विकरण है। देश-दुनिया कई मायनों में एक समान स्तर पर काम करने की मानसिकता से गुजर रहे हैं। आर्थिक और औद्योगिक प्रगति मनुष्य को एक-दूसरे के पास लेकर आ रही है। इन स्थितियों में आपसी विचार-विमर्श और वैचारिक आदान-प्रदान के लिए भाषा की मदद लेनी पड़ती है। हर एक को देश और दुनिया की सभी भाषा का ज्ञान हो या कोई एक व्यक्ति एक से ज्यादा भाषाओं में निपुण होगा कहना गलत होगा। ऐसी स्थितियों में अनुवाद की अहं भूमिका रहती है। भारतीय और वैश्विक साहित्य जगत में अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। अनुवाद के माध्यम से देश-दुनिया का प्रसिद्ध साहित्य, वैचारिक साहित्य, ज्ञानात्मक साहित्य, तंत्रविज्ञान, विज्ञान और तमाम प्रकारों की सामग्री हमारे लिए उपलब्ध हो रही है, लेकिन इस अनुवाद की प्रक्रिया सहज और सरल नहीं है। कई प्रकार की मुश्किलों से पार करता यह कार्य लेखक और अनुवादक की कड़ी परीक्षा लेता है। इस परीक्षा में सफल होनेवाला व्यक्ति ही सही अनुवाद को अंजाम तक लेकर जा सकता है। वैचारिक साहित्य के अनुवाद करते समय वैसी ही कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है। कई प्रकार की मानसिकताओं और दबावों से गुजरना पड़ता है। निरंतरता अगर खंड़ित हो गई तो दुबारा अनुवाद की गाडी को पटरी पर लाना भी मुश्किल होता है।

अनुवाद कार्य में विशेष रूप से दो तरह की समस्याएँ आती हैं–

(1) अर्थपरक, तथा

(2) शैलीपकर।

अर्थ संप्रेषण–यह अनुवाद का एक मात्रा लक्ष्य होता है। स्रोत-भाषा का अर्थ अपने यथार्थ भाव में लक्ष्य भाषा में उतारने का काम अनुवादक की कुशलता का परिचायक है। शाब्दिक भावों की गहराई की पूर्ति केवल कौशल से ही की जा सकती है। इसी कारण अर्थ का अन्तरण करते समय शब्दानुवाद करना है अथवा भावानुवाद, यह समस्या अनुवादकों के समक्ष सदा बनी रहती है। यह समस्या प्रत्येक भाषा की भिन्न अर्थ-संरचना के कारण उत्पन्न होती है। प्रत्येक भाषा में प्रतीकों की व्यवस्था का एक भौतिक रूप होता है, जो प्रायः समान नहीं होता है। व्याकरणिक संरचना के अन्तर के कारण इनके अर्थ-तत्त्व में भी अन्तर हो जाता है। प्रायः स्रोतभाषा की अभिव्यक्ति से जो अर्थ निकलता है, वह लक्ष्य-भाषा की अभिव्यक्ति से व्यक्त होने वाले अर्थ की तुलना में या तो विस्तृत होता है, या संकुचित या कुछ भिन्न होता है, या फिर इनमें से दो या अधिक का मिश्रण। अर्थ की सबसे गंभीर समस्या यह है कि एक ही शब्द के अनेक अर्थ होते हैं और इसका अर्थ सन्दर्भ पर ही निर्भर होता है। अर्थ के अन्तरण में सन्दर्भ का बड़ा महत्त्व होता है। ये सन्दर्भ प्रमुख रूप से साहचर्य के साथ जुड़े होते हैं। इसी कारण से **मैलिनोवस्की** और **फिर्थ** इसे साहचर्य का सन्दर्भ (Context ofAssociation) कहा करते हैं।

अनेक शब्दों के अनुवाद में साहचर्य के साथ जुड़े हुए इस सन्दर्भ का अन्तरण बहुत ही मुश्किल हो जाता है, क्योंकि एक भाषा में एक खास शब्द का जो साहचर्य होता है, वह अन्य भाषा में मिल नहीं सकता। भारतीय विचारधारा के अनुसार वाक्य, प्रकरण, अर्थ, औचित्य, देश, काल, संसर्ग, विप्रयोग, साहचर्य, विरोधिता, लिंग, अन्य शब्द, सन्निधि, सामर्थ्य व्यक्ति एवं स्वर–इन उपायों के द्वारा ही शब्दार्थ की ठीक-ठीक पहचान हो सकती है। शब्दानुसार अथवा शब्द का अभिधेयार्थ मात्रा लेने पर समस्याएँ पैदा हो सकती हैं। इसके अलावा जहाँ समान शब्द मिल भी जाते है, वहाँ समान शब्द से अनुवाद करने में भी कई समस्याएँ पैदा हो जाती है।

शब्दानुवाद के प्रमुख रूप से तीन दोष बताये जा सकते है–

(1) शाब्दिक अनुवाद के अर्थ का अनर्थ हो जाता है।

(2) इसके कारण ही अनुवाद में दुरूहता आ जाती है।

(3) शब्दानुवाद से ऐसे शब्द बनते हैं, जो भाषा की प्रकृति के विपरीत होंगे।

भावानुवाद में भावों, विचारों एवं अर्थों के बिम्ब ही प्रतिबिम्बित किये जाते हैं। आधुनिक भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार प्रत्येक शब्द में निम्न स्थितियों में भावानुवाद जरूरी हो जाता है–

(1) शब्दों का अर्थ-वाक्य में प्रयुक्त होने पर उसका अभिधेयार्थ या कोशार्थ मात्रा नहीं रह जाता।

(2) शब्द-क्रम के परिवर्तन और बलाघात, स्वराघात आदि के कारण अर्थ में भिन्नता आ जाती है।

(3) अन्य शब्द के संयोग से शब्द का अभिधेयार्थ पूरी तरह खत्म हो जाता है और उसमें गहरा अर्थ संगुंफित हो जाता है।

नावोकोब सुन्दर भावानुवाद की अपेक्षा भौड़े, किन्तु शाब्दिक अनुवाद को उपयुक्त मानते हैं तो **फिट्स जेराल्ड** मूल से किंचित भिन्न होने पर भी भावानुवाद को श्रेष्ठ मानते हैं, परन्तु जैसा कि हमने स्पष्ट किया है, अनुवाद के व्यावहारिक पक्ष को लेते समय हम कह सकते हैं कि एक मध्य मार्ग ही उत्तम होता है, अर्थात् जहाँ तक हो सके, शब्द निष्ठ भौड़े अनुवाद की अपेक्षा भावानुवाद की शैली अपनाएँ, परन्तु जहाँ भी जरूरी हो, शाब्दिक अनुवाद को भी अपनाते चलें।

(1) सामाजिक-सांस्कृतिक–अनुवाद में सामाजिक-सांस्कृतिक तत्त्वों के अन्तरण में अर्थ की सबसे गंभीर समस्या पैदा होती है मनुष्य जिस तरह किसी न किसी सभ्यता-संस्कृति को लेकर चलता है, उसी प्रकार उसकी भाषा भी किसी न किसी सभ्यता संस्कृति के परिवेश में प्रवाहमान है। प्रत्येक भाषा का एक विशिष्ट सांस्कृतिक परिवेश होता है, जिसके निर्माण में उस भाषा के बोलने वालों को ऐतिहासिक, नृतत्त्वशास्त्रीय, सामाजिक एवं भौगोलिक परिस्थितियों का हाथ रहता है। प्रत्येक भाषा में ऐसे अनेक सामाजिक सांस्कृतिक शब्द होते हैं, जिनके पीछे एक सुदीर्घ ऐतिहासिक परम्परा एवं सम्बद्धताएँ होती हैं। मैलिनोवस्की आधुनिक युग के प्रसिद्ध नृतत्त्व विज्ञानी हैं, जिन्होंने अनुवाद की सामाजिक -सांस्कृतिक समस्या पर गम्भीर रूप से विचार किया है। ट्रोबियान द्वीप (न्यू गिनिया) के आदिवासियों की भाषा के अनेक विशिष्ट शब्दों का अनुवाद करते समय ही उन्होंने अपने अर्थ-परक सिद्धान्त 'साहचर्य का सन्दर्भ' को रूप दिया था। उनके अनुसार अनुवाद की प्रमुख कठिनाई का कारण शब्दों के पीछे निहित सांस्कृतिक सन्दर्भ है। यह सांस्कृतिक सन्दर्भ उसके बोलने वालों के रीति-रिवाज,

आचार-विश्वास आदि पर आधारित हैं। इस कारण **मैलिनोवस्की** के अनुसार अनुवाद से मतलब "सांस्कृतिक सन्दर्भों का ऐक्य अथवा समतुल्या" से हैं। इसी की व्याख्या करते हुए **रिचार्ड्स** और **ऑगडन** बताते हैं कि शब्द और अर्थ उसके बोलने वालों के सांस्कृतिक परिवेश से भिन्न अस्तित्त्व नहीं रखते। अनुवाद में समतुल्यता की खोज करते समय यह सांस्कृतिक सन्दर्भ पर प्रश्न-चिह्न बन जाता है।

अनुवाद अत्यधिक सतर्कता से किया जाने वाला कार्य है। लेखक, मूल रचना का सांस्कृतिक परिवेश, लेखक की अनुभूति एवं रचना की कलात्मकता को अनुवाद में अनुवादक तथा उसकी अनुभूति एवं अनुदित रचना के सांस्कृति परिवेश द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है। जब मूल तथा अनुवाद का मिलान किया जाएगा, तब रचना के ये सारे अंग उसमें ज्यों के त्यों आ जाने चाहिए। ताकि उसका अर्थ न बदले।

भिन्न-भिन्न युगों के समाज में साथ-साथ समकालीन समाज के साथ-साथ भी संस्कृतिक भिन्नता विद्यमान रहती है। जो अनुवाद में समस्या पैदा करती है। जिन भाषाओं के बीच सांस्कृतिक समानता जितनी अधिक होती है, उनके बीच अनुवाद करने में भी उतनी ही सुविधा होती है, लेकिन संस्कृति की विभिन्नता अनेक समस्याएँ उत्पन्न करती है। पाठकों की कठिनाई यह होती है कि वे अपनी भाषा के सांस्कृतिक परिवेश में ही स्रोत-भाषा की संस्कृति के प्रति अपनी प्रतिक्रिया प्रकट करते हैं। ऐसी भिन्न संस्कृतियों के बीच अनुवाद करते समय मूल के परिवेश के प्रति ईमानदारी बरतने के साथ ही लक्ष्य-भाषा के पाठकों के परिवेश और मनौवेज्ञानिक दृष्टिकोण का भी अनुवादक को ध्यान रखना पड़ता है।

(2) समान शब्दावली में अर्थ की समस्याएँ–एक पृष्ठभूमि के लोगों की समान शब्दावली की संख्या भी ज्यादा होती है। समान शब्दावली के प्रमुख स्रोत हैं–आगत शब्दावली तथा भाषाओं का समान स्रोत। भारत की आर्य परिवार की भाषाओं में तथा द्रविड़ परिवार की भाषाओं में संस्कृत के समान शब्द 50 प्रतिशत से अधिक मिलते हैं। हिन्दी और मलयालम में तो समान संस्कृत शब्दों की मात्रा 60 प्रतिशत से अधिक होगी, परन्तु समान शब्दावली जहाँ अनुवादक के काम को सुगम बनाती हैं, वहाँ अर्थ के अन्तर के कारण वह उलझन में भी पड़ जाता है। अनुवादक जहाँ समान शब्दों को अपनाने के लोभ से बच नहीं पाता, वहाँ वह अर्थ के अन्तर के कारण वह धोखे में पड़ जाता है। **मारियो पाई** इस

प्रकार के शब्दों को "धोखा देने वाले समान शब्द" कहते हैं। मराठी और हिन्दी के परस्पर अनुवाद पर विचार करते हुए **डॉ. शान्तिस्वरूप गुप्त** ने समान शब्दावली अनुवाद की तीन प्रमुख समस्याओं का उल्लेख किया है– भ्रामक अनुरूपता, अर्थ छाया तथा शब्द छाया।

उपरोक्त समस्या का एक सामान्य व्यवहारिक समाधान यह है कि जहाँ भ्रामक अनरूपता हो, वहाँ पर अनुवाद में स्रोत-भाषा का अर्थ दें, परन्तु जहाँ अर्थ-छाया होती है, वहाँ पर प्रयोगोचित्य को ही मानदण्ड बनाकर मूल शब्द को अपनाया जा सकता है अथवा अर्थ मात्र दे सकते हैं। हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के सन्दर्भ में इस गंभीर समस्या को विस्तृत रूप में समझा जा सकता है।

(3) अनुवाद की शैलीपरक समस्याएँ-यह भी अनुवाद में एक गंभीर समस्या है। **ब्लाडिमिर प्रोचाजका** मूल की शैली का विश्लेषण तथा उसक लिए लक्ष्य भाषा में "समतुल्य शैलीगत संरचना" पर बल देते हैं अनुवाद को मूल लेखक की शैली के हर पहलू को समझना आवश्यक होता है। तभी वह 'शैलीगत समतुल्यता' की खोज कर सकता है, परन्तु कठिनाई यह है कि प्रत्येक भाषा की शैलीगत संरचनाओं में अन्तर हो जाता है और स्रोत-भाषा के बीच अस्वाभाविकता आ जाती है। अनुवाद की प्रक्रिया में एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि अनुवादक मूल भाषा की शैली का अनुकरण करने में प्रायः उतना सफल नहीं होता, जितना मूल लेखक की शैली को सुरक्षित रखने में होता है। भाषा की शैली से मतलब है अभिव्यंजना के प्रकार से और लेखक की शैली का मतलब है। उस अभिव्यंजना के विधान में लेखक के व्यक्तिगत चुनाव और रुचि से। भाषा की शैली के सन्दर्भ में अनुवाद की शैलीगत कई सामान्य समस्याएँ आती हैं, जबकि सभी लेखक की लिखने की अपनी अपनी शैली होती है। इसलिए उसकी समस्याएँ विशिष्ट हो सकती हैं। वैसे लेखक की शैली भी एक हद तक उसकी भाषा के व्यापक शैली स्वरूप का ही अंग होती है। इस कारण से शैली की सामान्य समस्याओं के अन्तर्गत दो भाषाओं की शैलीगत संरचना की लगभग सभी कठिनाईयाँ आ जाती हैं। उदाहरणार्थ प्रसाद, प्रेमचन्द, नेहरू या गाँधी की रचनाओं के अनुवाद में भिन्न-भिन्न शैलियों को अपनाना पड़ेगा। परन्तु इनकी रचनाओं के अनुवाद में अनेक ऐसी सामान्य शैलीगत समस्याएँ भी आती हैं, जो भाषा की शैलीगत संरचना या गठन से संबंधित होती हैं। आधुनिक शैलीविज्ञान में शैली का अध्ययन 'नार्म' से विचलन के रूप में किया जाता है। **सोल सपोर्टा** के अनुसार यह विचलन दो तरह का होता है, जो निम्नवत है–

(i) व्याकरणिक नियमों से रहित प्रयोग अथवा व्याकरण विरोधी प्रयोग।

(ii) छन्द आदि के द्वारा निर्मित बन्धन जो सामान्य भाषा में दिखाई नहीं पड़ता।

इस आधार पर शैली का अध्ययन करने वालों ने रूपान्तारणात्मक तथा सांख्यिकीय प्रणाली से काव्य तथा साहित्यिक भाषा क विश्लेषण किया है। अनुवाद के सन्दर्भ में शैलीविज्ञान का यह दृष्टिकोण उपयोगी नहीं होगा। अनुवाद की शैलीपरक समस्याओं के विश्लेषण में शैली के प्रति दृष्टिकोण निम्नांकित आधार पर होगा– शैली से तात्पर्य अभिव्यंजना की प्रणाली से है। **सेंथाल** की यह परिभाषा इस सन्दर्भ में सार्थ है कि किसी विचार या कथ्य को उसके समग्र प्रभाव के साथ अभिव्यक्त करने के लिए जो सहायक तत्त्व होता है, वह शैली कहलाता है। अनुवाद के सन्दर्भ में शैली का अध्ययन व्यतिरेकी शैलीविज्ञान के आधार पर किया जाएगा। व्यतिरेकी शैलीविज्ञान का आधार होगा स्रोत-भाषा एवं लक्ष्य-भाषा का शैलीपरक साम्य और वैषम्य। सभी भाषा की जो साधारण शैली है वही उसका 'नार्म' है और 'विचलन' से तात्पर्य है लेखक की वैयक्तिक शैली अर्थात् भाषा की शैली में से लेखक का वैयक्तिक चुनाव। शैली को 'अभिव्यंजना की प्रणाली' मान लेने पर ध्वनिपरक, शब्दपरक एवं व्याकरणिक दृष्टि अभिव्यंजना के जो विशिष्ट तत्त्व होंगे, उन्हीं का अध्ययन शैली के अन्तर्गत किया जाएगा। अर्थ को निहित तत्त्व के रूप में शैली से जुड़े अन्तरंग तत्त्व के रूप में देखना होगा।

अधिकतर विद्वानों का यह मानना है कि शैली-तत्त्व कविता तथा सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद में ही महत्त्वपूर्ण हैं, परन्तु वास्तविकता यह है कि वैज्ञानिक साहित्य, व्यावसायिक पत्र, कानून अभिलेख आदि में भी शैली का स्थान कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। इन सबमें शैलीगत समस्याएँ प्रमुख रूप से भाषा की शैलीगत संरचना के वैशिष्ट्य के कारण उत्पन्न होती हैं। भाषाओं के मध्य जो शैलीगत अंतर दृष्टिगत होता है। वह एक अत्यन्त जटिल भाषा वैज्ञानिक प्रक्रिया है। इस जटिलता के कारण अनुवादक के कार्य में समस्याएँ ही समस्याएँ दृष्टिगत होती हैं। अनुवाद में शैली की समस्याओं के अध्ययन के लिए कैटफोर्ड आदि भाषावैज्ञानिकों के अध्ययन से सहारा लेते हुए इन समस्याओं को प्रमुख रूप से चार स्तरों में विभाजित कर सकते हैं– (1) स्वनिम स्तरीय समस्याएँ, (2) शब्दस्तरीय समस्याएँ, (3) रूपस्तरीय समस्याएँ, एवं (4) वाक्यस्तरीय समस्याएँ।

वैचारिक साहित्य की अनुवाद पद्धति

साहित्य में शुष्क ज्ञान-विज्ञान की चर्चा के अलावा सूक्ष्म संवेदनाओं का भी अनुभव कराया जाता है। विचारशीलता सम्पूर्ण साहित्य का आधार है। शब्दों के रूप में पाये जाने वलो मानदण्ड सभी भाषाओं में समान नहीं होते। साहित्य मनुष्यों के भावों और विचारों का ही विवेचन करता है। वैचारिक साहित्य का एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद आसानी से किया जाता है। अनुवाद में अर्थपरक और शैलीपरक दोनों तरह की कठिनाई दृष्टिगत होती है। अनुवाद का एकमात्र लक्ष्य अर्थ का सम्प्रेषण होता है। अनुवाद की कुशलता इसी में है कि वह एक भाषा के भाव और विचार दूसरी भाषा में स्पष्ट और पूर्णरूप से उतार सके। प्रत्येक भाषा में प्रतीकों का भौतिक रूप होता है। व्याकरण संबंधी रचना के अन्तर के कारण शब्दों के अर्थ में अन्तर आ जाता है। मूल भाषा और अनुवाद की भाषा में समान अर्थ विस्तार वाले शब्दों का न मिलना भी समस्या पैदा करता है।

समान शब्दावली में अर्थ तथा अनुवाद की शैलीपरक समस्या

समान पृष्ठभूमि वाली भाषाओं में समान शब्द अधिक मात्रा में होते हैं। भारत में आर्य परिवार और द्रविड़ परिवार की भाषाओं के व्याकरण और शब्द रचना में पर्याप्त अन्तर है। संस्कृत के शब्द दोनों में पाये जाते हैं। हिन्दी और मलयालम में संस्कृत के समान शब्दों की मात्रा 60 प्रतिशत है। समान शब्दों के कारण अनुवादकर्त्ता का काम सरल होता है, पर अर्थ के अन्तर के कारण उसे समस्या होती है।

अनुवाद करते समय अनुवादक को मूल भाषा के लेखक की शैली को पूर्ण रूप से समझना चाहिए। इसके बिना शैलीगत समतुल्यता का निर्वाह नहीं हो पाता है। अनुवादकर्त्ता के समक्ष यह समस्या पैदा होती है कि सभी भाषाओं की शैली समान नहीं होती। अनुवाद में मूल लेखक की शैली के अनुकरण की अपेक्षा मूल लेखक की शैली को सुरक्षित रखना चाहिए। अनुवाद में अलग-अलग शैलियों को आत्मसात् ककरना पड़ता है। इस काम में बहुत अधिक सावधानी की आवश्यकता होती है।

10

वाणिज्यिक अनुवाद

धन प्राप्ति के उद्देश्य से वस्तुओं का क्रय-विक्रय करना ही वाणिज्य (कॉमर्स) है। किसी उत्पादन या व्यवसाय का वह भाग जो उत्पादित वस्तुओं एवं सेवाओं की उनके उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं के बीच विनिमय से संबंध रखता है, वाणिज्य कहलाता है। वाणिज्य के अन्तर्गत किसी आर्थिक महत्त्व की वस्तु, जैसे सामान, सेवा, सूचना या धन का दो या दो से अधिक व्यक्ति या संस्थाओं के बीच सौदा किया जाता है। वाणिज्य पूंजीवादी अर्थव्यवस्था एवं कुछ अन्य अर्थव्यवस्थाओं का मुख्य वाहक है।

दुनिया को आर्थिक समृद्धि वाणिक के कारण ही प्राप्त हुई है। वैज्ञानिक उपलब्धियों ने दुनिया को आर्थिक समृद्धि वाणिक के कारण ही प्राप्त हुई है। मारे-मारे फिरते यूरोपिय देशों ने नये-नये बाजारों से अलंकृत कर दिया। इसी प्रवाह में ऐसे आविष्कार भी आविर्भूत हुए, जिन्होंने ज्ञान के अपरिचित क्षेत्र को आप्लावित करने का बीड़ा उठाया। उसने मनुष्य के बौद्धिक चिन्तर और ऊहापोही जिज्ञासाओं को वैचारिक क्रांन्ति के पथ पर भी ला खड़ा किया। औद्योगिक विकास के सन्दर्भ में मनुय के आर्थिक व्यवहार के सामाजिक स्वरूप और मानवता पर उसके प्रत्यक्ष प्रभाव की गहरी गवेषणा हुई, जिसने राजनीति को भी शृंखलाबद्ध कर लिया। स्वाभाविक था कि यूरोपियन उपनिवेश, यूरोप की औद्योगिक उन्नति के कारण बने, क्योंकि वह यूरोप के राजनीतिक रूप से ही आधीन नहीं हुए, उसकी वैज्ञानिकता के भी आधीन हो गये और व्यापारिक

राजनीति से पूरा विश्व घटाटोप हो गया। उद्योग तथा व्यापारिक उन्नति का जो प्रभाव यूरोप के सामाजिक और सांस्कृतिक चिन्तन तथा व्यवहार पर पड़ा, उसे प्रभाव से भी विश्व का कोई देश नहीं बच सका। यदि गहराई से देखा जाय तो इस प्रभाव का मूल कारण यूरोपीयन व्यापारिक चेतना का विज्ञापन ही था, जो साहित्य का मदद लेकर प्रकट हुआ था। यूरोपीय साहित्य एक तरह से दुनिया को प्रभावित करने वाली विज्ञापन प्रक्रिया थी अर्थात् औद्योगिक तथा व्यापारिक विज्ञापन का अब तक के औद्योगिक तथा व्यापारिक क्षेत्र में ज्ञात यह सबसे प्रारम्भिक रूप था, परन्तु सबसे गम्भीर रूप भी था, इतना गम्भीर कि उसका प्रभाव पूरी तरह स्थायी हुआ सा मालूम होता है।

वर्तमान समय में पैसा का महत्त्व सबसे अधिक है। अर्थ प्रधान युग में वाणिज्य या व्यापार प्रमुख हैं। व्यापार एवं व्यवसाय के अनेक या असंख्य साधन हैं, जैसे पहले कभी नहीं थे। व्यवसाय के लिए विश्व में अनेक कारखाने, व्यापारी समुदाय या कम्पनियाँ, यातायात, औषधि या स्वास्थ्य सेवाएँ, सभी कुछ इसके अन्तर्गत आता है। यहाँ तक कि शिक्षा एवं धर्म भी व्यवसाय बन गये हैं। शिक्षा की लाखों संस्थाएँ आज व्यावसायिक बन गई हैं। अब शिक्षा प्राप्त करना उतना सरल नहीं रहा, और न शिक्षादान का दृष्टिकोण ही इतना मानवीय रहा जितना व्यावसायिक युग से पूर्व था। शिक्षा, तकनीकी, शिक्षा, प्रौद्योगिकी शिक्षा, इंजीनियरिंग शिक्षा, कम्प्यूटर शिक्षा, होटर व्यवस्था शिक्षा इत्यादि अनेक पाठ्यक्रमों का चरित्र पूर्णरूपेण व्यावसायिक है। यह उस व्यावसायिक साहित्य में वैचारिक चिन्तर का परिणाम है, जिसने मनुष्य जीवन को पूरी तरह अर्थलाभ से संयुक्त कर दिया हैं निश्चित रूप से यह ऐसी एक गंभीर स्थिति है। हालाँकि ज्ञान की अपरिचित सीमा रेखाओं तक पहुँचने की यह भी मनुष्य की चेष्टा कही जा सकती है, परन्तु इसने जीवन दर्शन को एकांगी बनाने का जो काम किया है, वह इस प्रकार के साहित्य प्रसान के कारण ही हुआ है, जिसने बौद्धिक सोच को ग्रस्त कर लिया हैं ऐसा प्रचार का श्रय इस विज्ञान विधि को है, जो क्रियात्मक रूप में औद्योगिकता का विकास बनकर प्रकट हुई थी। औद्योगिक विकास के कारण जो सामाजिक प्रभाव हुए, उन्होंने भौतिक जीवन और मानवीय संस्थाओं के परम्परात्मक महत्त्व के सन्दर्भ में कुछ भी विचार नहीं किया। विद्या संस्थानों में इसको लगातार पढ़ाया गया।

आधुनिक युग में यह मान लिया गया है कि भारत एवं विदेशों में स्थित हिन्दी भाषा-भाषियों के लिए वाणिज्यिक शिक्षा अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है एवं

व्यवसाय के क्षेत्र में भी हिन्दी बहुत महत्त्वपूर्ण है। उसके लिए हिसाब या एकाउण्ट, पत्र व्यवहार, लेन-देन सभी कुछ हिन्दी में होता है और यह कार्य अनुवाद के माध्यम से ही होता है। वैसे जब से औद्योगिक संस्कृति आरम्भ हुई है, ऐसा तभी से होता रहा है। पहले विचारधारित साहित्य का अध्ययन अंग्रेजी में ही होता था। यह अनुवाद की वजह से वह हिन्दी में भी विद्यमान है। अनुवाद कार्य के उक्त अध्याय के साथ-साथ भारत में तथा विदेशों में जमे हुए औद्योगिक प्रतिष्ठान अपने उत्पादों के लिए विज्ञापन के जो ाी तरीके अपनाते हैं, उनमें भी अनुवाद प्रक्रिया बड़ी महत्त्वपूर्ण है। जनता के सामने निरन्तर चलने वाली विज्ञापन व्यवस्था अनुवाद कार्य का व्यापक महत्त्व होता है, भारतीय व्यापारिक संस्कृति भी अपने औद्योगिक उत्पादानें के विज्ञापन कार्य में इसी नीति को अपना चुकी है, जो बहुत कारगार और प्रभावी है। भारत की सभी भाषाओं में होने वाले व्यापारिक कार्यों के संचालन में अनुवाद कार्य की भूमिका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हो चुकी है। ऐसी स्थिति में हिन्दी का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। ये संस्थाएँ अपने कार्य हेतु अनुदित हिन्दी का प्रयोग करते हैं एवं पत्र व्यवहार करते हैं। तात्पर्य यह है कि वाणिज्यिक अनुवाद का भी कोई सीमा नहीं है। देश-विदेश की बहुसंख्यक वाणिज्यिक संस्थाओं में अनुदित हिन्दी का प्रयोग होता है। वाणित्ज्यिक विषय के लिए अनेक पुस्तकों का प्रकाशन भी हुआ है। विदेशी वाणिज्यिक पुस्तकों का प्रकाशन भी हिन्दी में अनुवाद के कारण ही संभव हुआ है।

आधुनिक काल में व्यवसाय और व्यापार की प्रधानता

वर्तमान युग को विज्ञान का युग माना जाता है। जबकि सच्चाई यह है कि आज का युग अर्थ का युग है। व्यापारी, नेता, अधिकारी, धर्मगुरु एवं अपराधी—सभी अर्थसंचय के पीछे पड़े हैं। अर्थ का दूसरा नाम धन है। इसे लक्ष्मी भी कहते हैं, क्योंकि लक्ष्मी को धन की देवी कहा जाता है।

वर्तमान समय में सभी जातियाँ व्यापार में लग गयी हैं। अनेक देश भी आज व्यापार करने लगे हैं। श्रम का पुजारी और मजदूरों का पक्षधन देश चीन भी आज विदेशों से व्यापार करके धन कमा रहा है। अमेरिका तो सदा से पूँजीवादी देश रहा है। उसने अपना व्यापार विश्व में फैलाने हेतु धन तथा बल दोनों का इस्तेमाल किया जाता है। भारत में रोजगार के पीछे सम्पन्न सवर्ण जातियाँ पड़ गयी हैं, क्योंकि उन्हें नौकरी नहीं मिलती।

11

वैज्ञानिक तथा तकनीकी क्षेत्रों में अनुवाद

समाज में विज्ञान और तकनीकी वाद-विवाद का विषय बन गए हैं। एक तरफ तो यह आधुनिक जीवन के लिए आवश्यक है, जहाँ अन्य देश तकनीकी और विज्ञान के क्षेत्र में निरंतर विकास कर रहे हैं, वहीं यह अन्य देशों के लिए भी आवश्यक हो जाता है कि, वे भी इसी तरह से भविष्य में सुरक्षा के लिए ताकतवर और अच्छी तरह से विकसित होने के लिए निरंतर वैज्ञानिक विकास करते रहे। ये विज्ञान और प्रौद्योगिकी ही है, जिन्होंने अन्य कमजोर देशों को भी विकसित और ताकतवर बनने में मदद की है।

मानवता के भले के लिए और जीवन के सुधार के लिए हमें हमेशा विज्ञान और प्रौद्योगिकी की मदद लेनी होगी। यदि हम तकनीकों की मदद नहीं लेतेय जैसे- कम्प्यूटर, इंटरनेट, बिजली, आदि तो हम भविष्य में कभी भी आर्थिक रुप से मजबूत नहीं होंगे और हमेशा पिछड़े हुए ही रहेंगे यहाँ तक कि इसके बिना हम आज के इस प्रतियोगी और तकनीकी संसार में जीवित भी नहीं रह सकते हैं।

वैज्ञानिक क्षेत्र में अनुवाद

विश्व के ज्ञात ऐतिहासिक युग में कुछ ऐसे अवशेष अभी भी इस धरती पर नजर आते हैं, जिनका काल निर्णय इतिहासकार अनुमान के आधार पर करते

हैं, परन्तु जो अनुमान वह लगाते हैं, वह भी इतना प्राचीन है कि मिस्र के पिरामिडों को देखकर काफी आश्चर्य की अनुभूति होती है इतने बड़े-बड़े विशाल शिलाखण्ड पिरामिडों की चोटी तक कैसे पहुँचाये गये होंगे। इसके अतिरिक्त उस समय की निर्माण कला क्या सचमुच उन्नत थी? सम्भवत: मिस्र में पिरामिड न पाये जाते, भले ही साहित्य में उनका उल्लेख भी मिलता तो भी आज का इतिहास ऐसे आलेख को शायद ही स्वीकार करता। सम्भवत: जब पिरामिडों का निर्माण किया गया होगा उस दौरान भी वैज्ञानिक युग ही रहा होगा, परन्तु उस समय का विज्ञान ऐसे युग से सूत्रपात का कारण नहीं बना था, जैसा 16वीं-17वीं शताब्दी का वैज्ञानिक युग, जिसका जन्म यूरोप में हुआ। इस वैज्ञानिक युग में मनुष्य ने उन्नति के उन ऊंचाईयों को छुआ जिनको मनुष्य द्वारा छूने का कोई प्रकरण इससे पहले का नहीं मिलता। इसी कारण विज्ञान आधुनिक सभ्यता तथा संस्कृति को नये क्षितिज तक ले पहुँचा है। 19वीं शताब्दी तक विज्ञान का विकास पूरे संसार में प्रसार हो गया। वैज्ञानिक क्रान्ति के इस युग ने वह साधन उपलब्ध कराये, जो विज्ञान के मर्म को अपने साथ लेकर विश्व के कोने-कोने में पहुँचे। उस दौरान शिक्षा तथा ज्ञान का बड़ी सहजता से प्रसार हुआ था। विज्ञान और तकनीकी ज्ञान केवल एक भाषा से दूसरी, दूसरी से तीसरी और तीसरी से चौथी भाषा की गोद में कूदता हुआ संसार की प्राय: सभी उन्नत भाषाओं की गोद में खेलने लगा। विज्ञान को एक भाषा से दूसरी तीसरी, चौथी आदि भाषाओं की गोदों को पवित्र करते हुए अग्रसर होने की शक्ति अनुवाद ने प्रदान की थी। विज्ञान की पुस्तकों तथा विज्ञान साहित्य का अनुवाद जिस प्रकार संसार की भाषाओं में किया गया, उसने अनुवाद की भूमिका को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया, और अनुवाद को एक नया स्वरूप प्रदान किया।

उद्योग तथा व्यापार ही नहीं वैज्ञानिक अनुसंधानों ने कृषि क्षेत्र से लेकर अन्तरिक्ष तक अपने कदम रख चुका है। निर्माण और विनाश, संचार और बौद्धिक सूक्ष्मता को विज्ञान ने आश्चर्यजनक उपलब्धियाँ कराई। राजनीतिक तथा सामाजिक संस्कृति में क्रांतिकारी बदलाव देखने को मिलता है, तो संसार में विकसित तथा विकासशील देशों के नवीन संबंधों का जन्म हुआ। वैज्ञानिक तथा तकनीकी शिक्षा पूर्ण का दायित्व ग्रहण किया। प्राप्त करना विकासशील देशों की अनिवार्य आवश्यकता हो गई तो अनुवाद ने ही इसे पूरा करने का दायित्व ग्रहण किया। नित्य नये अनुसंधान और उपलब्धियाँ विकसित देशों के लिए साधारण बात बन गयीं थी, जबकि विकासशील देशों को अभी उनके स्तर तक पहुँचने

में देरी थी, परन्तु विकासशील देशों को उस स्तर तक पहुँचने की लगन और प्रयत्नों का रुख सीधा था। इसलिए वे विकसित देशों से शिक्षा और ज्ञान प्राप्त करने में आज भी लगे हए हैं। सभी विकासशील देश यह समझते हैं कि विभिन्न देशों के वैज्ञानिक अनुसंधानों से जीवन्त और तात्कालिक परिचय रखने के लिए विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी का अनुवाद काफी महत्त्वपूर्ण माना जाता है। जो देश जितना प्रगतिशील है वह उतना ही लगन और तत्परता से इस काम में लगा हुआ है।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी साहित्य का अनुवाद कार्य बहुत सावधानी तथा सूक्ष्म ध्यान का विषय माना जाता है। स्रोत-भाषा में व्यक्त वैज्ञानिक और तकनीकी सूचनाओं का लक्ष्य-भाषा में इस प्रकार अन्तरण करना महत्त्वपूर्ण होता है कि मूल स्रोत-भाषा में अनुवाद करते हुए नष्ट न हो जायें या वह दिग्भ्रमित करने वाली बनकर न रह जाये। अत: वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवाद करना भी एक प्रकार से वैज्ञानिक कार्य माना जाता है।

साहित्यिक एवं वैज्ञानिक तकनीकी अनुवाद एक दूसरे से भिन्न इस प्रकार हैं कि साहित्यिक अनुवाद में प्रमुखता उसकी शैली, अभिव्यंजना, भाव-भंगिमा के लिए है जबकि वैज्ञानिक अनुवाद में अभिव्यक्त विचार पर विशेष बल दिया जाता है। वैज्ञानिक अनुवाद में 'कैसे' की अपेक्षा 'क्या' का अधिक महत्त्व है। यही विषय मुख्य है और शैली गौण। वैज्ञानिक पुस्तकों के पाठकों की रुचि केवल उसमें दी गयी सूचनाओं, संकल्पनाओं तथा तथ्यों तक ही सीमित रहती है। वैज्ञानिक तथा तकनीकी साहित्य का अनुवाद प्राय: वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषय के विद्वानों तथा छात्रों हेतु ही होता है। उनके लिए महत्त्वपूर्ण तो केवल उसमें अभिव्यक्त विचार ही है। शैली पर बल केवल कुछ लोकप्रिय वैज्ञानिक तकनीकी रचनाओं के अनुवाद में होता है, जो साहित्यिक कोटि में आने की वजह से वैज्ञानिक तकनीकी सामग्री से भिन्न प्रकृति की रचनाएँ होती हैं। इसके अंर्तगत भावना तथा कल्पना का समावेश होने की वजह से शैली की रंगीनी भी आ जाना स्वाभाविक है।

वैज्ञानिक तकनीकी अनुवाद में इस बात पर विशेष बल दिया जाता है। अनुवादक विषय का सम्यक जानकार हो। अत: वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों में प्रशिक्षित व्यक्ति ही अनुवाद कर पाते हैं। इस क्षेत्र में विशेषज्ञता आवश्यक है। अत: दुनिया में वैज्ञानिक तकनीकी अनुवादकों का जो विशिष्ट वर्ग विकसित हो गया है, उसका प्रमुख कारण यही विशेषज्ञता हैं। अनूदित सामग्री जितनी

विशिष्ट होगी, अनुवादक को भी उतना ही विशेषष होना पड़ेगा। इसलिए हर वैज्ञानिक तकनीकी विषय हेतु विशेष प्रशिक्षण प्राप्त व्यक्तियों की आवश्यकता है। भारत में दिल्ली का वैज्ञानिक अनुवादकों का संगठन (ISTA) तथा यूरोप के अनेक वैज्ञानिक तकनीकी अनुवादकों के संगठन ऐसे ही विशेषज्ञ अनुवादकों की सूची अपने पास रखते हैं। अभिव्यक्त विचारों की प्रामाणिकता इस तरह के अनुवादों का अनिवार्य तत्त्व है और प्रामाणिक अनुवाद तो केवल विषय के अधिकारी अनुवादक ही प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

विषय ज्ञान की के समान महत्त्वपूर्ण है वैज्ञानिक अनुवाद की भाषा। वैज्ञानिक भाषा की सबसे बड़ी विशेषता के समान तो उसकी वस्तुनिष्ठता एवं तथ्यपरकता है, यह तो स्वयंसिद्ध है। तकनीकी भाषा की प्रकृति को उसके तकनीकी शब्दों एवं मुहावरों से समझा जा सकता है। साहित्यिक भाषा में अर्थ की संदिग्धता सम्भव है जबकि वैज्ञानिक तकनीकी अनुवाद में अर्थ की स्पष्टता तथा सुबोधता में संदिग्धता अनुवाद के प्रयोजन को ही समाप्त कर देती है, इसलिए सरल, सुबोध भाषा का प्रयोग वैज्ञानिक अनुवाद में मूल शर्त होती है।

वैज्ञानिक-तकनीकी अनुवाद में पारिभाषिक शब्द किसी विशिष्ट शब्द किसी विशिष्ट क्षेत्र में किसी विशिष्ट अर्थ या संकल्पना को प्रस्तुत करने हेतु प्रयोग किया जाता है। इसलिए उनके अनुवाद की समस्याओं के कारक बन जाते हैं। वैज्ञानिक सूत्रों, संकेताक्षरों एवं अन्तर्राष्ट्रीय शब्दावली का प्रयोग वैज्ञानिक अनुवादकों के संरचना में होना महत्त्वपूर्ण माना जाता है। अन्य तरह के पारिभाषिक शब्दों के निर्माण एवं अनुकूलन वैज्ञानिक-तकनीकी अनुवाद की सबसे बड़ी समस्या है। भारत में शब्दावली निर्माण के प्रारम्भिक कार्य हो चुके हैं, परन्तु इस शब्दावली के प्रयोग एवं उपयोगिता की सस्याएँ समाप्त हो गई हों, ऐसा सम्भव नहीं हुआ। लोकप्रिय वैज्ञानिक साहित्य में पारिभाषिक शब्दावली का ज्यादा प्रयोग नहीं देखने को मिलता है, लेकिन विशिष्ट वैज्ञानिक-तकनिकी विषयों के *अनुवाद* में विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग ही सम्भव है, उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। यह कहना गलत नहीं होगा कि विज्ञान की भाषा की एक अलग भाषा है, अर्थात एक अन्तर्राष्ट्रीय भाषा। इसको अपनाना ही वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवाद हेतु महत्त्वपूर्ण माना जाता है। वैसे भी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होने वाला सामाजिक संक्रमण इस मार्ग को स्वाभाविक रूप से खोलता है। अतः विज्ञान के क्षेत्र में भारत को शब्द-ग्रहण एवं अनुकूलन की दिशा में उदार नीति अपनाने पर बल दिया जाएगा।

चूँकि वैज्ञानिक अनुवाद कार्य का आधार तत्त्व स्पष्टता और बोधगम्यता है, अत: अनुवाद को हर प्रकार से अभिव्यक्त विचारों को सुबोधता देने का ध्यान रखते हुए स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करना जरूरी होगा। जिसका अतिक्रमण नहीं किया जा सकता। इसके लिए पहली आवश्यक बात यह है कि संकल्पनाओं और विचारों को हू-ब-हू लक्ष्य पाठ में उतारने की आवश्यकता होते हुए भी शब्दानुवाद की प्रवृत्ति से बचाव किया जा सके। यहाँ तक कि आवश्यक स्थलों पर व्याख्या, पाद टिप्पणी आदि देकर तथ्यों को समझाना भी अनुवादक के लिए आवश्यक हो जाता है, क्योंकि नियत अर्थ पर बल देने के बावजूद भी यदा-कदा मूल विचार शब्दानुकरण से स्पष्ट नहीं हो पाते यहाँ पर अनुवादक व्याख्याता का रूप ग्रहण कर लेता है। मूल की वाक्य रचना का अंधानुकरण न कर स्रोत-भाषा की सहज अभिव्यक्तियों एवं वाक्य-विन्यास क अनुसार विचारों को गूँथने का कौशल भी वैज्ञानिक अनुवादक की विशेषता माना जाता है। यूनेस्कों के एक प्रकाशन में इस तथ्य पर प्रकाश डाला गया है कि मूल की जो बातें मूल भाषा-भाषी प्रदेश के विद्वानों के लिए स्पष्ट हों और लक्ष्य भाषा-भाषियों के लिए स्पष्ट नहीं हो, उनको स्पष्ट बनाना अनुवादक का कर्त्तव्य है।

अंग्रेजी एवं अन्य यूरोपीय भाषाओं की जटिल वाक्य रचना भी अनुवाद में दुरूहता का एक कारण माना जाता है। जहाँ तक भारतीय भाषाओं में इन विदेशी भाषाओं से अनुवाद की समस्या है, वाक्य-रचना की दृष्टि से सरलता एवं स्पष्टता का मानदण्ड ही अनुवादक को अपनाना चाहिए। अत: अनुवादक का विषय-ज्ञान के साथ ही लक्ष्य-भाषा की सहज गति से ज्ञान होना बहुत जरूरी माना जाता है। दूसरे शब्दों में इसी बात का स्पष्टीकरण इस रूप में किया जा सकता है। साहित्यिक अनुवाद के सौन्दर्यानुभूतिपरक महत्त्व की तुलना वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों के अनुवाद के व्यावहारिक एवं तथ्यात्मक लक्ष्यों से की जा सकती है। वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुवाद में किसी भी विषयगत सूचना को एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपित करना यथार्थता तथा परिशुद्धता से जुड़ाव होता है। यदि अनुवादक मूल कथ्यों से हट जाता है तो उसकी यह गलती कदापित क्षम्य नहीं हो सकती। दूसरी ओर साहित्य के अनुवादक को स्वच्छंदता प्राप्त होती है कि उपन्यास, कहानी, नाटक, कविता आदि का अनुवाद करते समय वह मौलिक कल्पना का सहारा ले ले।

इस बात से नकारा नहीं जा सकता है कि तकनीकी विषय के अनुवादक को भाषा के साथ वैसा श्रम नहीं करना पड़ता जैसा कि साहित्य के अनुवादक

को करना पड़ता है। अत: वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों का अनुवाद साहित्य के अनुवाद की तुलना में अपेक्षाकृत सरल प्रक्रिया कही जा सकती है, जिसके लिए अनुवादक को विषय की शब्दावली का ज्ञान होना जरूरी हो जाता है, किन्तु यह बात पूर्ण सत्य नहीं है। इस बात को अपने आप में अन्तिम समझ लेना भारी भूल होगी। किसी वैज्ञानिक अनुसंधान की जटिल विकास-प्रक्रिया का विश्लेषण प्रस्तुत करने वाले किसी लेख अथवा उद्योग संबंधी नवीन तकनीकी कार्य के शुरूआत की वजह से संबंधित किसी लेख (जिसमें उस तकनीक विशेष की प्रक्रिया को प्रस्तुत करने के लिए व्यापक तर्क प्रस्तुत किए गए हों) का अनुवाद करने के लिए भाषा पर वैसा ही सहज और समृद्ध अधिकार अपेक्षित होगा जैसा कि किसी अच्छी साहित्यिक कृति के अनुवाद के लिए अपेक्षित है। इसके विपरीत ऐसी अनेक साहित्यिक कृतियाँ हैं। जिनमें विधि, युद्ध, खेलकूद, जैविकी आदि अनेक विषयों का सम्मिश्रण होता है। ऐसी स्थिति में इनका अनुवाद भी उन विशेष विषयों की जानकारी के बिना सम्भव नहीं होता।

ऐसे अनुवाद–चाहे वह साहित्यिक हो अथवा वैज्ञानिक या तकनीकी–विशेष प्रकार के मानदण्डों द्वारा नियन्त्रित किया जाता है। वे मानदण्ड मूल पाठ के स्वरूप एवं प्रकार पर आधारित होते हैं और कोई भी मानदण्ड इतने जड़ एवं स्थिर नहीं होते कि उनमें कोई परिवर्तन ही सम्भव न हो। परिस्थिति के अनुकूल इसमें करना संभव होता है।

यूनानी गणितज्ञा यूक्लिड ने अपनी `Elements of Geometry` नामक पुस्तक में अनेक पारिभाषिक शब्दों को ठोस मूर्त रूप में इस्तेमाल किया। स्वयं **अरस्तू** विज्ञान के अन्य क्षेत्रों की शब्दावली गढ़ते रहे थे। आज के वैज्ञानिकों ने विकास-परम्परा में यह बात गाँठ बाँध ली है कि वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुवाद की भाषा सहज, सरल तथा महत्त्वपूर्ण मानी जानी चाहिए। इस भाषा में लक्षणा तथा व्यंजना लाने का प्रयास आद का नहीं, निन्दा का अधिकारी बनता है। पुरातन काल में वैज्ञानिक साहित्य भारत, अरब, यूरोप आदि देशों के पद्य में लिखा जाता था। चिकित्सा आदि पर मध्यकाल में लिखे गए छन्दोबद्ध ग्रन्थ उपलब्ध हैं। छन्द को याद रखने में सुविधा होती थी, किन्तु इसका अर्थ यह नहीं था कि वे वैज्ञानिक साहित्यिक छन्द लिखते थे या उनके छन्दों का प्रसाधन साहित्यिक दृष्टि से होता था। आधुनिक वैज्ञानिकों ने इस व्यर्थ की छन्दबद्धता पर प्रहार किए तथा रॉयल सोसाइटी की यह बात स्वीकार कर ली गई कि वैज्ञानिक अनुवाद की भाषा स्पष्ट एवं तार्किंत गद्य में होनी चाहिए।

वस्तुत: वैज्ञानिक विषयों के अनुवादक को साहित्यकार के समान शब्द-चयन के चक्कर में पड़ने की जरूरत नहीं है। उसे दृढ़ता के साथ केवल उन्हीं शब्दों का यचन करना चाहिए जिनका अर्थ भ्रमित करने वाला न होकर निश्चित हो। पूरे अनुवाद के एक निश्चित शब्दावली को तार्किक वैज्ञानिकता के लिए प्रयोग करना अभीष्ट होता है। प्रतीक चिह्न दृढ़ रूप में रखना अत्यन्त आवश्यक है, जिससे कि स्रोत-भाषा में निहित अर्थ लक्ष्य-भाषा में प्रस्तुत होने पर समझने में ज्यादा वक्त न लगे तथा यदि कोई नया प्रतीक चिह्न है तो विशेष टिप्पणी द्वारा उसे स्पष्ट करके अनुवाद में सुबोधता तत्त्व को निहित करना चाहिये। इस प्रकार स्रोत-भाषा का सम्पूर्ण कथ्य लक्ष्य-भाषा में सम्पूर्णता से लाया जाता है। जैसे-जैसे विश्व में वैज्ञानिक जानकारी में बढ़ोतरी होती जा रही है वैसे-वैसे अनुवाद कार्य भी प्रगति कर रहा है। लैटिन, अंग्रेजी, जर्मन, रूसी, जापानी आदि भाषाओं में ज्ञान के साहित्य (Literature of knowledge) का बहुत अनुवाद हुआ है और हो रहा है। लम्बे अरसे तक गुलामी करने की वजह से भारतवर्ष में वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रगति बड़ी देर से आरम्भ हो सकी जिसका सीधा परिणाम यह हुआ है कि भारतीय भाषाओं मं वैज्ञानिक अनुवाद का कार्य अपेक्षाकृत बहुत कम हुआ, किन्तु आज स्थिति में काफी परिवर्तन हुआ है तथा यह कार्य बहुत अधिक गति पकड़ गया है।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुवाद सूचना प्रधान होने की वजह से इसमें शैली की कलात्मकता का ध्यान नहीं दिया जा रहा है। यही कारण है कि अभिव्यक्ति-प्रधन साहित्य की तुलना में वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुवाद समस्याएँ उत्पन्न नहीं करता।

विश्व की प्राय: समृद्ध भाषाओं में पारिभाषिक शब्दों का अभाव नहीं है, क्योंकि इन भाषाओं में वैज्ञानिक साहित्य की समृद्ध परम्परा देखने को मिलती है। इसलिए परम्परागत विज्ञान और नवीन वैज्ञानिक अनुसन्धानों के सन्दर्भ में ये भाषाएँ पारिभाषिक शब्दों की दृष्टि से समर्थ एवं सम्पन्न रहीं और इन भाषाओं का अनुवादक विषय की भीतरी जानकारी ग्रहण करने के पश्चात् अपने अनुवाद के क्षेत्र का विकास करता रहा।

वस्तुत: वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुवाद आधुनिक जीवन की प्रगति परक चेतना मानी जाती है, वह विश्व सन्दर्भ में जीवन-मूल्यों का निर्धारण करता है। भाषाओं के माध्यम से मनुष्यों को एक-दूसरे से जोड़ता है। चूँकि विज्ञान और तकनीक वर्तमान जीवन की आधारशिला के रूप में स्थापना की जा चुकी है,

जिसके परिणाम स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय और भाषाई स्तर पर संसार के मानव-समाज को अलग-थलग रह पाना सम्भव नहीं रहा है। स्वाभाविक है कि विज्ञान और तकनीकी अनुवाद कार्य शिक्षा और प्रशिक्षण का अंग बनकर बिना किसी भेदभाव के दूसरे देशीय एवं भाषाई मनुष्यों को निकट लाने का एक सशक्त सहारा बन गया है।

प्रौद्योगिकी क्षेत्रों में अनुवाद

प्रौद्योगिकी, व्यावहारिक और औद्योगिक कलाओं और प्रयुक्त विज्ञानों से संबंधित अध्ययन या विज्ञान का समूह है। कई लोग तकनीकी और अभियान्त्रिकी शब्द एक दूसरे के लिए प्रयुक्त करते हैं। वर्तमान युग औद्योगिक में परिवर्तित हो चुका है। सामाजिक और राजनीतिक दोनों ही क्षेत्र वर्तमान काल के उद्योग जगत से पूरी तरह प्रभावित हैं, क्योंकि औद्योगिक विकास और उन्नति ने उनके आर्थिक चिन्तन को परिवर्तित कर दिया है। पहले इस युग को कृषि युग कहा जाता था। समाज की जीविका का मुख्य आधार कृषि थी और राज्यों के राजस्व का मुख्य स्रोत भी, परन्तु वैज्ञानिक क्रान्ति ने कृषि को भी एक उद्योग का रूप दे देने का बीड़ा उठा लिया है। जिसके परिणाम स्वरूप वर्तमान संसार में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में जिस पैमाने पर अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क एवं सहयोग हो रहा है। वह इस क्षेत्र में अनुवाद को विशेष प्रासंगिक एवं अनिवार्य बनाता जा रहा है। औद्योगिक क्षेत्र में एक तरफ सहयोग भी है, लेकिन प्रतिद्वन्द्विता और प्रतिस्पर्द्धा उसकी प्रकृति में है, इस कारण औद्योगिक संस्थाओं की यह उत्कट चेष्टा होती है कि वह इस सन्दर्भ में नवीनतम वैज्ञानिक प्रगति के साथ कदम से कदम मिलाकर चलें। स्पर्द्धावश वह सबसे पहले वैज्ञानिक अनुसंधानों और उनके परिणामों से अवगत रहना अपना कर्त्तव्य समझते हैं, अतः प्रतिद्वन्द्विता भी अनुवाद की प्रेरणा देती है। उस दौरान कुछ देशों का इस क्षेत्र में विकास हो चुका है। वे अपने विकास की गति और तेज बना लेना चाहते हैं। कम विकसित देश विकास करना चाहते हैं। कोई भी देश आज विज्ञान और प्रौद्योगिकी के मोह से मुक्त नहीं है। आधुनिक संस्कृति किसी भी देश को उससे मुक्त रहने की छूट दे भी नहीं सकती, क्योंकि औद्योगिक विकास ने सभी देशों को आर्थिक समृद्धि के लिए उत्कष्ट रूप से उद्वेलित कर रखा है।

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त इतिहास इस बात की जानकारी प्रदान करता है कि पिछले सौ वर्षों की अवधि में विज्ञान ने सभ्यता पर जितना प्रभाव

एवं परिवर्तन प्रस्तुत किया है उतना रोम के हजार वर्षों में तो क्या, पुराने शिला युग के लाखों वर्षों में भी नहीं देखने को मिलते हैं। उद्योग जगत को बीसवीं शताब्दी में इलैक्ट्रोनिकी ने जिस तरह कायापलट किया है उसका वैसा रूप पहले कभी नहीं था। प्रथम सार्वजनिक कम्प्यूटर ENIAC (इलेक्ट्रॉनिक न्यूमेरिकल इंटरप्रेटर एण्ड कैलकुलेटर) अमेरिका के पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय में सन् 1946 में पेश किया गया था। इसका तात्पर्य यह निकलता है कि कम्प्यूटर ने 56 वर्ष भी मुश्किल से ही पूरे किये हैं, लेकिन इन 56 वर्षों में ही हमारे पास कम्प्यूटर की इतनी जानकारी उपलब्ध है, जो आश्चर्य में डाल देता है।

ब्रिटिश साम्राज्य में सूर्य कभी नहीं डूबता था, अपनी अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में उसने जो प्रतिष्ठा और साम्राज्य प्राप्त किया था, वह अपनी औद्योगिक उन्नति के कारण ही किया था। प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्ध अमेरिका के लिए वरदान साबित हुए। उसी आर्थिक सम्पन्नता अन्तरिक्ष तक उसे ले पहुँची और आज तो वह सार्वभौम रूप से निरंकुश अन्तर्राष्ट्रीयता प्राप्त करने की तरफ गतिशील हो रहा है। अंग्रेजी भाषा का आधुनिक ज्ञान-विज्ञान पर पूर्ण अधिकार है।

राजनीतिक रूप से प्रौद्योगिकी राजनीतिक सुदृढ़ता का भी परिचायक बन चुकी है। विकसित तथा विकासशील देशों का अन्तर्राष्ट्रीय दबदबा भी इसी के करना संभव हो सका है। जिस गति से प्रौद्योगिकी का विकास यूरोप और अमेरिका में हुआ, वह इस प्रकार से अबाध थी। यों तो प्राचीनकाल से ही मनुष्य और विज्ञान में सामंजस्य रहा है, लेकिन तब यह सामंजस्य राष्ट्रों और प्रौद्योगिकी के बीच नहीं था। राजकीय स्तर पर कभी किसी देश की नजर इस पर नहीं गयी होगी परन्तु यूरोप जब अपने वाणिज्यिक विकास के लिए समुद्रों को पार करने लगा और उसी के साथ प्रौद्योगिकी चेतना का यूरोप में आविर्भाव हुआ, लेकिन वह अपने चरम-शिखर पर आज कम्प्यूटर युग में आने पर ही पहुँचा।

चीन ने कागज-निर्माण, मुद्रण और बारूद-निर्माण की तकनीक संसार को प्रदान की थी। आतिशबाजी उसी देश की देन मानी जाती है। अरबों ने वैज्ञानिक आविष्कारों में ज्यादा क्षमता देखने को मिलती है। जब कोई अरब राजा दूसरे देश पर वियज पाता तब संधि की पहली शर्त यह होती है कि हारे हुए देश के सारे वैज्ञानिक ग्रन्थों को विजेता की सेवा में प्रस्तुत करना चाहिए, परन्तु यह इस्लाम के जन्म से पहले की बात है। नौवीं शती में अरब के अबीर इबन हय्यां ने अल्केमी की स्थापना की थी। गणित, खगोल विज्ञान, आयुर्विज्ञान एवं भौतिकी में अरबों का योगदान महत्त्वपूर्ण था।

इताली, फ्रांस, जर्मनी, पोलैण्ड आदि देशों में विभिन्न युगों में महान कई बड़े आविष्कारों का जन्म हुआ। इन देशों के वैज्ञानिकों ने अपने ग्रन्थों में तकनीकी भाषा के लिए ग्रीक तथा लैटिन शब्द ही बुनियादी तौर पर स्वीकार किये थे। आधुनिक आयुर्विज्ञान धारा 'एलोपैथी' की शब्द-व्युत्पत्ति ग्रीक के एलोस(अन्य) एवं पायोस (पीड़ा) के संयोग से मानी गयी है। 'मेडिकल एटिमालाजी' नामक कोश की भूमिका में सोदाहरण इसका उल्लेख मिलता है कि अंग्रेजी के मेडिकल संकेतित शब्दों में अधिकांश ग्रीक से व्युत्पन्न हैं। लैटिन भाषा से भी कई शब्द मिलते हैं। अरबी से औषधि-विज्ञान के बहुत से शब्द लिए गये है। फ्रेंच से सीधे या परिवर्तित रूप में शब्द ग्रहण किये गये हैं। इताली, डच, फारसी और चीनी के भी शब्द इन शब्दों में प्राप्त होते हैं।

इस प्रकार हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अंग्रेजी की तकनीकी शब्दावली शुद्ध अंग्रजी शब्दावली नहीं है। अनेक भाषाओं के शब्द मूल रूप में या परिवर्तित रूप में उनमें शामिल हुए हैं।

लोकप्रिय अनुवाद एवं तकनीकी अनुवाद के मध्य में स्वतंत्र अनुवाद या रूपान्तरण कहलाने लायक प्रणाली का काफी महत्त्व है। कठिन वैज्ञानिक ग्रन्थों के अच्छे अनुवाद में अधिकतर लोगों को सफल होते देखकर विद्वानों ने यह प्रस्ताव किया है कि मूल-भाषा के महत्त्वपूर्ण गन्थों को पढ़ने के पश्चात् अपनी तरफ से उन ग्रन्थों को नये सिरे से लक्ष्य-भाषा में रचना चाहिए। पाठ्य-ग्रन्थ-निर्माण के क्षेत्र में इस प्रणाली की विशेष सिफारिश की जाती है। एक हद तक यह उचित लगता तो है, मगर-सार-लेखन-मूल-ग्रन्थ का प्रतिनिधि बन नहीं सकता। बड़े आचार्यों के वैज्ञानिक ग्रन्थों का अनुवाद भाषा की वैज्ञानिक सम्पदा की वृद्धि का कारक जाना जाता है, इसलिए भी अनुवाद कार्य में मूल-भाषा के इन शब्दों को लेना चाहिए, जो परम्परागत रूप में अन्तर्राष्ट्रीय प्रचलन में आ गये हैं।

अंग्रेजी के वैज्ञानिक तथा तकनीकी ग्रन्थों के यथातथ्य अनुवाद में सबसे बड़ी बाधा उस भाषा की विशिष्ट शैली है। इस विषय पर केरल के एक वैज्ञानिक लेखक का कहना है कि वैज्ञानिक अंग्रेजी भाषा तथ्य-प्रधान होती है। उसके शब्दों की सूक्ष्मर्थिता एवं किफायत अन्य दो विशेषताएँ हैं। किसी-किसी वैज्ञानिक ग्रंथ की वाक्य-संरचना बड़ी संकीर्ण होती है। वाक्यों का जटिल गठन विधि की भाषा में ज्यादातर देखने को मिलता है। विज्ञान में सामान्यतः बड़े वाक्यों को तोड़कर छोटे वाक्यों की शैली स्वीकार की जा सकती है, किन्तु वाक्यों का संबंध दृढ़ बना रहे और अर्थ-भ्रांति न हो। परन्तु अंग्रेजी से अनुवाद

करने में इस दोष के आने की सम्भावना रहने पर भी प्रायः वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवाद उसी से करना संभव हा सकता है परिणाम स्वरूप एक तो उसक क्षेत्र व्यापक है, दूसरे उसका साहित्य सर्वाधिक सम्पन्न है। इस नाते वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान के लिए अंग्रेजी से अनुवाद करना एक अनिवार्य आवश्यकता भी है। इसके अतिरिक्त एक बात वैश्विक ज्ञान को एकरूप करने की दिशा में भी सोचना चाहिए। यदि कोई शब्द हमें समान अर्थ में (विशेष रूप से पारिभाषिक शब्द) अन्य भाषाओं में प्राप्त होता है, जिसकी वजह से हम उस भाषा की अभिव्यक्ति के निकट आसानी से पहुँच सकते हैं, फिर भी ऐसे शब्दों के समानार्थक शब्द लक्ष्य -भाषा में भी हों तो भाषा समृद्धि की दृष्टि से उपयुक्त होंगें। भारत में गणि, खगोल विज्ञान, आयुर्विज्ञान, कूटनीति आदि विषय काफी प्रौढ़ दशा में रहे थे। अतः उनकी संकेतित शब्दावली और संकल्पनाएँ हमें संस्कृत ग्रन्थों में मिलती हैं। जहाँ वे सुलभ हैं, वहाँ उन्हें स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

आधुनिक भारतीय भाषाओं के लिए संस्कृत मूल भाषा मानी जाती है। इस वजह से संस्कृत सारी भारतीय भाषाओं को तकनीकी शब्दावली दे सकती है। विदेशी वैज्ञानिक व तकनीकी शब्दों के हिन्दी अनुवाद के प्रसंग पर संस्कृत से बचकर व्यावहारिक शब्दों का व्यवहार करने का सुझाव भी नया नहीं है, परन्तु यह सुझाव विशेषरूप से उन लोगों का रहा है, जो या तो उर्दू को सरल मानते हैं या फिर जिन्हें अंग्रेजी के शब्दों की अवधारणा समझने के अभ्यस्त हैं। बोलने में भी उन्हें इसलिए कठिनाई होती है, क्योंकि संस्कृत निष्ठ शब्द उनके वार्तालाप को अभ्यास में न होने के कारण अस्वाभाविक-सा बना देते हुए प्रतीत होते हैं। अतः इसका प्रयोग भी किया गया था। इस प्रयोग को हैदराबाद की कार्यशाला नाम से जाना जाता है। स्वतंत्रतापूर्वक आयोजित प्रस्तुत कार्यशाला में हजारों शब्द लोकप्रियता की दृष्टि से गढ़े गए। अफसोस है कि उम्मानिया विश्वविद्यालय में अंग्रेजी के माध्यम बनने के बाद वह पूरी उर्दू शब्दावली नष्ट-भ्रष्ट हो गई। सुबोधता या लोकप्रियता दोनों गुण उसमें देखने को मिलते थे। उसमें कई त्रुटिया भी थीं। उसके आयोजकों में इस्लामी साम्प्रदायिकता की भावना थी। वे हिन्दी व संस्कृत से जानबूझकर बचते थे। वह प्रवृत्ति भारतीय भाषाओं के सामान्य धर्म के अनुकूल नहीं रही। इन गढ़े हुए शब्दों में वैज्ञानिक शब्दों हेतु अनिवार्य नियतार्थता तथा परस्पर अपवर्जन के तत्त्व नहीं रहते थे। फिर भी अर्द्धतकनीकी शब्दों एवं तकनीकी शब्दों के रूप में उनका प्रयोग अब हो सकता है।

तीसरे विकल्प के अंतर्गत विभिन्न भारतीय भाषाओं में प्राप्त तकनीकी शब्दों का संकलन व्याख्या सहित किया जाए। उसके बाद उनमें तीन अथवा अधिक भारतीय भाषा के (इनमें भारतीय आर्य एवं द्रविड़ दोनों की प्रतिनिधि भाषाएँ हों) प्रयुक्त शब्दों के अनुदित शब्द के रूप में हिन्दी में स्वीकार करें। इस सुझाव पर को भले ही सरलतापूर्वक स्वीकार नहीं किया जाए, परंतु वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने जो शब्दावली अभी गढ़ी है उसे छोड़कर नये शब्द स्वीकार करना गलत है। मगर विकासशील भाषा में शब्दों पर पनश्चिन्तन और बेहतर शब्दों का गठन आवश्यक प्रक्रिया है। इसके अलावा नये शब्द गढ़ लेने पर अर्थ की विभिन्न छवियों के निर्णय के लिए अधिक सुविधा रहेगी। अभी आयोग के शब्दों के विषय में संस्कृत में बोझिल रहने की जो शिकायत है वह भी एक हद तक दूर होगी। अन्य भारतीय भाषाओं हेतु उन शब्दों को सहजता पूर्वक प्रयोग देखने को मिलता है।

भारतीय भाषा के अनुवाद में अन्तर्राष्ट्रीय शब्दों, प्रतीकों के प्रयोग का महत्त्व पर बल दिया गया है। हमारी शिक्षा प्रणाली में दो प्रकार के माध्यम होते हैं। अर्थात् प्रारम्भिक एवं माध्यमिक विद्यालयों में भारतीय भाषा के माध्यम से विषय सिखाए जाते हैं। कॉलिज पहुँचने पर वही विषय अंग्रेजी के माध्यम से सिखाए जाते है। इसके प्रत्युत्तर में सुझाव हो सकता है कि कॉलेज व स्कूल दोनों जगह भारतीय भाषा में सीखे। तब भी विज्ञान व प्रौद्योगिकी के उच्च अध्ययन की जरूरत पड़ेगी। अन्तर्राष्ट्रीय तकनीकी शब्दों का भारतीयकरण पूरी तरह वांछनीय नहीं है। देखा गया है कि संसार की प्रमुख भाषाएँ अब नये-नये आविष्कार व सिद्धान्त निधारण के बाद उनमें उद्भावित एवं गठित नये तकनीकी शब्दों को भी स्वीकार कर लेती है। यदि वे आविष्कार आदि अन्य भाषा-भाषी प्रदेश के हों तो अन्य भाषा में प्रयुक्त नवीन तकनीकी शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है परंतु अनुकूलन के क्रम में उन शब्दों की वर्तनी एवं उच्चारण अपनी भाषा के अनुकूल बना लेती है। इससे यह सुविधा प्राप्त होती है कि कोई भी वैज्ञानिक तथ्य या विद्धान्त बड़ी आसानी से चर्चित हो सकता है। यही नहीं, अन्य भाषा वाले जब इस भाषा के वैज्ञानिक ग्रन्थों का अध्ययन करेंगे तभी उनकी समझ में भी आएँगे। **एलसेवियर कम्पनी** के बहुभाषी विज्ञान-कोशों की माला इस क्षेत्र की बड़ी उपलब्धि है। भारत में केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय ने कई वर्षों के प्रयत्न से भारतीय भाषा की उत्पत्ति हुई है। वह प्रायः सामान्य शब्दों का है, परन्तु अत्यन्त उपादेय है।

भारतीय भाषाा में वैज्ञानिक एवं तकनीकी साहित्य के अनुवाद के विषय में संकोच व टीका-टिप्पणी करने वाले शायद इस बात पर बल नहीं दिया जाता है।। संसार के विकसत व विकासशील देश अन्य देशों में होने वाली हर अच्छी वैज्ञानिक व तकनीकी रचना का अनुवाद अपनी भाषा में कराने पर बल दिया जाता है। शोध-पत्रों का भी जरूर अनुवाद कराया जाता है। इस कार्य के लिए अनुवादक-वैज्ञानिकों का पूरा दल लगा रहता है। हमारा भारत स्वतन्ा राष्ट्र है। हमारी हिन्दी भाषा स्वतंत्र राष्ट्र की प्रमुख भाषा मानी जाती है। इसमें संसार की नयी वैज्ञानिक उपलब्धियों का विवरण बराबर दिया जाना चाहिए। अनुवाद प्रणाली पर विचार करते हुए हमें दल द्वारा अनुवाद अथवा टीम-अनुवाद की उपयोगिता समझनी चाहिए।

आजकल वैज्ञानिक क्षेत्र में अनुसंधान तक टीम द्वारा ही किया जाता है। अनुवादकों का एक छोटा दल या छोटी समिति अनुवाद करने में सक्षम है। **डॉत्र लेकेशचन्द्र** ने 'अनुवाद' पत्रिका में 'विज्ञानोदय और अनुवाद' शीर्षक के लेख में चीन की प्राचीन अनुवाद-प्रणाली पर ध्यान केन्द्रित किया है। दसवीं शताब्दी में चीन के बौद्ध विद्वानों ने अनुवाद की जिस प्रक्रिया को अपनाया था उसमें नौ विशेषज्ञ होते थे और प्रत्येक प्रसंग उसमें प्रत्येक के द्वारा निरीक्षण-परीक्षण के बाद ही आगे बढ़ता था। इन नौ विशेषज्ञों का क्रम इस प्रकार था–

(1) शुत्जु –संस्कृत का विद्वान होतो था। वह भी पाठ को ध्यानपूर्वक सुनता था और संस्कृत का चीनी भाषा में रूपांतरण करता था।

(2) पि-शीइ –लिप्यन्तरित शब्दों का अनुवाद चीनी भाषा में किया जाता था।

(3) चो-वन्-(पाठ रचयिता)–चीनी शब्दों का वाक्यों में व्यवस्थित करता था एवं सही वाक्यों की रचना करते थे।

(4) त्सान-ई–पाठों की तुलना और अनुवाद की शुद्धता सुनिश्चित करने पर बल दिया जाता था।

(5) खान-तिठ (संवीक्षक)–फालतू अभिव्यक्तियों को निकाल देता एवं शैली को अर्थगर्भित बनाता था।

(6) जुन्-वन् (पुनरीक्षक)–सभा के सारे निर्णयों को अंतिम रूप प्रदान करता है।

(7) ई-चु (प्रधान अनुवादक)–केन्द्र में स्थान ग्रहण करता था। वह संस्कृत की व्याख्या करता था।

(8) चइ-ई (अर्थ परीक्षक)– प्रधान अनुवाद के सहित निहित अर्थ पर विचार-विमर्श किया जाता था।

(9) चइ-वन् (पाठ परीक्षक)– प्रधान अनुवादक के पाठ को ध्यानपूर्वक सुनता था और उसकी शुद्धता का ध्यान रखता था।

यह सूचना चीन में अनुवाद-प्रविधि को दिए गए महत्त्व एवं गम्भीरता का प्रमाण है। वैज्ञानिक व तकनीकी ग्रन्थ के अनुवाद के क्षेत्र में पन्तनगर कृषि विश्वविद्यालय का पाठ्य-पुस्तक वाला प्रयोग भी स्वीकार करने योग्य है। यह सर्वविदित है कि इस कृषि विश्वविद्यालय में कृषि एवं पशुपालन से संबंधित उपाधि-स्तरीय पाठ्यक्रम हिन्दी के माध्यम से चलता है। जिसके परिणामस्वरूप उन्हें हिन्दी में पाठ्य-पुस्तकें तैयार करनी पड़ी हैं। अब भी ये तैयार की जा रही है। छपाई की सुविधा मिलने के पहले ही उन्हें किसी-किसी पाठ्य-पुस्तक का उपयोग करना पड़ता है। अतएव वे पुस्तक की कुछ साइक्लोस्टाइल प्रतियाँ तैयार कर लेते हैं। नये गम्भीर विषय की पांडुलिपियों की कुछ साइक्लोस्टाइल प्रतियाँ तैयार करने के पश्चात् उनका परीक्षण विभिन्न प्रकार से कराया जाए और उन पर विस्तृत समीक्षा व टिप्पणी प्राप्त की जाए तो उसके बाद सम्यक् सम्पादन करते हुए उसी ग्रन्थ का मुद्रण हो सकता है। इसमें गलतियाँ काफी कम देखने को मिलती हैं। इसके लिए विद्वान वैज्ञानिकों और भाषाविदों का श्रम ही फलदायक हो सकता है। वैज्ञानिक और तकनीकी ग्रन्थों के अनुवाद की प्रणाली पर विचार करने के क्रम में भाषा की तकनीकी पुस्तकों के स्तर पर विचार किया जा सकता है, परन्तु यदि स्तर पर संबंध केवल प्रकाशित पुस्तकों की बिक्री के आधार पर ही विचारसंगत हो तो यह अनुचित है।

बिक्री एक अलग बात है तथा स्तरीय चिन्तन दूसरी बात है। शिक्षा प्रसार तथा उन्नति के सन्दर्भ में इस बात पर प्रकाश डाला जाना चाहिए। आजकल अनौपचारिक शिक्षा और खुले विश्वविद्यालय की शिक्षा हर जगह चल रही है। इनके कार्यक्रम में हिन्दी या अन्य भारतीय भाषा के माध्यम से वैज्ञानिक पाठ्यक्रम की योजना बनाई गई, जिसका हजारों युवक-युवतियों ने स्वागत किया है। इससे भारतीय भाषा में नये वैज्ञानिक ग्रन्थों के प्रकाशन की सुविधाएँ बढ़ेंगीं।

इस बात से नकारा नहीं जाना चाहिए कि प्रौद्योगिकी के विकास का यह युग है, परन्तु इस युग की संचेतनात्कता का पूरा भार अभी प्रौद्यौगिकी के बढ़ते चरणें से लाभ उठाने वाले औद्योगिक संस्थानों ने खुद को अलग रखने की चेष्टा की है। कुछ औद्योगिक प्रतिष्ठानों ने इस कार्य में अपना उचित योगदान देने की

चेष्टा अवश्य की है, परन्तु इतने विशाल देश हेतु नहीं, बल्कि विश्व बाजार को ध्यान में रखते हुए उन्हें इस दिशा में अधिक कार्य करने पर बल दिया गया। पारस्परिक स्पर्द्धा में अपने तकनीकी विशेषज्ञों की गवेषणात्मक उपलब्धियों को शैक्षिक स्तर पर संपोषित करना उनका कर्त्तव्य है। इन संस्थानों के तकनीकी विशेषज्ञ अनुवाद कार्य की शिक्षा में अपने साक्षात अनुभवों से विद्वानों की सहायता की जा सकती है।

वैज्ञानिक एवं तकनीकी लेख के अनुवाद की तत्त्वगत विशेषताएँ

वैज्ञानिक तथा तकनीकी लेख की अनुवादजन्य विशेषता निम्नांकित दो तत्त्वों पर आधारित होती है–

(1) शुद्ध वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवाद।

(2) लोकप्रिय अनुवाद, तथा

वैज्ञानिक तथा तकनीकी विषय सन्दर्भित लेखों का अनुवाद वस्तुत: समाज के दो वर्गो को वैज्ञानिक जानकारी देने के उद्देश्य से किया जाता है। समाज का एक वर्ग है–**सामान्य वर्ग,** जो आधुनिकतम विज्ञान की प्रगति से परिचय प्राप्त करना चाहता है, इस प्रकार किया जाने वाला अनुवाद 'लोकप्रिय अनुवाद' कहा जाता है। दूसरा वर्ग है-**विशेष वर्ग**, जो विज्ञान के क्षेत्र में कार्यरत होता है तथा उससे जुड़ा होकर विज्ञान तथा तकनीक की आधुनिकतम जानकारी से इस संबंध में ज्ञान प्राप्त कर अपने ज्ञान को समृद्ध करने की कोशिश की है। अत: वैज्ञानिक तथा तकनीकी लेखों का अनुवाद इन दो दृष्टिकोणों से किया जाता है। इसे 'शुद्ध वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवाद' कहा जाता है।

लोकप्रिय अनुवाद-सामान्य वर्ग विज्ञान तथा तकनीक का ज्ञान अर्जित करने की इच्छा, कौतूहल, उत्कण्ठा या किसी बात की स्थूल जानकारी हेतु भी करता है। कभी नवीन रूप से आविष्कृत उपकरणों के युक्तियुक्त प्रयोग करने के संबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिए भी ऐसे लेख पढ़ने की इच्छा होती हैं, इस प्रकार के लेख बहुत सरल तथा सुबोध देने वाली ऐसी भाषा में होने चाहिए जो सामान्य वर्ग के पाठकों की उत्कण्ठा एवं कौतूहल की तृप्ति करने के साथ-साथ उन्हें अपेक्षित जानकारी भी दे सकें। ऐसे पाठकों को प्राय: न तो पारिभाषिक शब्दों का ज्ञान होता है और न ही यान्त्रिक प्रयोग की तकनीक या कला का, अत: अनुवादक का कार्य व्याख्यात्मक ज्यादा होता है। इस प्रकार के अनुवाद विशिष्ट वर्गीय पाठकों के लिए भी उपयोगी होते हैं। शुद्ध वैज्ञानिक और

तकनीकी अनुवाद–विशेष या विशिष्ट वर्ग के पाठक प्रायः अनेक वैज्ञानिक और तकनीकी पारिभाषिक शब्दों से परिचित होते हैं, अतः उनकी ज्ञानवृद्धि की सीमाएँ कुछ अधिक होती हैं।

इस वर्ग के पाठकों को वैज्ञानिक तथा तकनीकी जानकारी प्राप्त करने की इच्छा अपने ज्ञान का विकास करने के लिए होती हैं। इस वर्ग के पाठकों हेतु अनुवाद कार्य में वही मापदण्ड अपनाये जाते हैं, जो वैज्ञानिक और तकनीकी विषय को सामान्य रूप से अनुवाद किये जाने से अपेक्षित होते हैं। यदि कुशल अनुवादक इन्हें मूल लेख के यथार्थ को मनोरंजक शैली में प्रस्तुत करने में सफलता अर्जित कर सके तो अनुवादित लेख सुबोध तथा पठनीय बन जाता है। अनुवादक की ऐसी चेष्ठा उसकी सृजनात्मक क्षमता के ऊपरी होती है।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुवाद के स्वीकृत सिद्धान्त

वैज्ञानिक तथा तकनीकी अनुवाद के सिद्धान्तों का निरूपण निम्नांकित बिन्दुओं के अंतर्गत किया जा सकता है–

(1) आधुनिक विज्ञान के अनुवाद के अंतर्गत शब्द अथवा तत्सम प्रत्यय, विदेश भारतीय शब्दों की समास व्यवस्था आदि की जरूरत पड़ती है। यह साहित्य या भाषायी शुद्धि के प्रेमियों का यह बात खेद जनक लग सकती है, परन्तु ऐसे साहित्यशास्त्रियों के भय से अर्थ को भ्रमात्मक बना देने वाली भाषा का प्रयोग उपयुक्त नहीं होता।

(2) जिनके अंतर्गत संज्ञाओं को शामिल किया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय संज्ञाएँ हैं, उनका लक्ष्य-भाषा की लिपि में अन्तरण कर देना उचित होता है।

(3) वैज्ञानिक व तकनीकी लेख में अन्तर्राष्ट्रीय प्रतीक चिह्नों का प्रयोग होता है। इनकी न तो उपेक्षा करनी चाहिए और न इनको परिवर्तित करना चाहिए। वे अपने मौलिक रूप में स्वीकार किये जाते हैं।

(4) अन्य भाषाओं द्वारा स्वीकृत शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करते समय लक्ष्य-भाषा की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, उन्हें समंजित करना (यदि आवश्यकता हो तो व्याख्या के साथ) उचित रहता है।

(5) तकनीकी भाषा की संकररूपता अथवा विलक्षणता वैज्ञानिक सामग्री की अपनी स्वभावगत जरूरत होती है, अतः उसे सहज रूप में स्वीकार करना उचित और उपयुक्त होता है।

(6) जहाँ वैज्ञानिक सामग्री का लोकप्रिय प्रस्तुतीकरण हो, वहाँ लक्ष्य भाषा में प्रचलित अर्द्ध-तकनीकी शब्दों का प्रयोग सरसता प्रदान करता है।
यह ध्यान देने की बात है कि-

(i) विज्ञान का मुख्य उद्देश्य है, साहित्यिक ध्येय से भिन्न होता है। पाठक साहित्य में भाव-बोध का आनन्द लेना चाहता है, लेकिन विज्ञान में पाठक यथार्थ का ज्ञान करना चाहता है।

(ii) वैज्ञानिक भाषा को सपाट तथा सीधी भाषा की संज्ञा दी जाती है। उसके अनुवाद में भी मूल के तथ्यगत यथार्थ को यदि वह स्पष्ट भाषा में ही दी जाती है। जाने योग्य है तो उसी भाषा में प्रकट करना सही माना जायेगा।

(iii) विज्ञान सामग्री का अनुवाद विज्ञान का यथार्थ बोध कराने के लिए किया जाता है, न कि भाषा, सौन्दर्य, शैली सौष्ठव आदि दिखाने के लिए। अतः ज्ञान को सुस्पष्ट रूप में जिस तरह भी यथार्थ रूप दिया जा सके देना चाहिए।

विज्ञान के द्वारा अनुवाद को नवीन क्षेत्र उपलब्ध कराना

न विज्ञान शब्द अत्यधिक आधुनिक है औन न विज्ञान की सत्ता पर ही आधुनिक युग का एकाधिकार माना जाता है। अंग्रेजी में चाहे साइंस शब्द आधुनिक युग में आया हो, पर हिन्दी में ज्ञान और विज्ञान शब्द बहुत पहले संस्कृत से आ चुके हैं। यह बात अलग है कि प्राचीन साहित्य में विज्ञान शब्द अध्यात्म के संबंध में आया है। रावण के पास पुष्पक विमान का होना प्राचीन काल में विज्ञान की सत्ता स्पष्ट करता है। मिस्र के ऊँचे-ऊँचे पिरामिड तथा दिल्ली में अशोक की लाट आज भी वैज्ञानकों हेतु आश्चर्य के विषय बने हुए हैं। धीरे-धीरे विज्ञान ने विशेष उन्नति की तथा आज सारे विश्व के दैनिक जीवन को अपने प्रभावमें ले लिया है। विज्ञान का कोई आविष्कार एक देश में होता है।

नवीन आविष्कार की प्रविधि अथवा तकनीक एक देश से दूसरे देशों में अनुवाद के ही माध्यम से देखने को मिलती है। जब तक किसी देश की भाषा में विज्ञान की किसी खोज का विर्णन नहीं होगा, तब तक वहां के आविष्कारक उसे कैसे समझ पायेंगे ?

वैज्ञानिक अनुवाद में पारिभाषिक शब्दों एवं स्पष्टता की आवश्यकता

आज हर क्षेत्र में विज्ञान का प्रयोग किया जाता है अगर किसी नवीन वस्तु का आविष्कार होता है तो उसका प्रचार-प्रसार सारे संसार में शीघ्रतापूर्वक हो रहा है। प्रत्येक विज्ञान और तकनीकी की अपनी भाषा होती है। उससे संबंधि पारिभाषिक शब्द भी अलग होते हैं। वैज्ञानिक पुस्तकों एवं आविष्कार संबंधी ज्ञान में पारिभाषिक शब्दों का विशेष महत्त्व है। पारिभाषिक शब्दों के अनुवाद अत्यधिक सम्पन्न भाषा में हो सकता है, क्योंकि उसमें पारिभाषिक शब्द पर्याप्त होते हैं और उन्हें बनाने की क्षमता भी होती है। पारिभाषिक शब्दों के अभाव होने पर बहुत-सी भाषाएँ उन्हीं पारिभाषिक शब्दों को स्वीकार कर लेती हैं, जो आविष्कार की मूल भाषा के होते है। हिन्दी हेतु संस्कृत का शब्द भण्डार खुला है। इस आधार पर उसे सम्पन्न भाषा कहा जाता है। सायकिल, रेल और सिगनल के लिए अनुवादकों ने बहुत से पारिभाषिक शब्द बनाये, पर विस्तृत, विचित्र और अस्पष्ट होने पर वे नहीं चल सके। वैज्ञानिक पुस्तकों के अनुवाद हेतु अनुवादक को वैज्ञानिक शब्दों का ज्ञान चाहिए, उसे विषय और भाषा दोनों का ज्ञान होना चाहिए।

12

अनुवाद अभ्यास

21वीं शताब्दी के मौजूदा दौर में अनुवाद एक अनिवार्य आवश्यकता बन गया है। भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश के जन-समुदायों के बीच अंत:संप्रेषण के संवाहक के रूप में अनुवाद का बहुआयामी प्रयोजन सर्वविदित है। यदि आज के इस युग को 'अनुवाद का युग' कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति न होगी, क्योंकि आज जीवन के हर क्षेत्र में अनुवाद की उपादेयता को सहज ही सिद्ध किया जा सकता है। धर्म-दर्शन, साहित्य-शिक्षा, विज्ञान-तकनीकी, वाणिज्य व्यवसाय, राजनीति-कूटनीति, आदि सभी क्षेत्रों से अनुवाद का अभिन्न संबंध रहा है। अत: चिंतन और व्यवहार के प्रत्येक स्तर पर आज मनुष्य अनुवाद पर आश्रित है। इतना ही नहीं विश्व-संस्कृति के विकास में भी अनुवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। विश्व के विभिन्न प्रदेशों की जनता के बीच अंत: संप्रेषण की प्रक्रिया के रूप में,उनके बीच भावात्मक एकता को कायम रखने में, देश-विदेश के नवीन ज्ञान-विज्ञान, शोध-चिंतन को दुनिया के हर कोने तक ही नहीं, आम जनतातक भी पहुँचाने में तथा दो भिन्न संस्कृतियों को नजदीक लाकर एक सूत्र में पिरोने में अनुवाद की महती भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। प्रो. जीगोपीनाथनके शब्दों में, 'अनुवाद मानव की मूलभूत एकता की व्यक्ति-चेतना एवं विश्व-चेतना के अद्वैत का प्रत्यक्ष प्रमाण है'। अत: मौजूदा शताब्दी में अनुवाद ने अपनी संकुचित साहित्यिक परिधि को लाँघकर प्रशासन, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, तकनीकी, चिकित्सा, कला, संस्कृति, अनुसंधान, पत्रकारिता, जनसंचार, दूरस्थ शिक्षा,

प्रतिरक्षा, विधि, व्यवसाय आदि हर क्षेत्र में प्रवेश कर यह साबित कर दिया है कि अनुवाद समकालीन जीवन की अनिवार्यता है।

हिन्दी अब बाजार-तंत्र की, व्यवसाय-व्यापार की, संचार-तंत्र की तथा शासकीय व्यवस्था की भाषा बन रही है। हिन्दी भाषा में और हिन्दी भाषा से अनुवाद की परम्परा अब सुदीर्घ होने के साथ-साथ पुख्ता और उल्लेखनीय भी होती जा रही है। लोठार लुत्से की बात पर गोर करें तो हमें हिन्दी, मराठी, बांग्ला, तमिल, तेलुगू या कन्नड़ लेखकों को उनकी भाषा के नहीं, भारतीय लेखक के रूप में देखना चाहिए। तभी भारतीय भाषाएँ भारत में और फिर विश्व में प्रतिष्ठा प्राप्त करेंगी। ओड़िया का लेखक सारे ओड़िशा में प्रतिष्ठा प्राप्त कर ले तो यह कोई छोटी बात नहीं होगी, लेकिन ओड़िया का लेखक पूरे भारत में प्रतिष्ठा हासिल करे तो यह उससे भी बड़ी बात होगीऔर उसके लिए चुनौती भी। और जो लेखक इस चुनौती को स्वीकार कर उसमें खरे उतरते हैं, वे सचमुच बड़े, बहुत बड़े लेखक सिद्ध होते हैं। इसके लिए जरूरी है कि भारतीय भाषाओं में अनुवाद की प्रक्रिया को तेज किया जाए। अनुवाद के बिना हमारा कोई भी लेखक यूरोप-अमेरिका तो दूर अपने ही देश में भारतीय लेखक के रूप में प्रतिष्ठित नहीं हो सकता। उदाहरण के लिए फकीर मोहन सेनापति, प्रतिभा राय, सीताकान्त महापात्र आदि अगर हिन्दी में अनूदित न होते तो क्या भारतीय लेखक के रूप में इतने बड़े पैमाने पर देश और दुनिया में स्वीकार्य हो सकते थे? निश्चय ही नहीं। अनुवाद की ताकत पाकर ही कोई बड़ा लेखक और भी बड़ा सिद्ध होता और अपनी सामर्थ्य को दिग-दिगंत तक फैला पाता है। अनुवाद के बगैर वह, वह सिद्ध नहीं हो सकता, जो दरअसल वह होता है और यह काम अनुवादक ही कर सकता है। ऐसे में अनुवाद की महत्ता को जन-जन तक पहुँचाना और अनुवादकों को सम्मानजनक स्थान दिलाना जरूरी हो गया है ताकि भारतीय साहित्य और मनीषा को दूसरों तक पहुँचा कर राष्ट्रीय सेतु का निर्माण किया जा सके।

अनुवाद आज के व्यावसायिक युग की अपेक्षा ही नहीं अनिवार्यता भीबन गया है। यह एक सेतु है। सांस्कृतिक सेतु, सांस्कृतिक एकता, परस्पर आदान-प्रदान तथा 'विश्वकुटुम्बकम्' के स्वप्न को साकार करने की दृष्टि से अनुवाद की भूमिका उल्लेखनीय रही है। इस प्रकार वर्तमान युग में अनुवाद की महत्ता और उपयोगिता केवाल भाषा और साहित्य तक ही सीमित नहीं है,वह हमारी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और राष्ट्रीय संहति और ऐक्य का माध्यम है, जो भाषायी

सीमाओं को पार करके भारतीय चिन्तन और साहित्य की सर्जनात्मक चेतना की समरूपता के साथ-साथ, वर्तमान तकनीकी और वैज्ञानिक युग की अपेक्षाओं की पूर्तिकर हमारे ज्ञान-विज्ञान के आयामों को देश-विदेश में संपृक्त करती है। दूसरे शब्दों में, अनुवाद विश्व-संस्कृति, विश्व-बंधुत्व, एकता और समरसता स्थापित करने का एक ऐसा सेतु है। जिसके माध्यम से विश्व ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में क्षेत्रीयतावाद के संकुचित एवं सीमित दायरे से बाहर निकल कर मानवीय एवं भावात्मक एकता के केन्द्र बिन्दु तक पहुँच सकता है और यही अनुवाद की आवश्यकता और उपयोगिता का सशस्त एवं प्रत्यक्ष प्रमाण है।

आज जब सारा विश्व सामाजिक पुनर्व्यवस्था पर एक नये सिरे से विचार कर रहा है और व्यक्ति तथा समाज को एक नव्य स्वतंत्र दृष्टि मिली है वहीं हम भी व्यक्ति और देश को विश्व के परिप्रेक्ष्य में देखने-समझने का प्रयत्न कर रहे हैं। ऐसी स्थिति में अनुवाद का महत्त्व और भी बढ़ जाता है। किसी समाज और देश की अभिव्यक्ति भाषा की सीमा के कारण एक क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रह जाए और दूसरों तक न पहुँच पाए तो विश्व स्तर पर एक नव्य सामाजिक पुनर्व्यवस्था की बात सार्थक कैसे हो सकती है!

अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद करने के कुछ अभ्यास कार्य

हम यहाँ अनुवाद कार्य में विशेषता लक्षित करने तथा अभ्यास करने के लिए कुछ अनुवाद प्रस्तुत कर रहे हैं, इन्हें देखिए–

1.	He must get the food ready in time.	उसे खाना समय से अवश्य तैयार करवा देना चाहिए।
2.	He got Madhu appointed a teacher.	उसने मधु को एक अध्यापिका नियुक्त करवा दिया।
3.	When I reached the station the train was about to leave.	जब मैं स्टेशन पहुँचा गाड़ी छूटने वाली थी।
4.	He ran the horse in the field.	उसने घोड़े को मैदान में दौड़ाया।
5.	Whya did you make him week.	तुमने उसे क्यों रुलाया ?
6.	I stood the umbrella against the wall	मैने छाते को दीवार के सहारे खड़ा कर दिया।
7.	When he was about to speak somebody threw an egg at him.	वह बोलने ही वाला था जब किसी ने उस पर अण्डा फेंका।

8. I wish he had been alive. काश वह जिन्दा होता।
9. I wish he would be a professor. मेरी इच्छा है कि वह प्रोफेसर हो जाए।
10. I wish he had known all about it. काश उसे इसके बारे में सब कुछ मालूम होता।
11. If he had been wearing a coat, he would not have cought cold. यदि वह कोट पहने हुए होता तो उसे ठण्ड न लगती।
12. When I began to read, the light failed. जब मैं पढ़ने लगा बिजली चली गई।
13. After many efforts the car began to move. काफी प्रयत्नों के बाद कार चलने लगी।
14. He behaes as if he were the Prime Minister. वह ऐसे व्यवहार करता है मानों वह प्रधानमन्त्राी हो।
15. He takes as if he knew all about it. वह ऐसे बात करता है मानो वह इसके बारे में सब कुछ जानता

अंग्रेजी वाक्य हो। हिन्दी अनुवाद

1. The fair is going to the held. मेला लगने वाला है।
2. He went home quite happy. वह खुशी-खुशी घर चला गया।
3. She wept bitterly. वह फूट-फूट कर रोई।
4. He died of over-eating. वह खाते-खाते मर गया।
5. My heart is sinking slowly. मेरा है। कलेजा धीरे-धीरे बैठा जा रहा
6. See me ater this period. मुझे इस घण्ट के पीछे मिलना।
7. I refuted all his arguments. मैंने उसी सब तर्के काट दीं।
8. This pair of shoes will weal well. यह जूता खूब चलेगा।
9. I am feeling gnawing hunger. मेरे पेट में चूहे नाच रहे हैं।
10. His wits are gone wool-fathering. उसकी अक्ल घास चरने गई है।
11. He was besided himself with joy. उसका ह्रदय खुशी से बाग-बाग हो गया।

12. What day of the week is it today? आज सप्ताह का कौन-सा दिन है ?
13. Only God knows what is in store for us. केवल भगवान जनाता है कि हमारे भाग्य में क्या लिखा है।
14. The hind tube of bicycle needs pumping. मेरी साइकिल के पिछले पहिये में हवा कम है।
15. Haste makes waste. जल्दी का काम शैतान का होता है।

PROVERBIAL SENTENCES

1. Make hay while the sun shines. बहती गंगा में हाथ धो लो।
2. A burnt child breads the fire. दूध का छला छाछ को फूँक-फूँक कर पीता हैं।
3. A drowing man catches as a straw. डूबते को तिनके का सहारा।
4. Barking dogs seldo bite. जो गरजते हैं, वे बरसते नहीं।
5. Where there is a will, there is a way. जहाँ चाह है वहाँ राह है।
6. A little pot is soon hot. थोथा चना बाजे धना।
7. Deep rivers move with silent majesty while shallow brooks are noisy. अधजल गगरी छलकत जाय, भरी गगरिया चुप्पै जाय।
8. A bird in the hand is worth two in the bush. नौ नकद न तेरह उधार।
9. All that glitters is not gold. हाथी के दाँत दिखाने के और, खाने के और।
10. A bad workman quarrels with his tools. नाच न जाने आँगन टेढ़ा।
11. Great cry, little wool, Or Great boast little roast. ऊँची दुकान फीका पकवान।
12. Cut your coat according to your cloth. तेते पाँव पसारिये जेती लांबी सौर।
13. It is never too late to mend. सुबह का भूला शाम को घर लौट आये तो भूला नहीं कहलाता।

14. A fried in need to a friend indeed.	मित्र वही जो समय पर काम आवे।
15. Diamond cuts diamond.	लोहा लोहे को काटता है।
16. Let by-gones be by-gones.	बीती ताकि बिसार दे/गढ़े मुर्दे मत उखाड़ो।
17. To add insult to injury.	घाव पर नमक छिड़कना।
18. Many a little makes a mickle.	बूँद-बूँद से घड़ा भरता है।
19. To carry coal to Newcastle.	उलटे बाँस बरेली को।
20. Seeing is believing.	हाथ कंगन को आरसी क्या।
21. After death, the doctor.	का वर्षा जब कृषि सुखाने।
22. He gives twice that gives in a trice.	तुरन्त दान महाकल्याण।
23. It takes two to make a quarrel.	एक हाथ से ताली नहीं बजती है।
24. No gains without pains.	सेवा बिना मेवा नहीं।
25. When the sky falls we shall catch larks.	न नौ मन तेल होय न राधा नाचै।
26. Errors and omissions excepted.	भूल-चूक लेनी देनी।
27. It is no used crying over spilt milk.	अब पछताये होत क्या जब चिड़ियाँ चुंग गई खेत।
28. Rome was not built in a day.	हथेली पर सरसों नहीं जमती।
29. Might is right.	जिसकी लाठी उसकी भैंस।
30. Out of sight, out of mind.	आँख ओट पहाड़ ओट।
31. Good mind, good find.	आप भला तो जग भला।
32. One swallow does not make a summer.	अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता।
33. Money for money and interest besides. or Earth's joys and heaven's blessing sombined.	आम के आम गुठलियों के दाम।
34. No man can serve two masters.	धोबी का कुत्ता घर का न घाट का।
35. Birds of the same feather flock together.	चोर-चोर मौसेरे भाई।

37. All's well that ends well. अन्त भला सो सब भला।

कुछ विशिष्ट भाव प्रधान वाक्य निम्नलिखित हैं–

1. What is lotted cannot be blotted. भाग्य का लिखा मिट नहीं सकता।
2. He has seen many ups and downs of life. उसने जीवन के कई उतार–चढ़ाव देखे हैं।
3. Her beuty beggars description. उसके सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया जा सकता।
4. He is patriot out and out. वह पक्का देश भक्त है।
5. My friend is overhead and cars in debt. मेरा मित्र ऋण में डूबा हुआ है।
6. Good students never play truant. अच्छे विद्यार्थी कभी भी विद्यालय से नहीं भागते।
7. He opposed me tooth and nail. उसने मेरा डटकर विरोध किया।
8. Come what may, I shall help you. चाहे जा कुछ हो, मैं तुम्हारी सहायता करूँगा।
9. Prices are shooting up. कीमतें आसमान छू रही है।
10. He always indulges in tall talks. वह हमेशा गप्प मारता है।
11. He is an apple of his mother's eye. वह अपनी माँ की आँख का तारा है।
12. Who will bell the cat ? म्याऊँ का मुँह कौन पकड़ेगा?
13. After me, the Deluge. आप मरे जग प्रलय।
14. Tit for tat. जैसा को तैसा।
15. It is an uphill task. यह काम अत्यन्त कठिन है।
16. Sooner or later, he will come to grief. एक न एक दिन उसे मुँह की खानी पड़ेगी।
17. I am always an eye-sore to him. मैं सदैव उसकी आँखों में खटकता हूँ।
18. Is there any way out of the difficulty? क्या संकट से उबरने का कोई रास्ता है?

19. Handsome is that handsome does. अच्छा वह जो अच्छा कार्य करे।
20. Strike the iron while it is hot. अवसर को हाथ से मत जाने दो।
21. Self-praise is no recomm endation. अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनाना।
22. To try one in one's own Greece. उसका जूता उसी का सिर।
23. Prevention is better than cure. इलाज की अपेक्षा बचाव अच्छा।
24. A fog cannot be dispelled by a fan. ओस चाटे प्यास नहीं बुझती।
25. Every dog has his day. कभी धूरे के भी दिन फिरते हैं।
26. Kindess is lost upon an ungrateful man गधे का खिलावा, पाप न पुण्य है।
27. He has become shameless. उसकी आँख का पानी उतर गया
28. Sunita has luxuriant hair. सुनीता के बाल बहुत घने हैं।
29. His habits are growing fagt. उसकी आदते जड़ पकड़ रही हैं।
30. The boil is drawing to a head. फोड़े का मुँह निकल आया है।
31. Time hangs heavily on my head. मेरा समय नहीं कटता।
32. They are basking. वे धूप खा रहे हैं।
33. Four of his teeth have fallen off. उसके चार दाँत गिर गये हैं।
34. To forbear is always good. गम खाना हमेशा अच्छा है।
35. A light purse is a heavey purse. कंगाली में आटा गीला।
36. Misfortunes seldom come alone. दुर्भाग्य कभी अकेले नहीं आते।
37. A nine days wonder. चार दिन की चाँदनी फिर अंधेरी रात।
38. Worship the rising sun. चमत्कार को नमस्कार।
39. Need makes the old wife tot. लकड़ी के बल बंदरी नाचे।
40. A stitch in time saves nine. समग्र का टाँका बड़ी बचत करता है।
41. A varice is the root of all evils. लालच बुरी बला है।
42. Yours sticks will not work here. यहाँ तुम्हारी दाल नहीं गलेगी।

43. A covetous man is ever in want.	लोभी का पेट सदा खाली।
44. Two of a trade seldom agree.	एक म्यान में दो तलवार नहीं रहती।
45. Too many cooks spoil the broth.	दो मुल्लाओं से मुर्गी हराम।
46. A crow is never the whiter for washing.	नीम न मीठा होय सींचो घी गुड़ से।
47. First deserve than desire.	पहले पात्र बनें फिर इच्छा करें।
48. Life is better than bags of gold.	जान बची तो लाखों पाये।
49. A common horse is the worst shod.	साझे की हंडिया चौराहे पर फूटती है।
50. Well-begun is half done.	शुरूआत अच्छी, कार्य सम्पन्नता अच्छी।

अभ्यास कार्य 1

(1)Agra is a famous historical city. For years, it has been the capital of Moghul emperors. Many foreigners call it a city of mausoleums.

आगरा एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर है। सैकड़ों वर्षो तक वह मुगल सम्राटों की राजधानी रहा है। बहुत से विदेशी आगरा को मकबरों का शहर कहकर पुकारते हैं।

(2)A railway station is an attractive meeting place for all. Hindus, Muslims, Sikhs, Charistians and Persians, all can be seen here.

रेल का स्टेशन सबके मेल-मिलाप का एक आकर्षक स्थान होता है। हिन्दू मुसलमान, सिख, ईसाई, पारसी सब ही यहाँ दिखाई देते हैं।

(3) One day all of sudden, the sky was overcast with clouds. It started thundering. In no time torrential rain began to fall.

एक दिन अचानक आसमान में बादल छा गये। बादल गरजने लगें अब देखते ही देखते मूसलाधार वर्षा आरम्भ हो गई।

(4) It rained so heavily that the roofs of the house began to leak. Mud houses began to collaps. The house was water logged. The tenant said, This house is ot worthliving in.

वर्षा इतनी अधिक हुई कि मकान की छते चूने लगीं। कच्चे मकान गिरने लगे। मकान में पानी भर गया। किरायेदार ने कहा, "यह मकान रहने लायक नहीं है।"

अभ्यास कार्य 2

(1) It is always cold and shady under a banyan tree. Without any difficulty you may reach in between its boughts and then there is no fear of falling down.

बरगद के नीचे हमेशा ठण्डक और छाया रहती है। बिना किसी कठिनाई के तुम इसकी डालों के बीच पहुँच जाओगे और फिर गिरने का डर नहीं रहेगा।

(2) The banyan tree welcomes each and everyone. Besides boys and girls, various types of guests come to it--birds, squirrels, insects, reptiles, etc.

बरगद सबकी आवभगत करता है। लड़के-लड़कियों के अलावा और कई तरह के अतिथि इसके पास आते हैं-चिड़ियाँ, गिलहरी, कीड़े-मकोड़े, चमगादड़ वगैरह-वगैरह।

(3) The word library means `a place or building for books.* In other words. library is a building in which books are kept.

पुस्तकालय शब्द का अर्थ होता है, 'पुस्तकों का घर या स्थान'। दूसरे शब्दों में, पुस्तकालय वह स्थान है जहाँ पुस्तकों को संग्रहित किया जाता है।

(4) There would be hardly any child in this country, who does not identify a parrot. There was a time when there hung an iron cage in every house.

जब देश का शायद ही कोई बच्चा होगा जो तोते को न पहचानता हो। एक समय था जब घर-घर में लोहे का पिंजड़ा टंगा रहता था।

अभ्यास कार्य 3

(1) Various kinds of fruits ae found in different parts of India. Mango, apple, bababa, orange, pomegranate, guave, grape, papaya and lemon are produced plentifully in most of the states here.

भारत के विभिन्न भागों में नाना प्रकार के फल पाये जाते है।। आम, सेव, केला, सन्तरा, अनार, अमरूद, अंगूर, पपीता व नींबू यहाँ के अधिकांश प्रदेशों में प्रचुरता से पाये जाते हैं।

(2)As we have seen there are three great Himalayan rivers--Ganga, Brahmaputra and some portions of the Sindhu.

जैसा कि हम देख चुके हैं कि हिमालय की तीन बड़ी नदियाँ हैं–गंगा, ब्रह्मपुत्र और सिन्धु नदी के कुछ भाग।

(3) There are two kinds of games (indore games) played inside a house and (outdoor games) those played o the open playgrounds.

खेल दो प्रकार के होते हैं–एक घर के भीतर खेले जाने वाले और दूसरे खुले मैदान में खेले जाने वाले खेल।

(4) On 15thAugust, 1947, there was life and bustle in the country, ceremonies were held, feasts were arranged in the night there were lights than on Diwali.

15 अगस्त, 1947 को सारे देश में खुशियाँ मनाई गई, जलसे हुए दावतें दी गई, रात को दिवाली से बढ़कर रोशनी की गई।

अभ्यास कार्य 4

(1) The path alon Mandakini from Rudraprayag leads to Guptakashi. The total distance is twenty four miles. Out of it the distance of twenty-two miles may be covered by jeep.

रुद्रपयाग से मन्काकिनी के किनारे गुप्तकाशी का रास्ता है। कुल दूरी 24 मील है। इसमें से 22 मील तक तो जीप पर जाया जा सकता है

(2)All the countries have both merchantile and naval fleet. The merchantile ships carry gods from and to other countries.

सभी देशों के पास व्यापारिक व सैनिक दोनों प्रकार के जहाजी बेड़े होते हैं। व्यावसायिक जहाज दूसरे देशों के माल लाते हैं व यहाँ से अपना माल ले जाते हैं।

(3) There is a certain type of difference between the rivers of Northe India and those of South India. The rivers of North India are perennial *i.e.* they are full of water all the year round.

उत्तर भार और दक्षिण भारत की नदियों में एक खास अन्त है। उत्तर भारत की नदियाँ बारहमासी हैं, यानी पूरे वर्ष भर उनमें पानी भरा रहता है।

(4) The Himalayas are the highest of all he mountains in the world. The high peaks are covered with snow throughout the year. The word `Himalayas* means the `home of snow.*

हिमालय विश्व की सबसे ऊँचा पहाड़ है। इसकी ऊँची-ऊँची चोटियाँ वर्ष भर बर्फ से ढकी रहती है। 'हिमालय' शब्द का अर्थ है 'बर्फ का घर'।

अभ्यास कार्य 5

(1) Walk carefully lest you stumble. If you got hurt, you would have to spend a lot of money on treatment.

संभलकर चलो ऐसा न हो कि तुम्हें ठोकर लग जाये। यदि तुम्हें चोट आ गई तो इलाज पर बहुत धन खर्च करना पड़ेगा।

(2) Ram along with his friends has gone to Hyderabad.After your day's stay there, e will come back day after tomorrow or lese he will leave for Chennai from there.

राम अपने मित्रों के साथ हैदराबाद गया है। वहाँ चार दिन रुकने के बाद शायद वह परसों लौट आयेगा अन्यथा वहाँ से चेन्नई चला जायेगा।

(3) The books had advised me to have a walk in the open air and that I appreciated. Threfore, from High School onward I formed a habit of going for a walk.

पुस्तकों में मैंने खुली हवा में घूमने जाने की सलाह पढ़ी थी और वह मुझे अच्छी लगी थी। इसलिए हाईस्कूल कक्षा में मुझे घूमने जाने की आदत पड़ गई थी।

(4) Would that my friend were the Prime Minister? If he loved me, he would remember me from time to time.

क्या ही अच्छा होता मुरा मित्र प्रधानमन्त्री होता ? अगर वह मुझे प्यार करता तो समय-समय पर याद करता।

अभ्यास कार्य 6

(1) What else do people need except food, clothe and shelter ? They should have time to rest, to think and a feel.

खाना, कपड़ा और घर को छोड़कर लोगों की और क्या आवश्यकताएँ हैं ? उन्हें आराम का समय, सोचन-विचारने का समय और महसूसर करने के लिए भी समय चाहिए।

(2) Have you evern seen a warped tree? It could not grow straight because three might have been some hindrance in its development.

क्या तुमने कभी टेढ़ा बढ़ता हुआ पेड़ देखा है ? वह सीधा इसलिए नहीं बढ़ सका कि उसके रास्ते में कोई रुकावट आ गई होगी।

(3) One night the only sone of a farmer died. The members of his family became very sad and wept but the farmer did not appear to have been affect. His wife said weeping, ^How hard-hearted you are !*

एक रात एक किसान का इकलौता पुत्र मर गया। उसके घर वाले दुखी हुए और राये, पर किसान प्रभावित नहीं हुआ। उसकी पत्नी ने रोते हुए कहा, "कैसे पत्थर दिल हो तुम !"

(4) I had distaste for physical exercise. Physical exercise was compulsory for the students of higher clases. Before cricket was made compulsory, I never attnded exercise, cricket or football. God knows my shyness was one of its reasons.

व्यायाम से मुझे अरुचि थी। ऊँची कक्षा के विद्यार्थियों के लिए व्यायाम अनिवार्य था। क्रिकेट के अनिवार्य बनने से पहले मैं कभी कसरत, क्रिकेट या फुटबाल में गया ही न था। न जाने मेरा शर्मीला स्वभाव भी इसका एक कारण था।

अभ्यास कार्य 7

(1)A poet went to a rich man and praised him highly. Becoming happy that rich man said. "At present I do not have any money but I have plenty of grain. If you come tomorrow, I shall give you some grain."

The poet arrived at the house of that rich man next morning. The rich man said, "Well, how did you happen to come so early this morning? What can I do for you?" The poet replied that he (the rich man) had promised to give him some grain. The rich man laughed and said that he (the poet) appeared to be a fool. As he had pleased him by mere words, so he had also pleased him by mere words.

The poet went home silently but the stopped writing poems in praise of others.

एक कवि एक धनी आदमी के पास गया और उसकी बड़ी तारीफ की। उस अमीर ने खुद होकर कहा, "अभी तो मेरे पास पैसा नहीं है पर अनाज काफी है अगर आप कल आयें तो मैं आपको कुछ अनाज दूँगा।"

कवि दूसरे दिन सुबह उस धनिक के घर पर पहुँचा। उस अमीर आदमी ने कहा, "कहिए, इतने सुबह कैसे आना हुआ ? मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ?" कवि ने जवाद दिया कि आपने मुझे कुछ अनाद देने का वचन दिया था। अमीर आदमी ने हँसकर कहा कि तुम बड़े बेवकूफ हो। जैसे तुमने मुझे बातों से प्रसन्न कर दिया था, वैसे ही मैंने तुम्हें भी बातों से खुश कर दिया।

कवि चुपचाप अपने घर चला गया और उसने दूसरों की प्रशंसा में कविता लिखना बन्द कर दिया।

(2) There was a village on the bank of river.A wood-cutter lived there. One day his eldest son went to the forest to tend the sheep. While the sheep were grazing, the boy set out to see the railway bridge. He was bewildered to see that the bridge had cought fire. The train was about to come. The body thought that if the train was not stopped hundreds of people would lose their lives in vain. In the meantime. He started running between the railway lines towards the train. The driver slowed down the train but it knocked him down. The train stoped near the bridge. Now the people realised that the boy has sacrificed his life in order to save the lives of others.

समुद्र के किनारे एक गाँव था। वहाँ एक लकड़हारा रहता था। एक दिन उसका सबसे बड़ा लड़का भेड़ें चराने के लिए जंगल गया। भेड़ें घास चर रही थीं पर लड़का रेल के पुल को देखने के लिए चल पड़ा। वह यह देखकर हैरान रह गया कि पुल में आग लगी हुई है। गाड़ी आने वाली थी। लड़के ने सोचा कि अगर गाड़ी को रोका न गया तो सैकड़ों व्यक्तियों की जान चली जायेगी। इतने में उसने गाड़ी की सीटी सुनी। उसने निश्चय किया कि उसे गाड़ी गिरने से बचाना हैं वह पटरियों के बीच में गाड़ी की तरफ दौड़ने लगा। ड्राइवर ने गाड़ी धीमी कर दी पर लड़का गाड़ी से टकरा गया। पुल के पास आकर गाड़ी रुकी। तब लोगों को समझ में आया कि लड़के ने दूसरों की जान बचाने के लिए अपना बलिदान कर दिया है।

(3) Once an old woman went blind. She sent for a physician and promised him a handsome reward if she got her eyesight again. The physician started treating her but during her treatment he took away all her belongings.After some time the eyes of the old woman became all right and she started seeing again. She saw that nothing had been left in her house. The physician asked her for his reward and on her refusal got her summoned by a judge. When asked by the judge, she said, "What this man says in true, I promised him a good

reward on the resoration of my eyesight. But my eyes have not been cured at all. Before losing my eyesight. I could see all kinds of things in my house. This man says that my eyes are now all right but I cannot see anything in my house."

एक बार एक बुड्ढी औरत अन्धी हो गयी। उसने एक वैद्य को बुलवाया। उसने उससे वादा किया कि अगर उसकी आँखों को रोशनी वापस आ गई तो वह उसे एक अच्छा पुरस्कार देगी। वैद्य ने उसका इलाज शुरू किया, पर इलाज के दौरान वह उसका सारा सामान उठा ले गया। कुछ समय बाद बुढ़िया की आँखें ठीक हो गई और वह दुबारा देखने लगी। उसने देखा कि उसके घर में कुछ न बचा था। वैद्य ने उससे अपना पुरस्कार माँगा और उसके मना करने पर उसे एक जज ने सामने बुलवाया। जज के पूछने पर बुढ़िया ने कहा, "यह आदमी ठीक कहता है, मैंने इसे आँखों की रोशनी वापस आने पर एक अच्छा इनाम देने को कहा था। लेकिन मेरी आँखे ठीक कहाँ हुई हैं। आँखों की रोशनी खोने के पहले मैं अपने घर में सब प्रकार का सामान देख सकती थी। यह कहता है कि मेरी आँखें ठीक हो गई हैं, पर मुझे अपने घर में कोई चीज नहीं दिखाई देती है।"

(4) When a wood-cutter went to forest one day, he saw a strange scene there. He saw a small girl who has the brightness of countless diamonds in her body there. He brought the girl home. Wealth started pouring on him from the day te firl came to his house. Whenever the wood-cutter went to forest for cutting wood, he got one thing or the other daily. Sometimes he got pearls and diamonds, sometimes silver articles and sometimes a bag full of gold coinds. The wood-cutter became rich withing a year. Within a year the girl too grew into a young maiden and the stories of her beauty spread for the wide.After some days a small cloud descended before the house of the wood-cutter from the sky. The girl came out and saw four fairies standing before. She took leave of her parents with great grief. The earth had become the object of her love because she had lived on it. The cloud took that greiving girl to the sky and she became the moon there. Even today she sometimes wanes in memory of the earth.

एक दिन एक लकड़हारा जब जंगल को गया। वहाँ उसने एक विचित्र दृश्य देखा। उसने वहाँ एक छोटी लड़की देखी जिसके शरीर में असंख्य हीरों की चमक थी। वह लड़की को घर ले गया। जिस दिन लड़की उसके घर आई उसके ऊपर धन बरसने लगा। जब लकड़हारा जंगल को लकड़ी काटने जाता,

वह एक न एक चीज रोज पा जाता। कभी उसे मोती और हीरे मिलते, कभी चाँदी के सामान और कभी सोने के सिक्कों से भरी थैली। एक साल के अन्दर वह लकड़हारा धनी हो गया। एक साल के अन्दर वह लड़की भी बढ़कर युवती हो गई और उसकी सुन्दरा की कहानी दूर-दूर तक फैल गई। कुछ दिनों बाद एक रात को एक छोटा-सा बाद आकाश से लकड़हारे के घर के सामने उतरा। लड़की बाहर आई और उसने चार परियों को अपने सामने खड़ा देखा। उसने बड़े दु:ख के साथ अपने माता-पिता से विदा ली। पृथ्वी पर रहने के कारण उसे पृथ्वी से प्यार हो गया। बादल उस दु:खी लड़की को अपने साथ ले गया और वह वहाँ चन्द्रमा बन गई। पृथ्वी की याद में वह आज भी दुबली हो जाती है।

(5)A kling had three queens.All three of them were very tendor. One day the king took them to his garden for a walk. There was a pond in that garden in which lotus blooms floated. Fascinated by the beauty of the garden, the king took of his clothes and had a bath in the pond. Plucking a lotus bloom, he presented it to a queen. Incidentally the lotus bloom dropped from his hand and fell on a foot of the queen, and this hurt her. The king ordered for the careful treatment of the queen. In the night the rays of the rising moon fell on anoher queen, which scorched her skin. Next morning the sound of the thrashing of rice fell into the ears of the third queen. This caused such a terrible pain in her head that she fainted. The tenderest of all the three was the one who fainted at hearing the sound of the thrashing of rice.

एक राजा के तीन रानियाँ थीं। तीनों बड़ी कोमल थीं। एक दिन राजा उन्हें अपने उद्यान में घुमाने के लिए ले गया। उद्यान में एक तालाब में जिसमें कमल के फूल तैरते थे। उद्यान की सुन्दरता पर मुग्ध होकर राजा ने अपने कपड़े उतार दिये और तालाब में स्नान किया। उसने एक कमल का फूल तोड़कर अपनी एक रानी को भेंट किया। संयोग से फूल उसके हाथ से छूटकर रानी के पैर पर गिरा और उससे उसे चोट लग गई। राजा ने उसकी सावधानी से चिकित्सा करने की आज्ञा दी। राज को उदय हुए चन्द्रमा की किरणें दूसरी रानी पर पड़ीं और इससे उस रानी की खाल झुलस गई। दूसरे दिन सुबह तीसरी रानी के कान में धान कूटने की आवाज पड़ी। इससे उसके सिर में इतनी भंयकर पीड़ा हुई कि वह बेहाश हो गई। इन तीनों रानियों में सबसे अधिक कोमव वह थी जो धान कूटने की आवाज सुनकर बेहोश हो गई।

अनुवाद के व्यावहारिक पक्ष

अनुवाद क्रिया अपने स्थूल रूप में अवश्य ही भाषाओं से सम्बद्ध है, क्योंकि कभी दो भाषा-भाषी व्यक्ति मिलें और एक-दूसरे को अपनी बात समझाने का प्रयत्न करें, तो वह तभी समझा सकेगें, जब दोनों किसी तीसरी भाषा का ज्ञान रखते हों। ऐसी स्थिति में प्रत्येक व्यक्ति पहले अपनी भाषा में सोची हुई बात का अनुवाद उस भाषा में करेगा, जिसे दूसरा भी जानता है, तब उस भाषा में अपनी बात कहेगा। यह प्रक्रिया तुरत प्रक्रिया है। दूसरा व्यक्ति भी एक ही बात का उत्तर देने के लिए इसी तुरत प्रक्रिया को अपनायेगा। यह अनुवाद क्रिया का एक व्यावहारिक पक्ष है।

अनुवादक के लिए मूल के सन्दर्भ का ज्ञान

अनुवादक के लिए सन्दर्भ और प्रसंग की जानकारी का होना भी सर्वथा अपेक्षित है। इसके अभाव में वह अनुवाद कार्य में न्याय कर नहीं नहीं सकता। उदाहरणार्थ अंग्रेजी के सन (Son) का अर्थ सभी स्थानों पर पुत्र ही करना उचित नहीं होगा। 'सन् ऑफ इण्डिया' का सही अनुवाद 'भारत का सपूत' होगा न कि भारत का पुत्र। इसी प्रकार कहीं आत्मज, कहीं बेटा, लड़का तो कहीं कुलदीपक प्रयोग में आए। इस संबंध में एक विद्वान का यह कथन बड़ा ही उपयुक्त है–**"शब्द भाव अथवा विचार की पोशाक नहीं है, जो इच्छानुसार बदली जा सके अर्थात् पैंट-कमीज के स्थान पर धोती-कुर्ता पहना दिया जाये।"** यह तो भाव या विचार का मांस अथवा उसकी त्वचा है। अतः भव विचार के अनुकूल एवं अनुरूप शब्दों का प्रयोग करने वाला अनुवादक ही अनुवाद को सफल एवं सजीव बना सकता है।

अनुवाद कार्य में अनुवादक को पूर्वाग्रह से रहित होना

अनुवाद कार्य के लिए प्रयोजित रचना या उसक विषय के प्रति यदि अनुवादक किसी प्रकार के पूर्वाग्रहों से युक्त हो, जैसा कि प्रायः होता है, तो वह रचना मूल रचनाकार की रचना में अभिव्यक्ति दोष का सृजन कर देता है। यह दोष अनुवाद कार्य का सबसे बड़ा दोष है। अनुवादक को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह अनुवाद करते समय अभिव्यक्ति में स्वतंत्र नहीं है, अतः उसे स्वयं को मूल रचना के भावों तथा विचारों को दूसरी भाषा में अन्तरण करने से अधिक

कुछ नहीं करना है। यह सत्य है कि कभी-कभी उसे रचना के विषय संबंधी ज्ञान में मूल रचनाकार के ज्ञान से अधिक ज्ञान हो सकता है तथा यह भी सम्भव है कि कभी-कभी अनुवादक मूल रचना के अनेक भाव-विचार रखता है अर्थात् मूल रचना के भाव-विचारों के प्रति वह किन्ही पूर्वाग्रहों से ग्रस्त है या विषय संबंधी उसकी पूर्वाग्रही धारणा सिद्धान्त-संकल्पना में मूल रचनाकार की संकल्पना में, अपनी धारणा को प्रच्छन्न रूप से अनुबद्ध हुई समझ लेता है, तो वह ऐसी धारणा का स्वरूप ही अनुवाद करते समय बदल डालेगा। इसके उदाहरण प्राय: हम संसार के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'श्रीमद्भगवदगीता' के अनुवादों में देख सकते हैं, जिनमें अनुवादकों ने गीता के कुछ मूल दार्शनिक सिद्धान्तों को प्राय: विशेषण प्रतिबद्धित कर दिया है।

13

पत्रकारिता के क्षेत्र में द्विभाषिया प्रविधि

पत्रकारिता में अनुवाद की समस्या से परिचय कराने की दृष्टि से प्रस्तुत लेख 'पत्रकारिता और अनुवाद' में समाचार माध्यमो के लिए लिखे जाने वाले समाचारो के अनुवाद की समस्या की चर्चा की गई है। इसके साथ ही पत्रकारिता की भाषा के अनुवाद, शैली, शीर्षक-उपशीर्षक, मुहावरे एवं लाक्षणिक पद बंधों, पारिभाषिक शब्दावली के अनुवाद की समस्या और उसके समाधान पर विस्तार से समझा गया है। साथ ही पत्रकारिता में पारिभाषिक शब्दावली के अनुवाद की समस्या और उसके समाधान एवं पारिभाषिक शब्दावाली के कुछ नमूने पर भी सविस्तार से चर्चा की गई है।

पत्रकारिता का अर्थ

अपने रोजमर्रा के जीवन की स्थिति के बारे में थोड़ा गौर कीजिए। दो लोग आस-पास रहते हैं और कभी बाजार में, कभी राह चलते और कभी एक-दूसरे के घर पर रोज मिलते हैं। आपस में जब वार्तालाप करते हैं उनका पहला सवाल क्या होता है? उनका पहला सवाल होता है क्या हालचाल है? या कैसे हैं? या क्या समाचार है? रोजमर्रा के ऐसे सहज प्रश्नो में को खासबात नहीं दिखा देती है, लेकिन इस पर थोड़ा विचार किया जाए तो पताचलता है कि इस प्रश्न में

एक इच्छा या जिज्ञासा दिखा देगी और वह है नया और ताजा समाचार जानने की। वे दोनो पिछले कुछ घंटे या कल रात से आज के बीच में आए बदलाव या हाल की जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि हम अपने मित्रों, पड़ोसियो, रिश्तेदारो और सहकर्मियो से हमेशा उनकी आस-पास की घटनाओ के बारे में जानना चाहते हैं। मनुष्य का सहज प्रवृत्ति है कि वह अपने आस-पास की चीजो, घटनाओ और लोगों के बारे में ताजा जानकारी रखना चाहता है। उसमे जिज्ञासा का भाव प्रबल होता है। यही जिज्ञासा समाचार और व्यापक अर्थ में पत्रकारिता का मूल तत्त्व है। जिज्ञासा नहीं रहेगी तो समाचार की जरूरत नहीं रहेगी। पत्रकारिता का विकास इसी जिज्ञासा को शांत करने के प्रयास के रूप में हुआ है, जो आज भी अपने मूल सिद्धांत के आधार पर काम करती आ रही है।

इस जिज्ञासा से हमे अपने पास-पड़ोस, शहर, राज्य और देश दुनियाके बारे में बहुत कुछ सूचनाएँ प्राप्त होती है। ये सूचनाएँ हमारे दैनिक जीवन के साथ साथ पूरे समाज को प्रभावित करती हैं। ये सूचनाएँ हमारा अगला कदम क्या होगा तय करने में सहायता करती है। यही कारण है कि आधुनिक समाज में सूचना और संचार माध्यमो का महत्त्व बहुत बढ़ गया है। आज देश दुनिया में क्या घटित हा ` रहा है उसकी अधिकांश जानकारियाँ हमे समाचार माध्यमो से मिलती है।

विभिन्न समाचार माध्यमों के जरिए दुनिया भर के समाचार हमारे घरों तक पहुँचते हैं चाहे वह समाचार पत्र हो या टेलीविजन और रोड़ियो या इटं रनेट या सोशल मीडिया। समाचार संगठनों में काम करनेवाले पत्रकार देश-दुनिया में घटनेवाली घटनाओ को समाचार के रूप में परिवर्तित कर हम तक पहुँचाते हैं। इसके लिए वे रोज सूचनाओं का संकलन करते हैं और उन्हे समाचार के प्रारूप में ढालकर पेश करते हैं। इस पूरी प्रक्रिया को ही 'पत्रकारिता' कहते हैं।

व्यक्ति को, समाज को, देश-दुनिया को प्रभावित करने वाली हर सूचना समाचार है। यानी कि किसी घटना की रिपोर्ट ही समाचार है या यूँ कहें किसमाचार जल्दी में लिखा गया इतिहास होता है।

पत्रकारिता शब्द अंग्रेजी के 'जर्नलिज्म' का हिन्दी रूपांतर है। शब्दार्थ की दृष्टि से 'जर्नलिज्म' शब्द 'जर्नल' से निर्मित है और इसका अर्थ है 'दैनिकी', 'दनै न्दिनी', 'रोजनामचा' अर्थात जिसमें दैनिक कार्यों का विवरण हो। आज जर्नल शब्द 'मैगजीन', 'समाचार पत्र' ', 'दैनिक अखबार' का द्योतक हो गया है। 'जर्नलिज्म' यानी पत्रकारिता का अर्थ समाचार पत्र, पत्रिका

से जुड़ा व्यवसाय, समाचार संकलन, लेखन, संपादन, प्रस्तुतीकरण, वितरण आदि होगा। आज के युग में पत्रकारिता के अभी अनेक माध्यम हो गये हैं, जैसे-अखबार, पत्रिकाएँ, रेडियो, दूरदर्शन, वेब-पत्रकारिता, सोशल मीडिया, इंटरनेट आदि।

हिन्दी में भी पत्रकारिता का अर्थ भी लगभग यही है। 'पत्र' से 'पत्रकार' और फिर 'पत्रकारिता' से इसे समझा जा सकता है। बृहत हिन्दी शब्दकोश के अनुसार 'पत्र' का अर्थ चिट्ठी, कागज, वह कागज जिस पर को बात लिखी या छपी हो, वह कागज या धातु की पट्टी जिस पर किसी व्यवहार के विषय में को प्रामाणिक लेख लिखा या खुदवाया गया हो(दानपत्र, ताम्रपत्र), किसी व्यवहार या घटना के विषय का प्रमाणरूप लेख(पट्टा, दस्तावेज), यान, वाहन, समाचार पत्र, अखबार है। 'पत्रकार' का अर्थ समाचार पत्र का संपादक या लेखक और 'पत्रकारिता' का अर्थ पत्रकार का काम या पेशा, समाचार के संपादन, समाचार इकट्ठे करने आदि का विवेचन करने वाली विद्या। बृहतशब्दकोश में साफ है कि पत्र का अर्थ वह कागज या साधन जिस पर कोबात लिखी या छपी हो जो प्रामाणिक हो, जो किसी घटना के विषय को प्रमाणरूप पेश करता है। और पत्रकार का अर्थ उस पत्र, कागज को लिखने वाला, संपादन करने वाला और पत्रकारिता का अर्थ उसका विवेचन करने वाली विद्या।

उल्लेखनीय है कि इन सभी माध्यमो से संदशेा या सूचना का प्रसार एकतरफा होता है। सूचना के प्राप्तकर्ता से इनका फीडबैक नहीं के बराबर है। यानी सभी माध्यमों में प्रचारक या प्रसारक के संदेश प्राप्तकर्ता में दाहेरा संपर्क नहीं स्थापित कर पाते हैं। प्राप्तकर्ता से मिलने वाली प्रतिक्रिया, चिट्ठियों आदि के माध्यम से संपर्क नहीं के बराबर है। पिछले कुछ सालो में जनसचार के अत्याधुनिक पद्धतियो के प्रचलन दोहोरा संपर्क राखा जाने लगा है।

पत्रकारिता की परिभाषा

किसी घटना की रिपोर्ट समाचार है, जो व्यक्ति, समाज एवं देश दुनिया को प्रभावित करती है। इसके साथ ही इसका उपरोक्त से सीधा संबंध होता है। इस कर्म से जुड़े मर्मज्ञ विभिन्न मनीषियो द्वारा पत्रकारिता को अलग-अलग शब्दों में परिभाषित किए हैं। पत्रकारिता के स्वरूप को समझनेके लिए यहाँ कुछ महत्त्वपूर्ण परिभाषाओ का उल्लेख किया जा रहा है-

पाश्चात्य चिन्तन

न्यू वेबस्टर्स डिक्शनरी रूप्रकाशन, सम्पादन, लेखन एवं प्रसारण-युक्त समाचार माध्यम का व्यवसाय ही पत्रकारिता है।

विल्वर श्रम –जनसंचार माध्यम दुनिया का नक्शा बदल सकता है।

सी.जी. मूलर –सामयिक ज्ञान का व्यवसाय ही पत्रकारिता है। इसमे तथ्यो की प्राप्ति उनकामूल्यांकन एवं ठीक-ठाक प्रस्तुतीकरण होता है।

जेम्स मैकडोनल्ड –पत्रकारिता को मैं रणभूमि से ज्यादा बड़ी चीज समझता हूँ। यह को पेशा नहीं वरन पेशे से ऊँची को चीज है। यह एक जीवन है, जिसे मैंने अपने को स्वेच्छापूर्वक समर्पित किया।

विखेम स्टीड –मैं समझता हूँ कि पत्रकारिता कला भी है, वृत्ति भी और जन सेवा भी। जब को यह नहीं समझता कि मेरा कर्त्तव्य अपने पत्र के द्वारा लोगो का ज्ञान बढ़ाना, उनका मार्गदर्शन करना है, तब तक से पत्रकारिता की चाहे जितनी ट्रेनिंग दी जाए, वह पूर्ण रूपेण पत्रकार नहीं बन सकता।

इस प्रकार न्यू वेबस्टर्स डिक्शनरी में उस माध्यम को जिसमें समाचार का प्रकाशन, संपादन एवं प्रसारण विषय से संबंधित को पत्रकारिता कहा गया है।

विल्वर श्रम का कहना है कि जनसंचार माध्यम उसे कहा जा सकता है, जो व्यक्ति से लेकर समूह तक और देश से लेकर विश्व तक को विचार, अर्थ, राजनीति और यहां तक कि संस्कृति को भी प्रभावित करने में सक्षम है। सीजी मूलर ने तथ्य एवं उसका मूल्यांकन के प्रस्तुतीकरण और सामयिक ज्ञान से जुड़े व्यापार को पत्रकारिता के दायरे में रखते हैं। जेम्स मैकडोनल्ड के विचार अनुसार पत्रकारिता दर्शन है, जिसकी क्षमता युद्ध से भी ताकवर हैं। विखेमस्टीड पत्रकारिता को कला, पेशा और जनसेवा का संगम मानते हैं।

भारतीय चिन्तन

हिन्दी शब्द सागर –पत्रकार का काम या व्यवसाय ही पत्रकारिता है।

डा. अर्जुन रूज्ञान आरै विचारो को समीक्षात्मक टिप्पणियो के साथ शब्द, ध्वनि तथा चित्रो के माध्यम से जन-जन तक पहुँचाना ही पत्रकारिता है। यह वह विद्या है, जिसमें सभी प्रकार के पत्रकारो के कार्यों, कर्त्तव्यो और लक्ष्यो का विवेचन होते है। पत्रकारिता समय के साथ-साथ समाज की दिग्दर्शिका और नियामिका है।

रामकृष्ण रघुनाथ खाडिलकर–ज्ञान और विचार शब्दो तथा चित्रो के रूप में दूसरें तक पहुँचाना ही पत्रकला है। छपने वाले लेख-समाचार तैयार करना ही पत्रकारी नहीं है। आकर्षक शीर्षक देना, पृष्ठों का आकर्षक बनाव-ठनाव, जल्दी से जल्दी समाचार देने की त्वरा, देश-विदेश के प्रमुख उद्योग-धन्धो के विज्ञापन प्राप्त करने की चतुरा, सुन्दर छपा और पाठक के हाथ में सबसे जल्दी पत्र पहुँचा देने की त्वरा, ये सब पत्रकार कला के अंतर्गत रखे गए।

डा.बद्रीनाथ –पत्रकारिता पत्र-पत्रिकाओं के लिए समाचार लेख आदि एकत्रित करने,सम्पादित करने, प्रकाशन आदेश देने का कार्य है।

डा. शंकरदयाल रूपत्रकारिता एक पेशा नहीं है, बल्कि यह तो जनता की सेवा का माध्यम है।पत्रकारो को केवल घटनाओ का विवरण ही पेश नहीं करना चाहिए, आमजनता के सामने उसका विश्लेषण भी करना चाहिए। पत्रकारों परलोकतांत्रिक परम्पराओं की रक्षा करने और शांति एवं भाचारा बनाए रखने कीभी जिम्मेदारी आती है।

इन्द्रविद्यावचस्पति–पत्रकारिता पांचवां वेद है, जिसके द्वारा हम ज्ञान-विज्ञान संबंधी बातोंको जानकर अपना बंद मस्तिष्क खोलते हैं।

हिन्दी शब्द सागर में पत्रकार के कार्य एवं उससे जुड़े व्यवसाय को पत्रकारिता कहा गया है। डा. अर्जुन के अनुसार ज्ञान और विचार कोकलात्मक ढंग से लोगो तक पहुँचाना ही पत्रकारिता है। यह समाज का मार्गदर्शन भी करता है। इससे जुड़े कार्य का तात्विक विवेचन करना ही पत्रकारिता विद्या है। रामघ्ण रघुनाथ खाडिलकर मानते हैं कि यह एक कला है, जिसके माध्यम से पत्रकार ज्ञान और विचारों को शब्द एवं चित्रों के माध्यम से आकर्षक ढंग से प्रस्तुत करता है। डा.बद्रीनाथ कपूर का कहना है कि समाचार माध्यमो के लिए किए जानेवाले कार्य समाचार संकलन, लेखन एवं संपादन, प्रकाशन कार्य ही पत्रकारिता है। डा. शंकर दयाल शर्मा मानते हैं कि यह सेवा का माध्यम है। यह एक ऐसी सेवा है, जो घटनाओ की विश्लेषण करके लोकतांत्रिक परंपराओ की रक्षा करने के साथ ही शांति एव भाइचारा कायम रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वाह करती है। इंद्र विद्या वाचस्पति का मानना है कि पत्रकारिता वेदो की तरह जो ज्ञान-विज्ञान के जरिए लोगो की मस्तिष्क को खोलने में काम करता है। इन सभी परिभाषाओं के आधार पर पत्रकारिता को निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया जा सकता है –

यह एक ऐसा कलात्मक सेवा कार्य है, जिसमें सामयिक घटनाओ को शब्द एवं चित्र के माध्यम से जन जन तक आकर्षक ढंग से पेश किया गया हो

और जो व्यक्ति से लेकर समूह तक और देश से लेकर विश्व तक के विचार, अर्थ, राजनीति और यहां तक कि संस्ति को भी प्रभावित करने में सक्षम हो। उस कला का विवेचन ही पत्रकारिता है।

पत्रकारिता के मूल्य

चूंकि यह एक ऐसा कलात्मक सेवा कार्य है, जिसमें सामयिक घटनाओ को शब्द एवं चित्र के माध्यम से पत्रकार रोज दर्ज करते चलते हैं तो इसे एक तरह से दैनिक इतिहास लेखन कहा जाएगा। यह काम ऊपरी तौर पर बहुत आसान लगता है, लेकिन यह इतना आसान होता नहीं है। अपनी पूरी स्वतंत्रता के बावजदू पत्रकारिता सामाजिक और नैतिक मूल्यों से जुड़ी रहती है। उदाहरण के लिए सांप्रदायिक दंगो का समाचार लिखते समय पत्रकार प्रयास करता है कि उसके समाचार से आग न भड़के। वह सच्चा जानते हुए भी दंगों में मारे गए या घायल लोगो के समुदाय की पहचान नहीं करता। बलात्कार के मामलो में वह महिला का नाम या चित्र नहीं प्रकाशित करता है, ताकि उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा को को धक्का न पहुँचे। पत्रकारो से अपेक्षा की जाती है कि वे पत्रकारिता की आचार संहिता का पालन करें ताकि उनके समाचारो से बवे जह और बिना ठासे सबतू के किसी की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा को नुकसान न हो और न ही समाज में अराजकता और अशांति फैले सामाजिक सरोकारों को व्यवस्था की दहलीज तक पहुँचाने और प्रशासन की जनहितकारी नीतियो तथा योजनाओं को समाज के सबसे निचले तब के तक ले जाने के दायित्व का निर्वाह ही सार्थक पत्रकारिता है।

पत्रकारिता को लोकतंत्र का चौथा स्तंभ भी कहा जाता है। इसने लोकतंत्र में यह महत्वपूर्ण स्थान अपने आप हासिल नहीं किया है, बल्कि सामाजिक जिम्मेदारियो के प्रति पत्रकारिता के दायित्वो के महत्त्व को देखते हुए समाज ने ही यह दर्जा दिया है। लोकतंत्र तभी सशक्त होगा जब पत्रकारिता सामाजिक जिम्मदेारियो के प्रति अपनी सार्थक भूमिका निर्वाह करे। पत्रकारिता का उद्देश्य ही यह होना चाहिए कि वह प्रशासन और समाज के बीच एक महत्त्वपूर्ण कड़ी की भूमिका निर्वाह करे।

समय के साथ पत्रकारिता का मूल्य बदलता गया है। इतिहास पर नजर ड़ाले तो स्वतंत्रता के पूर्व की पत्रकारिता का मुख्य उद्देश्य स्वतंत्रता प्राप्ति ही लक्ष्य था। स्वतंत्रता के लिए चले आंदोलन और स्वतंत्रता संग्राम में पत्रकारिता

ने अहम और सार्थक भूमिका निभाई है। उस दौर में पत्रकारिता ने परे देश को एकता के सूत्र में बांधने के साथ साथ पूरे समाज को स्वाधीनता की प्राप्ति केलक्ष्य से जोड़े रखा।

आजादी के बाद निश्चित रूप से इसमें बदलाव आना ही था। आज इंटरनेट और सूचना अधिकार ने पत्रकाकारिता को बहु आयामी और अनंत बना दिया है। आज को भी जानकारी पलक झपकते उपलब्ध करा जा सकती है। पत्रकारिता वर्तमान समय में पहले से क गुना सशक्त, स्वतंत्र और प्रभावकारी हो गया है। अभिव्यक्ति की आजादी और पत्रकारिता की पहुँच का उपयोग सामाजिक सरोकारों और समाज की भला के लिए हो रहा है, लेकिन कभी कभार इसका दुरुपयोग भी होने लगा है।

आर्थिक उदारीकरण का प्रभाव भी पत्रकारिता पर खूब पड़ा है। विज्ञापनो से होने वाली अथाह कमा ने पत्रकारिता को एक व्यवसाय बना दिया है। और इसी व्यवसायिक दृष्टिकोण का नतीजा यह हो चला है कि उसका ध्यान सामाजिक जिम्मेदारियों से कहीं भटक गया है। आज पत्रकारिता मुद्दा के बदले सूचनाधर्मी होता चला गया है। इंटरनेट एवं सोशल मीडिया की व्यापकता के चलते उस तक सार्वजनिक पहुँच के कारण उसका दुष्प्रयोग भी होने लगा है। इसके कुछ उपयोगकर्ता निजी भड़ास निकालने और आपत्तिजनक प्रलाप करने के लिए इस माध्यम का गलत इस्तेमाल करने लगे हैं। यही कारण है कि इस पर अंकुश लगाने की बहस छिड़ जाती है। लोकतंत्र के हित में यही है कि जहां तक हो सके पत्रकारिता को स्वतंत्र और निर्बाध रहने दिया जाए। पत्रकारिता का हित में यही है कि वह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग समाज और सामाजिक जिम्मेदारी निर्वाह के लिए मानदारी से निर्वहन करती रहे।

पत्रकारिता और पत्रकार

अब तक हमने जान लिया है कि पत्रकारिता एक ऐसी कला है, जिसे शब्द और चित्र के माध्यम से पेश किया जाता है। इसे आकार देने वाला पत्रकार होता है। ऊपर से देखने से यह एक आसान काम लगता है, लेकिन यह उतना आसान नहीं होता है। उस पर क तरह के दबाव हो सकते हैं। अपनी पूरी स्वतंत्रता के बावजूद उस पर सामाजिक और नैतिक मूल्यो की जवाब देही होती है।

लोकतंत्र में पत्रकारिता को चौथा स्तंभ माना गया है। इस हिसाब स `न्यायपालिका, कार्यपालिका, विधायिका जैसे तीन स्तंभ को बांधे रखने के लिए

पत्रकारिता एक कड़ी के रूप में काम करती है। इस कारण पत्रकार की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। उसके सामने क चुनौतियाँ होती है और दबाव भी। सामाजिक सरोकारो को व्यवस्था की दहलीज तक पहुँचाने और प्रशासन की जनहितकारी नीतियो तथा योजनाओं को समाज के सबसे निचल` तबके तक ले जाने के दायित्व का निर्वहन करना पत्रकार और पत्रकारिता का कार्य है।

एक समय था भारत में कुछ लोग प्रतिष्ठित संस्था एवं व्यवस्था को समाज के विकास में सहायक नहीं समझते थे यह लोग अपने नए विचारो के प्रचार प्रसार के लिए पत्र-पत्रिकाओ का प्रकाशन करते थे यह उनकी प्रति एव प्रवृत्ति को लोगो तक पहुँचाने का माध्यम बना था। तकनीकी विकास एवं उद्योग एवं वाणिज्य के प्रसार के कारण एक दिन यह एक कमाऊ व्यवसाय में परिवर्तित हो जाएगा की बात उन्होने सपनों में भी नहीं सोचा था। समाज के कल्याण, नए विचार के प्रचार प्रसार के लिए पत्रकारिता को समर्पित माना जाता था। यह एक दिन पेशा में बदला जाएगा और इसके लिए डिग्री, डिप्लोमा के पैमाने पर योग्यता एवं दक्षता मापा जाएगा यह को सोचा भी नहीं होगा।

लोकतंत्र व्यवस्था में पत्रकारिता भाव की अभिव्यक्ति के लिए आवश्यक माध्यम के रूप में स्वीत है। इसलिए पत्रकारिता या मीडिया को राष्ट्र का चौथा स्तंभ कहा जा रहा है, लेकिन खुली हवा के अभाव में इसका विकास भी अवरूद्ध हो सकता है।

आजादी के बाद लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में भारत आगे बढ़ने के कारण समाचार पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन, प्रसारण में वृद्धि हुई है। इसका सामाजिक सरोकार होने के बावजदू यह एक उद्योग के रूप में परिवर्तित हो चुकी है। पत्रकारिता ने एक विकसित पेशा के रूप में शिक्षित युवाओं को आकर्षित किया है। देष में जिन कुछ क्षेत्रो में प्रवृत्ति एव वृत्ति यानी पेशा में मिलान एवं जुड़ाव की आवश्यकता है उनमें से पत्रकारिता अन्यतम है।

पत्रकारिता के लिए किताबी ज्ञान की तुलना में कुशल साधना की जरूरत अधिक होती है, क्योंकि यह एक कला है। साधना के बल पर ही कुशलता हासिल किया जा सकता है। किताब पढ़कर डिग्री तो हासिल की जा सकती है, लेकिन कुशलता के लिए अनुभव की जरूरत होती है। इसके बावजूद चूंकि यह अब पेशे में बदल चुकी है इसलिए योग्यता का पैमाना विचारणीय है। उस प्राथमिक योग्यता एवं सामान्य ज्ञान के लिए इस विषय मे कुछ सामान्य नीति नियम जानना और समझना अत्यंत जरूरी है।

एक बात और अतीत में जितने भी पत्रकारो ने श्रेष्ठ पत्रकार के रूप मेख्याति प्राप्त की है उन्होंने किसी विश्वविद्यालय से पत्रकारिता विषय में कोडिग्री या डिप्लोमा हासिल नहीं किया है। उन्होने प्रवृत्ति के आधार पर साधनाके बल पर पत्रकारिता के क्षेत्र में शीर्ष में पहुचे हैं। कक्षाओं में कुछ व्याख्यान सुननकर या पाठ्यपुस्तक पढ़ने से पत्रकार के रूप में जीवन आरंभ करने के लिए यह सहायक हो सकता है। इसे एक पेशा के रूप में अपनाने में क्या सुविधा, असुविधा है उस पर उन्हे मार्गदर्शन मिल सकता है। पत्रकारिता कोनए पेशा के रूप में अपनाने वाले युवाओ को पत्रकार की जिम्मदेारी एव समस्या पर जानकारी हासिल हो सकती है।

पत्रकारिता और अनुवाद

यों तो पत्रकार को एकाधिक भाषाओं का ज्ञान होना अपेक्षित होता है, किन्तु भारत के सन्दर्भ में क्षेत्रीय भाषाओं की पत्रकारिता में अनुवाद का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। अत: हिंदी अथवा अन्य किसी भारतीय भाषा के समाचारपत्र की भाषा के ज्ञान के अतिरिक्त अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान होना बहुत जरूरी है। इसका कारण है कि अभी तक भाषाई पत्र प्रेस ट्रस्ट ऑफइंडिया(पीटीआई), यूनाईटेड न्यूज ऑफ इंडिया(यूएनआई) जैसी समाचाएएजेसियों पर निर्भर हैं। रयटूर आदि विदेशी समाचार एजेसियों भी अंग्रेज के माध्यम से ही समाचार देती हैं। इसके अतिरिक्त भाषाई पत्रिकाओ को भी बहुत सी रचनाएँ, बहुत से लेख और फीचर अंग्रेजी में ही प्राप्त हाते हैं। अत: हिंदी भाषाई पत्रकार वास्तव में एक अनुवादक के रूप में ही प्राय: कार्य करता है।

अनुवाद की यह प्रक्रिया एक तरफा नहीं है। हिंदी इलाकों की बहुत सी ऐसी खबरें होती है, जिनका हिंदी से अंग्रेजी में प्रतिदिन अनुवाद किया जाता है। अगर हिंदी एजेंसियाँ अंग्रेजी अनुवाद करती हैं तो अंग्रेजी एजेंसियां भी हिंदी इलाकों की खबरों का हिंदी से अंग्रेजी में अनुवाद करती हैं। हिंदी एजेसियों को अनुवाद करना इसलिए मजबूरी है कि हिंदी एजेसियों के संवाददाता गैर हिंदी इलाको में नहीं हैं और विदेशों में भी नहीं हैं। किसी इलाके की खबरें सिफ इसलिए हम देने से मना नहीं कर सकते कि वहां हमारा अपना यानि हिंदी का संवाददाता नहीं है। इसलिए उन इलाकों से अंग्रेजी में आने वाली खबरों का हिंदी में अनुवाद करना पड़ता है।

पत्रकारिता में अनुवाद की समस्याएँ

पत्रकारिता के क्षेत्र में अनुवाद प्रत्येक समय आवश्यकता होती है, किंतु यह विडंबना ही है कि हमारे हिंदी अनुवादकों के पास अनुवाद के लिए अधिक समय नहीं होता है। उन्हें तो दी गई सामग्री का तुरंत अनुवाद और प्रकाशन करना होता है। यह भी चिंतनीय है कि यह समाचार किसी भी विषय से संबद्ध हो सकता है। यह आवश्यक नहीं कि अनुवादक को उस विषय की पूर्ण जानकारी ही हो। इसी प्रकार यह भी संभव है कि कभी कभी कथ्य का संपूर्णतया अंतर न हो सके, क्योंकि प्रत्येक भाषा का पाठक वर्ग तथा सामाजिक, सांस्कृतिक संदर्भ अलग ही होते हैं। इस प्रकार अनुवादकों के सामने कई समस्या सफल पत्रकारिता के लिए बाधाएँ बनती हैं, जिसमें प्रमुख हैं।

भाषा की समस्या

पत्रकारिता के क्षेत्र में अनुवाद करते समय सबसे पहले भाषा संरचना की समस्या देखने को मिलते हैं। भाषा के संदर्भ में दो-तीन प्रश्न हमारे सामने उठते हैं- एक पत्रकारिता की भाषा स्वरूप क्या है? क्या पत्रकारिता की भाषा स्वरूप विशिष्ट है? हाँ, अवश्य पर विज्ञान और आयुर्विज्ञान की भाषा के समानन तकनीकी है और न तो अधिक साहित्यिक ही है और न ही सामान्य बोलचाल की भाषा। इसे हम किसी सीमा तक लिखित और औपचारिक भाषा के समकक्ष तथा निश्चित प्रयोजनमूलक स्तर पर से संबद्ध भाषा मान सकते हैं। हम इसे संपादित शैली में प्रस्तुत भाषा मान सकते हैं, जहां प्रत्येक विषय सुविचरित है, प्रत्येक विषय के लिए निश्चित स्थान, स्तंभ और पृष्ठ हैं। कभी-कभी स्थिति विशेष में पारिभाषिक शब्दों का प्रयागे करना पड़ता है। प्राय: पत्रकी भाषा में लोक व्यवहार में प्रयुक्त होने वाली शब्दावाली का प्रायुर्य रहता है। पत्रकारिता की भाषा में सर्वजन सुबोधता तथा प्रयोगधर्मिता का गुण होना आवश्यक है।

प्रत्येक भाषा की निजी संरचना होती है। अनुवादक को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। स उसे हिंदी की प्रकृति के अनुकूल और उपर्युक्त पत्रकारिता की भाषा की विशेषताओं को ध्यान में रखकर अनुवाद करने की चेष्टा करनी चाहिए। जिससे सहजता और स्वाभाविकता बनी रहे। हिंदी में अनुवाद करते समय अंग्रेजी वाक्य रचना का अनुसरण करने की अपेक्षा वाक्य को जटिल तथा अस्पष्ट

न बनाकर, उसे दो-तीन छोटे वाक्यों में ताडे ना अच्छा रहता है। उदाहरण के लिए-In the pre independence era, Indian newspaperscovered only politics, for the majority of them at that timewere fighting for countrys freedom-''स्वातंर्त्य-पूर्व युग में, भारतीय समाचार पत्र राजनीतिक चर्चा तक सीमित थे। उनमें से अधिकांश, उस समय देश की स्वतंत्रता के लिए जूझ रहे थे। "उपर्युक्त उदाहरण में एक दीर्घ वाक्य को दो वाक्यों में तोडने से कथनमें सौंदर्य और आक्रामकता का समावेश हुआ है।

मुहावरो, शैली, लाक्षणिक पदबंधों की समस्या

प्राय: अनुवादक अंग्रेजी मुहावरो, शैली, लाक्षणिक पदबंधों आदि के समानांतर हिंदी में मुहावरें आदि नहीं ढूँढते। शाब्दिक भ्रष्ट अनुवाद करने के कारण एक अस्वाभाविकता का भाव बना रहता है। उदाहरण के लिए-Put him behind the bars & mls tsy ds lh,kapksa ds ihNs Hkstfn;k tk,AWe were stunned with astonishment- हम आश्चर्य से स्तब्ध हूँ। उपर्युक्त उदाहरणों में हिंदी की स्वाभाविक प्रवृत्ति का हनन करते हुए अंग्रेजी का शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। इससे एक फालतूपन का आभास होता है।

पत्रकारिता में साधारण ज्ञान, तुरंत निर्णय की समस्या

उप संपादको आदि को रात-भर बैठकर प्राप्त होने वाले समाचारों कोसाथ-साथ हिंदी में अनूदित करके देना होता है। समय के एक-एक मिनटका इतना हिसाब होता है कि अंग्रेजी में प्राप्त सामग्री में कोई शब्द/अभिव्यक्त समझ न आने पर शब्दकोश/ज्ञानकोश आदि देखने या सोचने का वक्त भी प्राय: नहीं होता। किंतु पत्रकार बहुत कुशल अनुवादक होते हैं एकदम नए शब्द का भाव समझकर ही वे काफी अच्छे हिंदी समानक दे देते हैं और वही हिंदी समानक या प्रतिशब्द जनता में, पाठकों में चल भी पड़ते हैं। लेकिन कभी-कभी पत्रकार की असावधानी या उसके अज्ञान से अनुवाद में भयकंर भूलें हो जाती है, जैसे-एक बार एक उपसंपादक ने(salt) का अनुवाद 'नमक समझौता' कर दिया, जबकि वहां 'साल्ट' का अर्थ 'नमक' नहीं, बल्कि StrategicArms Limitation Treaty FkkA bl izdkj ds vU; mnkgj.kns[kk tk ldrk gS&Legend of Glory& xkSjo xkFkk] Limitless& lhekghu]

LovelyBaby& lyksuk f'k'kq] The Knight of Kabul- काबु का वीर अत: पत्रकार अनुवादक को साधारण ज्ञान तथा विषय को समझने की क्षमता होना परमावश्यक है।

शब्द-प्रति-शब्द अनुवाद की समस्या

समाचार पत्रों के अनुवाद में स्वाभाविकता और बोधगम्यता होना बहुत आवश्यक है। यहां अनुवादक के तकनीकी रूप से सही होने से भी काम नहीं चलता-उसका सरल और जानदार होना भी जरूरी है। इस संदर्भ में नवभारतटाइम्स मुंबई के मुख्य संवाददाता श्रीलाल मिश्र का कहना है- प्राय: यह देखा गया है कि कुछ उप संपादक अनुवाद का ढांचा तैयार करते हैं। शब्दकोश से शब्दों का अर्थ देख लेते हैं। येन केन प्रकारेण व एक वाक्य तैयार कर देते हैं। तकनीकी दृष्टि से उनका अनुवाद प्राय: सही भी रहता है। उसे सही अनुवाद की संज्ञा दी जा सकती है, लेकिन उनमें जान नहीं रहती है। वाक्य सही भी होता है, लेकिन उसका कुछ अर्थ नहीं निकलता है। हिंदी पत्रकारों द्वारा हुए निम्नलिखित गलत अनुवादों के असर का अनुमान लगातार समझा जा सकता है-Twentieth Century Fo- बीसवीं शताब्दी की लोमडीएक विदेशी फिल्म कंपनी का नामज्वचसमे क्तमे-शिखरहीन पोशाक(नग्न वक्ष)Call Money- मंगनी का रुपया(शीघ्रावधि राशि)Informal visit- गैर रस्मी मुलाकात(अनौपचारिक भेटं)Railway Gard& jsyos ds igjsnkjFlowery Language- मुस्कुराती हुई भाषा(सजीली भाषा/औपचारिक भाषा)यहां एक बात और उल्लेखनीय है कि जहां तक हो सके अप्रचलित शब्दों के व्यवहार से बचना चाहिए जैसे इंस के लिए 'विद्रधि' के स्थान पर 'फोड़ा' ही ठीक है, appendi को 'उडुक पुछ' करने के बदल अप्रचलित शब्द लाने की अपेक्षा इन्हें हिंदी में ध्वनि अनुकूल द्वारा भी राखा जा सकता है।

शैली की समस्या

समाचार पत्रों में विषय के अनुसार समाचारों की पृथक-पृथक शैलियां होना स्वाभाविक है जैसे कि अंग्रेजी पत्रो में होता ही है, किंतु भारतीय भाषाओं के पत्रों का पाठक विषय के अनुसार भाषा की गूढता को प्राय: अस्वीकार करके सरल भाषा को ही स्वीकार करता है। अत: पत्रकारों को गढू -से- गढू विषय के समाचार फीचर आदि भी सरलतम भाषा में अनूदित करने पड़ते हैं। यह कुछ

वैसा ही हो जाता है जैसे किसी 8-10 साल के बच्चे को उसकीभाषा में न्यूक्लीयर विखंडन की पूर्ण प्रक्रिया समझाना पड़े। अत: सरल शैली की समस्या भी अनुवाद की एक प्रमुख समस्या बन जाती है।

शीर्षक-उपशीर्षकों आदि की समस्या

शीर्षकों के अनुवाद में कई तरह की बाधाएँ हैं, जैसे शीर्षक में उसके लिए पृष्ठ पर रखी गई जगह के अनुसार शब्दों की संख्या का चयन करना पड़ता है। शीर्षक का रोचक/आकर्षक होना तथा विषय की प्रतीति करानेवाला होना आवश्यक है। अतएव शीर्षकों के मामले में शब्दानुवाद याभावानुवाद से भी काम नहीं चलता, बल्कि उनका छायानुवाद का या पुन:सृजन ही करना पड़ता है।

पत्रकारिता में पारिभाषिक शब्दावली

अपने दिन प्रतिदिन के व्यवहार में हम भाषा और उसकी शब्दावली का ही प्रयोग करते हैं। अपने सामान्य जीवन को चलाने के लिए हम जिन शब्दों का प्रयोग करते हैं उनमें प्राय: भाषा के सारे स्वर, व्यंजन तथा संज्ञा आदि शब्द आ जाते हैं। यह भाषा का सामान्य रूप है, किंतु भाषा के कुछ ऐसे शब्द भी हैं, जो इन सामान्य शब्दों से भिन्न होते हैं। ऐसे शब्दों को मोटे रूम से दो वर्गों में रखा जाता है- 1.पारिभाषिक 2.अर्द्ध पारिभाषिक। बृहत् हिंदी शब्दकोश में पारिभाषिक शब्दावली की परिभाषा इस प्रकार की गई है-जिसका प्रयोग किसी विशिष्ट अर्थ में किया जाए, जो कोई विशिष्ट अर्थ सूचित करे, उसे पारिभाषिक कहते हैं तथा विशिष्ट अर्थ में प्रयुक्त होने वाले शब्दों की सूची को 'पारिभाषिक शब्दावली' कहते हैं। इस तरह पारिभाषिक शब्द वह शब्द है, जो किसी विशेष ज्ञान के क्षेत्र में एक निश्चित अर्थ में प्रयुक्त होता है। चूंकि हमारी पारिभाषिक शब्दावली बहुत कुछ अंग्रेजी पर आधारित है अत: अंग्रेजी की शब्दसंपदा पर कुछ विचार करना चाहिए। पिछले सौ-डेढ सौ वर्षों में अंग्रेजी के शब्द भंडार में लगभग 90-95 प्रतिशत अंश तकनीकी एवं वैज्ञानिक शब्दों का ही रहा है। प्रत्येक वर्ष अंग्रेजी के 10-15 हजार शब्द प्रचलन से बाहर हो जाते हैं और 20-25 हजार नए शब्द जुड़ जाते हैं। यह जोड़-घटाव भी मुख्यत: पारिभाषिक शब्दों का होता है। और इन सभी अंग्रेजी शब्दों के लिए हिंदी में सम शब्दों का निर्धारण नहीं हुआ है।

जहां तक पत्रकारिता की बात है पत्रकारिता का कार्य है। इसके जरिए लोगों को समसामयिक घटना एवं विचार आदि के बारे में लोगों को सूचित करना है। इसके अलावा विभिन्न विषय पर शिक्षा देना, लोगों का मनारेंजन करना, लोकतंत्र की रक्षा करना और जनमत है। ऐसे में इन विषयों की अभिव्यक्ति के लिए पारिभाषिक शब्द बड़े ही महत्त्वपूर्ण होते हैं। दूसरी बात यह है कि समाचार पत्र पढ़ते समय या टेलीविजन देखते समय या रेडियो सुनते समय कोई शब्दकोश लेकर नहीं बैठता है। पाठकदर्शक/श्रोता सुबह कीचाय के साथ, सफर के दौरान या कहीं समय व्यतीत कर रहा हो देश दुनिया की खबरों को समझना एवं जानना चाहता है। तीसरी बात यह है कि समाचारपत्र पत्रिकाओं तथा टीवी के पाठकद्धर्शक बच्चे से लेकर बुढ़े तथा साक्षर सेलेकर बुद्धीजीवी तक के लिए होता है। ऐसे में पाठक वर्ग को समझ में आएउस तरह की भाषा, शब्दों का उपयोग करना पड़ता है। यदि अर्थ निश्चित नहीं होगा तो उसका प्रयोक्ता उसे एक अर्थ में प्रयुक्त करेगा और श्रोता या पाठक उसे दूसरे अर्थ में लेगा।

पारिभाशिक शब्दावली की समस्या

पत्रकारिता का कार्य रोजाना देश, दुनिया में घटित घटनाओं, आंदोलन,घोटाला, आविष्कार, विभिन्न समस्या अपने कलेवर में लिए हुए रहते हैं तो यहनिश्चित है कि इसमें सभी प्रकार की चीजें आ जाती है। इसके साथ ही कुछऐसे शब्द आ जाते हैं, जो अपनी विशिष्टता लिए हुए रहते हैं। इसमें कोईआंचलिक शब्द हो सकता है, कोई ज्ञान विज्ञान के शब्द हो सकता है,कार्यालयीन शब्द हो सकता है, इतिहास से संबंधित हो सकता है। इन शब्दोंको पाठकों के सामने रखना पत्रकार के लिए चुनौती होती है। ऐसे शब्दों का हिंदी में अनुवाद करके रखा जाए या उसे ऐसे ही लिप्यंतरण कर दिया जाए, उसके लिए कोई नया शब्द गढ़ लिया जाए। पत्रकार को यह भी ध्यानरखना होता है कि ऐसे शब्द के मायने क्या हैं, क्योंकि यह सीधे समाज केलोगों तक पहुँचता है। दूसरी बात यह होता है कि पत्रकार को समाचार लिखते समय इतना समय नहीं होता है कि वह इसबारे में शब्दकोश का सहारा ले या विभिन्न विशेषज्ञों से पूछताछ करके कोई ठोस निर्णय लिया जाए।

निर्माण के सिद्धांत

भारत में पारिभाषिक शब्दावली पर सर्वप्रथम डा. रघुवीर ने ही व्यवस्थित,पूर्ण वैज्ञानिक एवं विशद रूप से विचार एवं कार्य किया। डा. रघुवीर का कहना है

कि पारिभाषिक शब्दों का नियम है कि जितने शब्द, अंग्रेजी में हो उतने ही हिंदी में भी होने चाहिए, उससे कम में काम नहीं चलेगा। इस विचार से असहमत होने की कोई गुंजाइश नहीं है। विज्ञान आदि अनेक विषयों में यूरोप, अमेरिका, चीन, जापान का अनुसरण करने की मजबूरी और पुरानी अंग्रेजी दासता के परिप्रेक्ष्य में कम से कम अंग्रेजी भाषा के प्रत्येक पारिभाषिक शब्द का समानक तो हिंदी को लाना ही पड़ेगा। यहां तक तो ठीक है, किंतु इसके आगे प्रश्न उठता है कि इन शब्दों को कहां से लाए जाए और उनका स्रोत तथा स्वरूप कैसा हो? इस प्रश्न पर पिछले कई दशकों में विद्वानों का मतैक्य नहीं रहा। पारिभाषिक शब्दों के स्वरूप, स्रोत और निर्माण संबंधी विचारधाराओं में निम्नलिखित प्रमुख रही–

1. पुनरुद्धारवादी/शुद्धतावादी विचारधारा – कुछ विद्वान ऐसे हैं, जो भारतीय भाषाओं की सारी की सारी पारिभाषिक शब्दावली संस्कृत से लेने के पक्ष में हैं। वे यथासंभव अधिक से अधिक शब्दों को प्राचीन संस्कृत वाडमय से लेना चाहते हैं। इस संदर्भ में डा. रघुवीर कामानना है कि जो पारदिर्शता हिंदी के शब्दों में है वह संसार की किसी औरभाषा में नहीं है तथा संस्कृत में उपलब्ध 20 उपसर्गों, 500 धातुओं और 80 प्रत्ययों की सहायता से लाखों करोड़ों शब्द बनाए जा सकते हैं। उनके अनुसार भारतीय भाषाओं का आधार भाषा संस्कृत है। यदि हम चाहते हैं किस भी भाषाओं के पारिभाषिक शब्द एक जैसे हों तो वह संस्कृत से ही हो सकते हैं। इसके विरुद्ध यह बात सामने आ सकती है कि यह अतिवादी हैं। विदेशी या अन्य भाषा के शब्दों को आज पूर्णतया बहिष्कृत करना संभव नहीं है। कुछ शब्द तो ऐसे हैं, जिनका संस्कृत या हिंदी में कुछ पर्याय नहीं है। जैसे स्टेशन। इन विद्वानों द्वारा जो पारिभाषिक शब्दावली तैयार की गई है कठिन है। जैसे– रेल–संयान, टिकट–संयान पत्र, रिक्शा–नरयान, मिल–निर्माणी आदि। ऐसे अनुवाद हास्यास्पद हो गई है। कहीं कहीं पर इसका जड़ अनुवाद हो गया है जैसे–पीएचडी के लिए महाविज्ञ और रीडर के लिए प्रवाचक आदि।

2. शब्दग्रहणवादी विचारधारा – इस सिद्धातं को अपनाने वालों को स्वीकारवादी, अंतर्राष्टदृीयवादी या आदानवादी कहते हैं। अधिकांश अंग्रेजी परंपरा के लोग इसी पक्ष में हैं। इनका मानना है कि चूंकि अंग्रेजी और अंतर्राष्ट्रीय शब्दावली का प्रचार विश्व में सर्वाधिक है अत: उससे परिचित होने पर हमारे विज्ञान या शास्त्रवेत्ताओं को विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित साहित्य को समझने में आसानी होगी। दूसरी बात, इसे अपनाने से नई पारिभाषिक शब्दावली बनाने और उसके मानक रूप की समस्या समाप्त हो जाती है। तीसरी बात, नए शब्द

विभिन्न विज्ञानों में हमेशा आते रहेगें तो फिर कब तक देशी स्रोतों को खोजते रहेगें। इसके विरुद्ध यह बात कही जा सकती है कि यह शब्दावली सर्वत्र नहीं अपनाई गई है। दूसरा, अंग्रेजी के सारे पारिभाषिक शब्द हिंदी नहीं पचा पाती है। वस्तुत: कोई भी भाषा किसी दूसरी भाषा के सारे के सारे शब्द पचा नहीं सकती। तीसरा, गृहित शब्द अर्द्धमृत होते हैं, क्योंकि उनमें जनन शक्ति या तो बहुत कमहोती है, या बिल्कुल नहीं होती। इसको मानने वाले अंग्रेजी शब्दों को ज्यों कात्यों लेना चाहते हैं जैसे-एकेडमी, इंटेरिम, टैकनीक, कमेडी आदि। कुछ लोगध्वनि व्यवस्था के अनुरूप अनुवाद करना चाहते हैं जैसे-अकादमी, अंतरिम,तकनीक, कामदी आदि।

3. प्रयोगवादी विचारधारा - तीसरा सिद्धांत को मानने वाले हैं प्रयोगवादी या हिन्दुस्तानी। इसका मानने वाले हिंदी-उर्दू के समन्वय तथा सरल शब्दावली के नाम पर बोलचालके शब्दों, संस्कृत शब्दों तथा अरबी-फारसी शब्दों की खिचडी से ऐसे शब्दबनाए हैं, जो बड़े हास्यास्पद हैं।

4. लोकवादी विचारधारा - इस तरह के मानने वाले या तो जनता से शब्द ग्रहण किए हैं या जनप्रचलित शब्दों के योग से शब्द बनाने के पक्षधर हैं। जैसे Defector-दलबदलू, आयाराम गयाराम, Maternity Home-जच्चा बच्चा घर, Power House- बिजली घर आदि। इस प्रकार के अनुवाद हिंदी के प्रकृतिके अनुरूप तो है, लेकिन हिंदी के लिए सभी प्रकार के पारिभाषिक शब्द नहींजुटाए जा सकते हैं। तो इससे भी पूरी तरह काम नहीं चल सकता है।

5. मध्यमार्गी विचारधारा - इस सिद्धांत को अपनाने वालों को समन्वयवादी भी कहा जा सकता है। जो भी इस विषय पर गंभीतरता से विचार करेगा वह इसका समर्थन करेगा। इस विचार का अनुसरण खासकर सरकारी शब्द निर्माण संस्थानो में किया गया। इसके तहत अंराष्ट्रीय, अंग्रेजी, संस्कृत, प्राप्त, आधुनिक भाषाओं के प्राचीन, मध्यकालीन साहित्य, सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं तथा बोलियो के समन्वय से नए शब्द निर्माण किया जा सकता है। इनका मानन है कि-यथा संभव अंतर्राष्ट्रीय शब्दावली को लिया जाए। जो अपने मूल रूप में चल रहे हैं। उन्हें वैसा ही लें या जिसमें ध्वनि परिवर्तन की आवश्यकता है उसे बदलें दूसरा, अंग्रेजी के लंबे समय तक संपर्क में रहने के कारण हमारे काफी निकट है। जो अंग्रेजी शब्द हमारी भाषा में प्रचलित हैं उन्हें चलने दिया जाए। तीसरा, प्राचीन तथा मध्यकालीन साहित्य से भी चलने वाले तथा सभी दृष्टियों से सटीक शब्दों को लिया जा सकता है। चौथा, शब्दावली में अखिल

भारतीय ताका गुण लाने के लिए यह उचित होगा कि विभिन्न भारतीय भाषाओं तथाबोलियों में पाए जानेवाले उपयुक्त शब्दों को भी यथासभंव ग्रहण कर लिया जाए। पांचवां, शेष आवश्यक शब्दावली के लिए हमारे पास नए शब्द बनाते समय साधारणत: हमें इस बात का ध्यान नहीं रखना चाहिए कि शब्द की व्युत्पत्ति मूलत: क्या है, बल्कि हमें उसके वर्तमान प्रयोग और अर्थ देखना चाहिए। उस स्थिति में हमारे लिए मूल शब्दार्थ की अपेक्षा, वर्तमान शब्दार्थ ही अधिक महत्त्वपूर्ण होता है। भारत सरकार के वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग एवं केंद्रीय हिंदी निदेशालय ने भी अपनी शब्दावलियो के निर्माण में उपर्युक्त विचारधारा को अपनया है।

❐❐❐